

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

(महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय जबलपुर
की विद्या-वारिधि (पीएच.डी.) की उपाधि के लिए
प्रस्तुत शोध-प्रबंध)

निर्देशक

डॉ. गणेश खरे
संवानिवृत्त प्राचार्य शासकीय
महाविद्यालय, राजनांदगांव
(छ.ग.)

एवं

डॉ. श्रीमती कंचन सक्सेना
व्याख्याता संस्कृत एवं प्रभारी
महर्षि महेश योगी वैदिक
विश्वविद्यालय-परिसर,
दुर्ग (छ.ग.)

प्रस्तुतकर्ती

श्रीमती अर्चना चावरे
केन्द्र : महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय-परिसर,
दुर्ग (छ.ग.)

2003



“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

(महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय जबलपुर
की विद्या-वारिधि (पीएच.डी.) की उपाधि के लिए
प्रस्तुत शोध-प्रबंध)

निर्देशक

डॉ. गणेश खरे
सेवानिवृत्त प्राचार्य शासकीय
महाविद्यालय, राजनांदगांव
(छ.ग.)

एवं

डॉ. श्रीमती कंचन सक्सेना
व्याख्याता संस्कृत एवं प्रभारी
महर्षि महेश योगी वैदिक
विश्वविद्यालय-परिसर,
दुर्ग (छ.ग.)

प्रस्तुतकर्ती

श्रीमती अर्चना चावरे
केन्द्र : महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय-परिसर,
दुर्ग (छ.ग.)

2003

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

शोध-छात्रा की घोषणा

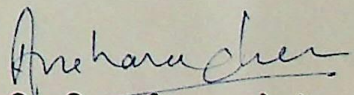
मैं यह घोषित करती हूँ कि “ बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ” शीर्षक मेरा यह शोध-प्रबंध मेरे स्वतः के अनुशीलन का परिणाम है इसे डॉ. गणेश खरे एवं डॉ. कंचन सक्सेना के संयुक्त मार्ग-निर्देशन में तैयार किया गया है ।

मैं महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय की विद्या-वारिधि (पीएच.डी.) उपाधि के नियमों के अनुसार नियत दिनों तक मार्ग-निर्देशकों के समक्ष एवं शोध-परिसर में उपस्थित रही हूँ ।

मैं अपनी सर्वोत्तम जानकारी एवं विश्वासपूर्वक यह भी प्रमाणित करती हूँ कि इस शोध-प्रबंध में ऐसा कोई भी अंश बिना समुचित उद्धरण के सम्मिलित नहीं है जो किसी अन्य शोध-प्रबंध का अंग हो एवं जिसे इस विश्वविद्यालय अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय की विद्यावारिधि या किसी अन्य उपाधि के लिए प्रस्तुत किया गया हो ।

दिनांक 09/06/2003

शोध छात्रा के हस्ताक्षर


(श्रीमती अर्चना चावरे)

आचार्य कि आचार-वर्णन

आचार्य - अर्थात् एक व्यक्ति जो आचार्य-वर्णन " की है जिसमें वर्णित है कि
हो आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
। कि आचार्य

कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
। कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन

कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
कि आचार्य कि आचार्य-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन कि आचार्य कि आचार-वर्णन
। कि आचार्य

आचार्य कि आचार-वर्णन

आचार्य कि आचार-वर्णन

(कि आचार्य कि आचार-वर्णन)

३ ६

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

शोध-निर्देशक का प्रमाण-पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती अर्चना चावरे द्वारा प्रस्तुत “ बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ” शीर्षक शोध-प्रबंध मेरे मार्ग-निर्देशन में तैयार किया गया है। यह वस्तुतः शोध-कार्य का एक अंग है और इसे महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय जबलपुर की विद्या-वारिधि (पीएच.डी.) उपाधि की परीक्षा हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है।

सर्वोत्तम जानकारी एवं विश्वासपूर्वक यह भी प्रमाणित किया जाता है कि

1. शोध-छात्रा ने विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित अवधि तक उपस्थित होकर यह कार्य सम्पन्न किया है।
2. प्रस्तुत शोध-कार्य शोध-छात्रा द्वारा स्वयं सम्पन्न किया गया है।
3. यह कार्य विश्वविद्यालय के विद्या-वारिधि संबंधी अध्यादेश के समस्त नियमों की पूर्ति करता है एवं
4. वस्तुपरकता तथा प्रयुक्त भाषा के स्तरों पर यह प्रबंध निर्दिष्ट स्तरीय मापदण्डों के भी अनुरूप है।

दिनांक 09/06/2003

निर्देशक

(डॉ. कंचन *K. Saxena* सक्सेना)

प्रभारी
महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय
परिसर, दुर्ग (छ.ग.)

(डॉ. गणेश *गणेश खरे* खरे)

पूर्व प्राचार्य शासकीय महाविद्यालय
गायत्री नगर, कमला कालेज मार्ग
राजनांदगांव (छत्तीसगढ़)

११-संस्कृत का इतिहास-पुस्तक

संस्कृत का इतिहास एक लम्बी यात्रा है। यह एक ऐसी भाषा है जो हजारों वर्षों से हमारे जीवन का हिस्सा रही है। इस भाषा में हमारे जीवन के सभी पहलुओं का प्रतिबिम्ब मिलता है। संस्कृत केवल एक भाषा नहीं है, बल्कि एक साहित्य और एक विचार है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जड़ों से जोड़ता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

संस्कृत

(संस्कृत का इतिहास)
संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

(संस्कृत का इतिहास)
संस्कृत का इतिहास हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है। यह हमें हमारे जीवन के अर्थ और उद्देश्य को समझने में मदद करता है।

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

प्रस्तावना

योग को आधार बनाकर प्रस्तुत विषय पर शोध करना मेरे लिए एक चुनौती भरा कार्य कर रहा है. इसका कारण यह था कि योग के विषय में आज भी लोगों में विचित्र धारणाएँ हैं. जैसे कि योगाभ्यास केवल संन्यासी, योगी या साधु ही कर सकते हैं, स्वस्थ व्यक्ति को योगाभ्यास करने की क्या आवश्यकता है ? इत्यादि.

आज की दुनिया में योग की विशेष भूमिका है. स्वास्थ्य विज्ञान के रूप में योग को आज किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है. इसके अभ्यास सम्पूर्ण विश्व में प्रयोग में लाये जा रहे हैं. आधुनिक समय में योग की लोकप्रियता के पीछे मुख्य कारण इसका चिकित्सा में उपयोग ही है क्योंकि इसे वैज्ञानिक विधियों से भलीभांति परीक्षित किया जा चुका है.

सामान्यतः मनुष्य ही मन को बिगाड़ता है. इसके कारण ही विभिन्न रोग उत्पन्न होते हैं, लेकिन मनुष्य के पास यह क्षमता भी है कि वह अपने पास उत्पन्न अव्यवस्था या रोग को स्वयं भी दूर कर सकता है. इसी सिद्धान्त के कारण योग को चिकित्सा के क्षेत्र में शत प्रति शत सफलता मिली है. योग ऐसा विज्ञान है जो हमारे पुरुषार्थ को जाग्रत करता है और जिसके बतलाये गये अनुशासन पर चलकर असाध्य रोगों से भी मुक्ति पायी जा सकती है.

योग एक अध्यात्म विद्या भी है जो हमारी भारतीय परम्परा एवं संस्कृति का अभिन्न अंग है किन्तु अज्ञानता के कारण या भौतिक तकनीकी जगत से सम्मोहित होकर हम जीवन के इस सत्य को भूल रहे हैं. योग का संबंध है मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व से क्योंकि हम यह जानते हैं कि मनुष्य के जीवन में कर्म की क्षमता, भावनात्मक संवेदनशीलता तथा मानसिक स्पष्टता ये तीन अवस्थाएँ होती हैं. योग का लक्ष्य है व्यक्ति की इन तीनों क्षमताओं का समन्वित, विकास . बच्चों के शरीर का विकास एक निरंतर प्रक्रिया होती है. यह निरंतरता किशोरावस्था तक बनी रहती है. जीवन के प्रारंभिक दो वर्षों तक विकास प्रक्रिया अत्यन्त तेज रहती है. बाल्यावस्था के मध्यकाल में यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत धीमी रहती है. किशोरावस्था में यह पुनः गतिमान होती है.

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

बालक का यह विकास-क्रम अनेक कारणों से प्रभावित होता है. जैसे-वंशानुक्रम, वातावरण, आहार, रोग, अन्तःस्रावी ग्रंथियां, बुद्धि, लिंग इत्यादि. इन कारकों से बालक के विकास को कैसे अप्रभावी रखा जा सकता है जिससे कि उसका सर्वांगीण विकास हो सके ? संसार के प्रदूषित वातावरण से बालक को अछूता रखते हुए उसके विकास को चरम स्थिति तक पहुंचाने में उसे किस मार्ग का अनुसरण करना होगा ? इन्हीं प्रश्नों ने मुझे इस शोध-कार्य के लिए प्रेरित किया. महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय के तत्वावधान में प्रस्तुत इस शोध कार्य में बालक के सर्वांगीण विकास को योगाभ्यास द्वारा किस हद तक प्रभावित किया जा सकता है, यह ज्ञात करना हमारा प्रमुख प्रयास रहा है.

इस विषय पर शोध-कार्य करने की प्रेरणा मुझे अपने गुरुजनों से प्राप्त हुई थी. चूंकि प्रारंभ से ही योग मेरा रुचिकर विषय रहा है अतः मेरी यह जिज्ञासा थी कि हम किन आसनों, प्राणायामों तथा ध्यान की तकनीकों के अभ्यास से बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास को प्रगति के शिखर तक पहुंचा सकते हैं ? उसकी एकाग्रता को कैसे बढ़ाया जा सकता है ? किसी भी क्षेत्र में मनुष्य की प्रगति के लिए न केवल उसे शारीरिक रूप से स्वस्थ होना चाहिए वरन् उसका मानसिक रूप से स्वस्थ होना भी अनिवार्य है और ऐसे ही समन्वित व्यक्तित्व के विकास को योग ने सदा ही अपना परम लक्ष्य माना है.

योग का प्रयोग एक ऐसा माध्यम है जो हमारी सजगता को बढ़ाता है जिससे हम अपनी सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं संवेगात्मक प्रक्रियाओं पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते हैं. सभी प्रकार की योग-साधना में चाहे वे आसन हों, प्राणायाम हो अथवा ध्यान की क्रियायें, उनका अभिप्राय व्यक्ति को समस्त शारीरिक, मानसिक तथा भावात्मक तनावों से मुक्त करना है.

भौतिकवादी युग में आज का बालक अनेक तनावों से घिरा होता है, योग ही वह मार्ग प्रस्तुत करता है जिस पर चलकर हम जीवन की आनन्दमय कुंजी प्राप्त कर सकते हैं और वह कुंजी है अपने आन्तरिक स्वरूप का परिज्ञान जो सुख-शांति का एक मात्र स्रोत है, शक्ति का अपार भंडार है.

मेरा यह शोध-कार्य मुख्यतः प्रायोगिक रहा है. इसके लिए हमने सबसे पहले बालक के विकास से संबंधित विभिन्न पहलुओं को लेकर प्रश्नावली बनायी थी.

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

अपने शोध-कार्य के लिए मैंने जिन प्रतिदर्शों को चुना उन्होंने योग को आंशिक रूप से अपनाया था. यही प्रयोग यदि पूर्णतः किसी योग आश्रम के वातावरण में किया जाये जहां बच्चे सुबह से रात तक योगमय परिवेश में रहते हैं तो परिणाम निश्चित रूप से और अधिक आशानुरूप प्राप्त होंगे.

प्रस्तुत शोध-कार्य के निष्कर्षों को पुष्ट करने के लिए मैंने मुख्यतः तुलनात्मक पद्धति का उपयोग किया है और प्रतिदर्शों के रूप में ऐसे 400 शालेय विद्यार्थियों का भी चयन किया जिनमें से 200 योग के प्रभावों से युक्त हैं और 200 प्रत्यक्षतः उससे रहित हैं.

बालकों के विकास की गति की स्पष्ट अवधारणा के लिए विकास को भी दो चरणों में विभक्त कर दिया गया है. प्रथम 6 से 10 वर्ष तक अर्थात् बाल्यावस्था और द्वितीय 11 से 16 वर्ष तक अर्थात् किशोरावस्था.

योग का प्रभाव इसके बाद भी व्यक्ति के जीवन की गति को नियंत्रित करता है, उसे रूपान्तरित भी करता है. पर शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक-सांस्कृतिक विकास की आधार-शिलायें 6 से 16 वर्ष के भीतर ही सुनिश्चित हो जाती हैं. अतः प्रस्तुत शोध-कार्य का तुलनात्मक परिक्षेत्र उक्त दो चरणों तक ही सीमित रखा गया है.

प्रस्तुत शोध-कार्य के निर्देशन के लिए हमें डॉ. गणेश खरे, सेवानिवृत्त प्राचार्य शासकीय महाविद्यालय राजनांदगांव एवं डॉ. श्रीमती कंचन सक्सेना, व्याख्याता संस्कृत एवं प्रभारी महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय-परिसर दुर्ग का आत्मीय सहयोग प्राप्त हुआ है. इसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं. इस कार्य को पूर्ण करने में मेरे पति श्री आशुतोष चावरे का हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ, साथ ही मुझे मेरे माता-पिता, मेरी सास, जिठानी व देवरानी, दोनों भैया व भाभी का हार्दिक सहयोग भी मिलता रहा, जिसके बिना यह कार्य असंभव था. इस कार्य को सम्पन्न करने में महर्षि महेश योगी विश्वविद्यालय के दुर्ग, राजनांदगांव, रायपुर, जबलपुर आदि के परिसरों से भी मुझे पुस्तकों के साथ-साथ निरंतर मार्गदर्शन भी उपलब्ध होता रहा है अतः उनके प्रति भी मैं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ.

श्रीमती अर्चना चावरे

शोध छात्रा

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

विषय-सूची

अध्याय : 1 भारत मे योग की परम्परा और उसका 1-59
स्वरूप-विश्लेषण

1.1	भारत की अमूल्य सम्पत्ति : योग	2
1.2	“योग” शब्द की व्युत्पत्ति	3
1.3	योग की परम्परा	5
1.4	वेदों में योग-विद्या	8
1.5	उपनिषदों में योग	12
1.6	गीता में योग	16
1.7	विभिन्न धर्मों में योग-बौद्ध धर्म में योग	18
1.8	जैन-धर्म में योग	21
1.9	जरथोस्त धर्म में योग	23
1.10	ईसाई धर्म में योग	24
1.11	योग का स्वरूप-विश्लेषण	25
1.11.1	चित्तवृत्ति	25
1.11.2	मन	29
1.11.3	वृत्तियों के प्रकार - प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति	31
1.11.4	निरोध - शिव संकल्प सूक्त	33
1.11.5	अष्टांग-योग	37
	यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि, पंचकोष	46
1.11.6	योग के भेद-	48
	राजयोग, ज्ञान योग, कर्म योग, भक्तियोग, हठयोग, मंत्रयोग, लययोग	
1.12	संदर्भ अध्याय-1	52

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

अध्याय : 2 योग का बाल-विकास से संबंध

60-86

2.1	मानव-समाज में बालक की संस्थिति	61
2.2	बालक-केन्द्रित शिक्षा का औचित्य	61
2.3	बालक के विकास का अर्थ	62
2.4	बाल-विकास के आयाम	63
	क. वंशानुक्रम,	64
	ख. वातावरण	65
2.5	बालक का सर्वांगीण विकास	68
	क. शारीरिक	68
	ख. क्रियात्मक	69
	ग. संवेगात्मक	70
	घ. सामाजिक	71
	ड. भाषा-विकास	72
	च. मानसिक विकास	74
	छ. चरित्र का विकास	75
	ज. यौगिक दृष्टि से विकास	76
	झ. भावातीत ध्यान	77
2.6	संदर्भ अध्याय - 2	84

अध्याय : 3 नियमित योग-शिक्षा एवं योग-शिक्षा से वंचित बालकों के विकास से संबंधित सांख्यिकीय विवरण.

87-111

3.1	प्रतिदर्शों का चयन.	88
3.2	प्रश्नावली का प्रारूपण.	88
3.3	उपलब्ध सांख्यिकीय विवरण.	
	(1) प्रतिदर्श क्रमांक 1 (6 से 10 वर्ष)	89

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

3.4	प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़ों का सामान्य-विश्लेषण.	90
अ.	नियमित रूप से यौगिक क्रियायें करने वाले और यौगिक क्रियायें न करने वाले छात्रों से प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़े.	
	प्रथम प्रतिदर्श-आयुवर्ग 6 से 10 वर्ष.	
3.41	दिनचर्या संबंधी प्रश्नावली (प्रश्न 1 से 6)	90
3.42	खान-पान से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 7,8)	91
3.43	यम-नियम से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 9 से 15)	92
3.44	शारीरिक विकास से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 16 से 20)	93
3.45	सामाजिक विकास से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 21 से 25)	94
3.46	मानसिक विकास से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 26 से 32)	94
3.47	संवेगात्मक विकास से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 33 से 40)	96
3.48	यौगिक क्रियाओं से संबंधित प्रश्नावली (प्रश्न 41 से 45)	97
3.5	आ. नियमित रूप से यौगिक क्रियायें करने एवं यौगिक क्रियायें न करने वाले विद्यार्थियों से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़ों का स्वरूप-विश्लेषण.	97
	द्वितीय प्रतिदर्श आयुवर्ग 11 से 16 वर्ष.	98
3.51	दिनचर्या से संबंधित प्रश्न.	99
3.52	खान-पान से संबंधित प्रश्न.	100
3.53	मानसिक विकास से संबंधित प्रश्न.	100
3.54	सामाजिक विकास से संबंधित प्रश्न.	101
3.55	संवेगात्मक विकास से संबंधित प्रश्न.	102
3.56	यम-नियम से संबंधित प्रश्न.	103
3.57	संस्कार तथा आत्म सम्मान से संबंधित प्रश्न.	104
3.58	यौगिक क्रियाओं से संबंधित प्रश्न.	105

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

3.6	इ. सह-संबंधन	106
3.7	वार्षिक परीक्षा परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन.	109

अध्याय : 4 बाल-विकास और यौगिक शिक्षा का स्वरूप 112-160

4.1	शिक्षा का वास्तविक स्वरूप	113
4.2	योग को वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में शामिल करने की आवश्यकता.	113
	1. बालमन को कुसंस्कारों से मुक्त करना.	113
	2. पीनियल ग्रंथि की क्रियाशीलता को बढ़ाना.	114
	3. बच्चों को मानसिक रूप से तैयार करना.	115
	4. हार्मोन्स के अवरोध को दूर करना.	116
4.3	बच्चों की प्रमुख समस्यायें.	116
	अ. एकाग्रता की कमी.	117
	आ. स्थूलता.	118
	इ. भूख न लगाना.	120
	ई. अनियंत्रित संवेग.	121
4.4	योग का चिकित्सात्मक रूप.	123
	1. बाल अपराध.	123
	2. विकलांगता-शारीरिक, मानसिक	124
	3. बाल मधुमेह.	125
4.5	रोगों का यौगिक निदान एवं चिकित्सा.	127
4.6	भावातीत ध्यान.	131
4.7	अन्य चिकित्सा पद्धतियां.	142
	1. एलोपैथी चिकित्सा	142
	2. होमोपैथी चिकित्सा	144
	3. बायोकेमिक चिकित्सा	145
	4. एक्जूप्रेशर चिकित्सा	146

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

5.	चुंबक चिकित्सा	147
6.	स्पर्श चिकित्सा	148
7.	प्राकृतिक चिकित्सा	149
8.	आयुर्वेदिक चिकित्सा	151
	निष्कर्ष	154
4.8	योग : नये युग की नयी संस्कृति.	155

अध्याय : 5 उपसंहार.

161-174

5.1	वर्तमान शिक्षा-पद्धति में योग के समावेश की प्रासंगिकता.	162
5.2	प्रस्तुत शोध-कार्य का प्रदेय.	167
5.21	मानव जीवन पर योग के प्रमुख संप्रभाव	171
5.3	परिसीमायें	173
5.4	सुझाव	174

परिशिष्ट

175-203

1.	साक्षात्कार अनुसूची क्रमांक 1 (६ से 10 वर्षीय बालकों के लिए)	176
2.	साक्षात्कार अनुसूची क्रमांक 2 (11 से 16 वर्षीय किशोरों के लिए)	183
3.	संदर्भ ग्रंथों की सूची.	
	अ. संस्कृत साहित्य	190
	ब. अंग्रेजी भाषा के ग्रंथ	190
	इ. हिन्दी ग्रंथों की सूची	191
	ई. पत्र पत्रिकायें	193

147	अथ विष्णुः	३
148	अथ ब्रह्मा	३
149	अथ शिवः	३
150	अथ विष्णुः	३
151	अथ ब्रह्मा	३
152	अथ शिवः	३
153	अथ विष्णुः	३
154	अथ ब्रह्मा	३
155	अथ शिवः	३

अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा

156	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
157	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
158	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
159	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
160	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
161	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
162	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
163	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
164	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३
165	अथ विष्णुः ३ : अथ ब्रह्मा	३

अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः

166	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
167	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
168	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
169	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
170	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
171	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
172	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
173	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
174	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३
175	अथ शिवः ३ : अथ विष्णुः	३

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

4. योग करने वाले तथा योग न करने वाले 194-203
बालकों तथा किशोरों से प्राप्त आंकड़ों के
तुलनात्मक आरेखों का विवरण

4.अ. आयु वर्ग 6 से 10 वर्ष के बालकों के ग्राफ

4.1 बच्चे जो योग करते हैं. 194

A.	सकारात्मक उत्तर	नीला रंग
B.	नकारात्मक उत्तर	गहरा हरा रंग
C.	उदासीन उत्तर	पीला रंग

4.2 बच्चे जो योग नहीं करते हैं. 195

A.	सकारात्मक उत्तर	नीला रंग
B.	नकारात्मक उत्तर	गहरा हरा रंग
C.	उदासीन उत्तर	पीला रंग

4.3 योग करने वाले तथा योग न करने वाले 196

बच्चों के सकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ

A.	योग करने वाले बालक	नीला रंग
A.	योग न करने वाले	हरा रंग

4.4 योग करने वाले तथा योग न करने वाले 197

बच्चों के नकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ

B.	योग करने वाले बालक	नीला रंग
B.	योग न करने वाले	हरा रंग

4.5 योग करने वाले तथा योग न करने वाले 198

बच्चों के उदासीन उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ

C.	योग करने वाले बालक	नीला रंग
C.	योग न करने वाले	हरा रंग

4.आ. आयु वर्ग 11 से 16 वर्ष के किशोरों के ग्राफ

4.6 बच्चे जो योग करते हैं. 199

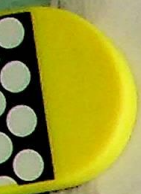
A.	सकारात्मक उत्तर	नीला रंग
B.	नकारात्मक उत्तर	पीला रंग
C.	उदासीन उत्तर	हरा रंग

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

“ बाल विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन ”

4.7	बच्चे जो योग नहीं करते हैं.	200
	A. सकारात्मक उत्तर	नीला रंग
	B. नकारात्मक उत्तर	पीला रंग
	C. उदासीन उत्तर	हरा रंग
4.8	योग करने वाले तथा योग न करने वाले	201
	बच्चों के सकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ	
	A. योग करने वाले बालक	नीला रंग
	A. योग न करने वाले	हरा रंग
4.9	योग करने वाले तथा योग न करने वाले	202
	बच्चों के नकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ	
	B. योग करने वाले बालक	नीला रंग
	B. योग न करने वाले	हरा रंग
4.10	योग करने वाले तथा योग न करने वाले	203
	बच्चों के उदासीन उत्तरों का तुलनात्मक ग्राफ	
	C. योग करने वाले बालक	नीला रंग
	C. योग न करने वाले	हरा रंग

टीप : - उपर्युक्त समस्त तुलनात्मक आरेखों के अवलोकन से स्पष्ट है कि हर स्थिति में योग करने वाले बालकों तथा किशोरों से प्राप्त आंकड़े योग न करने वाले बालकों से तथा किशोरों से अधिक उन्नत स्थिति में हैं जो जीवन एवं शिक्षा के योग के महत्व के दिग्दर्शक हैं. तुलनात्मक आरेखन प्रश्नावली के प्रश्न समूहों के आधार पर तैयार किये गए हैं.



[Faint header text]		
100	3	1.4
101	4	1.5
102	5	1.6
103	6	1.7
104	7	1.8
105	8	1.9
106	9	2.0
107	10	2.1
108	11	2.2
109	12	2.3
110	13	2.4
111	14	2.5
112	15	2.6
113	16	2.7
114	17	2.8
115	18	2.9
116	19	3.0
117	20	3.1
118	21	3.2
119	22	3.3
120	23	3.4
121	24	3.5
122	25	3.6
123	26	3.7
124	27	3.8
125	28	3.9
126	29	4.0
127	30	4.1
128	31	4.2
129	32	4.3
130	33	4.4
131	34	4.5
132	35	4.6
133	36	4.7
134	37	4.8
135	38	4.9
136	39	5.0
137	40	5.1
138	41	5.2
139	42	5.3
140	43	5.4
141	44	5.5
142	45	5.6
143	46	5.7
144	47	5.8
145	48	5.9
146	49	6.0
147	50	6.1
148	51	6.2
149	52	6.3
150	53	6.4
151	54	6.5
152	55	6.6
153	56	6.7
154	57	6.8
155	58	6.9
156	59	7.0
157	60	7.1
158	61	7.2
159	62	7.3
160	63	7.4
161	64	7.5
162	65	7.6
163	66	7.7
164	67	7.8
165	68	7.9
166	69	8.0
167	70	8.1
168	71	8.2
169	72	8.3
170	73	8.4
171	74	8.5
172	75	8.6
173	76	8.7
174	77	8.8
175	78	8.9
176	79	9.0
177	80	9.1
178	81	9.2
179	82	9.3
180	83	9.4
181	84	9.5
182	85	9.6
183	86	9.7
184	87	9.8
185	88	9.9
186	89	10.0
187	90	10.1
188	91	10.2
189	92	10.3
190	93	10.4
191	94	10.5
192	95	10.6
193	96	10.7
194	97	10.8
195	98	10.9
196	99	11.0
197	100	11.1
198	101	11.2
199	102	11.3
200	103	11.4
201	104	11.5
202	105	11.6
203	106	11.7
204	107	11.8
205	108	11.9
206	109	12.0
207	110	12.1
208	111	12.2
209	112	12.3
210	113	12.4
211	114	12.5
212	115	12.6
213	116	12.7
214	117	12.8
215	118	12.9
216	119	13.0
217	120	13.1
218	121	13.2
219	122	13.3
220	123	13.4
221	124	13.5
222	125	13.6
223	126	13.7
224	127	13.8
225	128	13.9
226	129	14.0
227	130	14.1
228	131	14.2
229	132	14.3
230	133	14.4
231	134	14.5
232	135	14.6
233	136	14.7
234	137	14.8
235	138	14.9
236	139	15.0
237	140	15.1
238	141	15.2
239	142	15.3
240	143	15.4
241	144	15.5
242	145	15.6
243	146	15.7
244	147	15.8
245	148	15.9
246	149	16.0
247	150	16.1
248	151	16.2
249	152	16.3
250	153	16.4
251	154	16.5
252	155	16.6
253	156	16.7
254	157	16.8
255	158	16.9
256	159	17.0
257	160	17.1
258	161	17.2
259	162	17.3
260	163	17.4
261	164	17.5
262	165	17.6
263	166	17.7
264	167	17.8
265	168	17.9
266	169	18.0
267	170	18.1
268	171	18.2
269	172	18.3
270	173	18.4
271	174	18.5
272	175	18.6
273	176	18.7
274	177	18.8
275	178	18.9
276	179	19.0
277	180	19.1
278	181	19.2
279	182	19.3
280	183	19.4
281	184	19.5
282	185	19.6
283	186	19.7
284	187	19.8
285	188	19.9
286	189	20.0
287	190	20.1
288	191	20.2
289	192	20.3
290	193	20.4
291	194	20.5
292	195	20.6
293	196	20.7
294	197	20.8
295	198	20.9
296	199	21.0
297	200	21.1
298	201	21.2
299	202	21.3
300	203	21.4
301	204	21.5
302	205	21.6
303	206	21.7
304	207	21.8
305	208	21.9
306	209	22.0
307	210	22.1
308	211	22.2
309	212	22.3
310	213	22.4
311	214	22.5
312	215	22.6
313	216	22.7
314	217	22.8
315	218	22.9
316	219	23.0
317	220	23.1
318	221	23.2
319	222	23.3
320	223	23.4
321	224	23.5
322	225	23.6
323	226	23.7
324	227	23.8
325	228	23.9
326	229	24.0
327	230	24.1
328	231	24.2
329	232	24.3
330	233	24.4
331	234	24.5
332	235	24.6
333	236	24.7
334	237	24.8
335	238	24.9
336	239	25.0
337	240	25.1
338	241	25.2
339	242	25.3
340	243	25.4
341	244	25.5
342	245	25.6
343	246	25.7
344	247	25.8
345	248	25.9
346	249	26.0
347	250	26.1
348	251	26.2
349	252	26.3
350	253	26.4
351	254	26.5
352	255	26.6
353	256	26.7
354	257	26.8
355	258	26.9
356	259	27.0
357	260	27.1
358	261	27.2
359	262	27.3
360	263	27.4
361	264	27.5
362	265	27.6
363	266	27.7
364	267	27.8
365	268	27.9
366	269	28.0
367	270	28.1
368	271	28.2
369	272	28.3
370	273	28.4
371	274	28.5
372	275	28.6
373	276	28.7
374	277	28.8
375	278	28.9
376	279	29.0
377	280	29.1
378	281	29.2
379	282	29.3
380	283	29.4
381	284	29.5
382	285	29.6
383	286	29.7
384	287	29.8
385	288	29.9
386	289	30.0
387	290	30.1
388	291	30.2
389	292	30.3
390	293	30.4
391	294	30.5
392	295	30.6
393	296	30.7
394	297	30.8
395	298	30.9
396	299	31.0
397	300	31.1
398	301	31.2
399	302	31.3
400	303	31.4
401	304	31.5
402	305	31.6
403	306	31.7
404	307	31.8
405	308	31.9
406	309	32.0
407	310	32.1
408	311	32.2
409	312	32.3
410	313	32.4
411	314	32.5
412	315	32.6
413	316	32.7
414	317	32.8
415	318	32.9
416	319	33.0
417	320	33.1
418	321	33.2
419	322	33.3
420	323	33.4
421	324	33.5
422	325	33.6
423	326	33.7
424	327	33.8
425	328	33.9
426	329	34.0
427	330	34.1
428	331	34.2
429	332	34.3
430	333	34.4
431	334	34.5
432	335	34.6
433	336	34.7
434	337	34.8
435	338	34.9
436	339	35.0
437	340	35.1
438	341	35.2
439	342	35.3
440	343	35.4
441	344	35.5
442	345	35.6
443	346	35.7
444	347	35.8
445	348	35.9
446	349	36.0
447	350	36.1
448	351	36.2
449	352	36.3
450	353	36.4
451	354	36.5
452	355	36.6
453	356	36.7
454	357	36.8
455	358	36.9
456	359	37.0
457	360	37.1
458	361	37.2
459	362	37.3
460	363	37.4
461	364	37.5
462	365	37.6
463	366	37.7
464	367	37.8
465	368	37.9
466	369	38.0
467	370	38.1
468	371	38.2
469	372	38.3
470	373	38.4
471	374	38.5
472	375	38.6
473	376	38.7
474	377	38.8
475	378	38.9
476	379	39.0
477	380	39.1
478	381	39.2
479	382	39.3
480	383	39.4
481	384	39.5
482	385	39.6
483	386	39.7
484	387	39.8
485	388	39.9
486	389	40.0
487	390	40.1
488	391	40.2
489	392	40.3
490	393	40.4
491	394	40.5
492	395	40.6
493	396	40.7
494	397	40.8
495	398	40.9
496	399	41.0
497	400	41.1
498	401	41.2
499	402	41.3
500	403	41.4
501	404	41.5
502	405	41.6
503	406	41.7
504	407	41.8
505	408	41.9
506	409	42.0
507	410	42.1
508	411	42.2
509	412	42.3
510	413	42.4
511	414	42.5
512	415	42.6
513	416	42.7
514	417	42.8
515	418	42.9
516	419	43.0
517	420	43.1
518	421	43.2
519	422	43.3
520	423	43.4
521	424	43.5
522	425	43.6
523	426	43.7
524	427	43.8
525	428	43.9
526	429	44.0
527	430	44.1

अध्याय : 1

भारत में योग की परम्परा और उसका स्वरूप-विश्लेषण

- 1.1 भारत की अमूल्य सम्पत्ति : योग,
- 1.2 "योग" शब्द की व्युत्पत्ति
- 1.3 योग की परम्परा
- 1.4 वेदों में योग-विद्या
- 1.5 उपनिषदों में योग
- 1.6 गीता में योग
- 1.7 विभिन्न धर्मों में योग
- 1.8 योग का स्वरूप-विश्लेषण
 - 1.8.1 चित्तवृत्ति
 - 1.8.2 मन
 - 1.8.3 वृत्तियों के प्रकार-प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति
 - 1.8.4 निरोध - शिव संकल्प सूक्त
 - 1.8.5 अष्टांग-योग
 - यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि, पंचकोष
 - 1.8.6 योग के भेद-
 - राजयोग, ज्ञान योग, कर्म योग, भक्तियोग, हठयोग, मंत्रयोग, लययोग

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अध्याय 1

भारत में योग की परम्परा और उसका स्वरूप-विश्लेषण

1.1 भारत की अमूल्य सम्पत्ति : योग.

योग भारत वर्ष की अमूल्य सम्पत्ति है। त्रिकालदर्शी ऋषि मुनियों का मानव समाज के लिए यह एक महान अवदान है। स्मृति, पुराण, दर्शनाशास्त्र अन्यान्य चिकित्सा ग्रन्थ, योगशास्त्र, ज्योतिषादि समस्त विद्यायें, उनकी ऋतम्भरा प्रज्ञा के ही मधुर फल हैं।

हमारे ऋषियों को ध्यान के उच्च प्रयोगों में प्रकाश, अचेतनता, विस्तृत चेतना तथा विश्व-चेतना के अनुभव हुए थे। इन्हीं अनुभवों ने उन्हें योग विषयक खोजों में अग्रसर होने की प्रेरणा दी। ऋग्वेद काल से ही उन्होंने मानव मस्तिष्क की रहस्यात्मक विपुल शक्ति से परिचय प्राप्त कर लिया था। इन शोधों के तहत सर्प, मेंढक आदि जन्तुओं से आसन, मुद्रायें, प्राणायाम आदि योगांगों को सीखकर उन्होंने अपने स्वास्थ्य व आयु की वृद्धि करने की सामर्थ्य प्राप्त की।

योगियों ने योग बल से मन स्थिर करके, मानसिक अवस्थाओं का पूर्णरूप से विचार कर तन्त्र और मन्त्रों के रहस्यों का भी अविष्कार किया। उनके मतानुसार हर एक चक्र में एक प्रकार की अलौकिक शक्ति निहित है उन शक्तियों को योग की सहायता से जागृत करके साधक अलौकिक शक्तियां प्राप्त कर सकता है।

योगबल से साधक ईर्ष्या, द्वेष, सुख, दुख, शत्रु, मित्र आदि द्वन्द्व भाव दूर कर जितेन्द्रिय, शांत चित्त, आत्मदर्शी होकर पृथ्वी पर शांति स्थापित करने में सहायक हुए थे। इसके ज्वलंत उदाहरण हैं ईसामसीह तथा बुद्ध इत्यादि जिन्होंने आत्म तत्व को जानकर एवं पंचभूतों पर प्रभुत्व जमाकर निर्वाण प्राप्त किया और मनुष्य जाति के लिए वास्तविक शान्ति, मुक्ति व आनंद का मार्ग सुलभ बना दिया।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योग के द्वारा मनुष्य के भीतर निहित शाक्तिशाली चेतना का विशेष रूप से शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, मनोदैहिक तथा आध्यात्मिक अनुभवों द्वारा अनावरण होता है। इस प्रकार योग के सभी अभ्यास मनुष्य के शरीर तथा मन के विकास से संबंधित हैं। वे ध्यान, एकाग्रता तथा चिंतन द्वारा मानवीय सत्ता का सर्वोच्च सत्ता से सम्पूर्ण एकीकरण कर देते हैं जिस प्रकार नदी समुद्र से मिलकर तदाकार हो जाती है उसी प्रकार मनुष्य अपनी निम्न, सीमित तथा अल्प, सजकता को योगाभ्यास द्वारा उस अनंत, असीम चेतना में मिलाकर अपने रोग, शोक तथा भय से छुटकारा पा लेता है।

1.2 “योग” शब्द की व्युत्पत्ति :-

योग शब्द की व्युत्पत्ति “युज्” धातु से हुई है। “युज्यतेऽसौ योगः” जो युक्त करे, मिलाये उसे योग कहते हैं। पाणिनि के गणपाठ में तीन युज् धातु है। दिवादिगण के युज् धातु का अर्थ है समाधि। हमारा आलोच्यमान योग शब्द इसी युज् धातु से उद्भूत हुआ है। इसके सिवा रुधादिगण में युज् धातु का अर्थ है संयोग तथा चुरादिगण में इसका अर्थ है संयमन। योग दर्शन के भाष्यकार महर्षि व्यास ने योगस्समाधिः कहकर योग को समाधि बतलाया है समाधि अर्थात् सम्यक् प्रकार से भगवान के साथ युक्त हो जाना, मिल जाना।

जीव व ब्रह्म का पूर्ण रूप से मिलन अर्थात् विजातीय, स्वजातीय एवं स्वगत भेद से रहित होकर जीव व ब्रह्म का एकत्व प्राप्त कर लेना, जिस अवस्था में भगवान के अस्तित्व के सिवा हमारा पृथक् अस्तित्व ही न रह जाय वही योग की परम स्थिति है।

प्रायः सभी उपलब्ध ग्रंथों में ‘योग’ शब्द का अर्थ समाधि का ही द्योतक है जैसे-

योग भाष्य के अनुसार -

योग समाधि को कहते हैं जो चित्त का सार्वभौम धर्म है।¹

महर्षि पतंजलि के मतानुसार -

चित्त वृत्तियों के निरोध का नाम योग है।²

योग वशिष्ठ के अनुसार-

संसार सागर से पार होने की युक्ति को योग कहते हैं।³

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

श्री मद्भगवद् के अनुसार -

सुख दुख, पाप पुण्य, शत्रु मित्र शीतोष्ण आदि द्वंद्वों से अतीत होकर समत्व प्राप्त करना योग है । ⁴

गीता में कर्म की कुशलता को भी योग की संज्ञा दी गई है. कर्म की कुशलता का अर्थ है- कर्म-बंधन में नहीं फंसना, फलासक्ति से रहित होकर कर्म के प्रति उदासीन भाव को धारण कर मुक्तावस्था को भी योग कहते हैं । ⁵

सांख्य मतानुसार -

पुरुष प्रकृति का पृथक्त्व स्थापित कर दोनों का वियोग करके पुरुष के स्वरूप में स्थित होना योग है । ⁶

मन को सांसारिक विषयों से हटाकर परमात्मा में लगाना योग है ।

(महोपनिषद 5/42)

जब पांचों ज्ञानेन्द्रियां मन सहित आत्मा में स्थिर हो जाती हैं और बुद्धि भी चेष्टा रहित हो जाती है तब उस अवस्था को परमगति कहते हैं, उसी स्थिर इन्द्रिय-धारणा को योग कहते हैं. उस अवस्था में साधन प्रमाद-रहित होता है । ⁷

चित्त की चंचल वृत्तियों को नष्ट करने के दो उपाय हैं योग और ज्ञान । योग का आशय है चित्त वृत्तियों का निरोध करना और ज्ञान का आशय है आत्मभाव, या परमात्मा के सच्चे रूप का अनुभव करना । इनमें से किसी के लिए योग कठिन होता है और किसी के लिए ज्ञान इसलिए परमेश्वर ने मनुष्य के हितार्थ दोनों मार्ग प्रकट किये हैं । ⁸

इस प्रकार ऋषि महर्षियों ने योग की अनेक परिभाषायें लिखी हैं, सभी परिभाषाओं का मूल स्वर है- साधक के चित्त को बाह्य जगत से हटाकर अन्तर्मुखी करना, फिर चाहे यह स्थिति चित्त वृत्ति के विरोध द्वारा हो अथवा कर्म में तल्लीनता से प्राप्त हो । एक बार चित्त अन्तर्विभूतियों से परिचित हुआ नहीं कि फिर उसमें वह रमने लगता है, इसका सीधा कारण है मानव मन का आनंद से अधिक आनंद की ओर आकर्षित होने का सहज स्वभाव ।

महर्षिः एषीं ह्युक्तं यत्पुनः कुरु कुरु
आहं ज्ञानं ज्ञानं ज्ञानं ज्ञानं ज्ञानं ज्ञानं
। ३ ॥ महर्षिः
किं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं

। ३ ॥ महर्षिः ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
(३-३ महर्षिः)

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं

महर्षिः किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं
ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं किं ज्ञानं

1.3 योग की परम्परा :-

योग की परम्परा कितनी प्राचीन है, यह एक कठिन प्रश्न है। कुछ लोगों का ऐसा विश्वास है कि योग विज्ञान वेदों से भी प्राचीन है। हड़प्पा और मोहन जोदड़ों (जो पाकिस्तान में है) में पुरातत्व विभाग द्वारा की गई खुदाई में अनेक ऐसी मूर्तियाँ मिली हैं जिनमें शिव और पार्वती को विभिन्न आसनों में अंकित किया गया है। ये भग्नवशेष प्रागैदिक युग के लोगों के निवास स्थान रहे हैं अतः सिन्ध उपमहाद्वीप में आर्य सभ्यता के प्रसार के पूर्व निश्चित रूप से योग के विविध रूपों का अस्तित्व था।

परम्परा व धार्मिक पुस्तकों के अनुसार आसनों सहित योग विद्या की खोज शिवजी ने की। शिव जी को परम चेतना का प्रतीक माना गया है। उन्होंने सभी आसनों की रचना की और अपनी प्रथम शिष्या पार्वती को उन्होंने सिखलाया। ऐसा कहा जाता है कि प्रारम्भ में 84,00000 आसन थे जो 84,00000 योनियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये आसन प्राणी की प्रारंभिक अवस्था से मुक्त अवस्था तक के विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। शताब्दियों से इन आसनों के रूप में परिवर्तन एवं सुधार होता रहा है। अब ज्ञात आसनों की संख्या कुछ सौ ही रह गई है। इनमें से 84 आसनों की विस्तृत व्याख्या हुई है।

“योगसूत्र” के अनुसार शेषनाग को योग का उत्पत्ति-कर्त्ता माना गया है, तथा पतंजलि मुनि को शेष नाग का अवतार माना है। भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि स्वयं उन्होंने सृष्टि के आरम्भ में योग का उपदेश विवस्वान को दिया था। वैदिक साहित्य में हिरण्यगर्भ को सभी विद्याओं के साथ-साथ तथा योग विद्या का भी सृष्टा माना गया है। इन उल्लेखों से यह स्पष्ट होता है कि योग विद्या अति प्राचीन काल से चली आ रही है।

यह एक सुविदित तथ्य है कि भारतीय दर्शन का चरम लक्ष्य प्राणियों को त्रिविध दुखों से सदा के लिए छुटकारा दिलाना है। दुखों की यह शाश्वतिक निवृत्ति मुक्ति, मोक्ष, कैवल्य, उपवर्ग, निःश्रेयस, निर्वाण और परमपद इत्यादि पदों से अभिहित की गयी है। इसकी सिद्धि के लिए प्रायः सभी दर्शन (चार्वाक दर्शन और मीमांसा के अतिरिक्त) पदार्थों के शुद्ध ज्ञान को किसी न किसी प्रकार से अपरिहार्य उपाय मानते हैं। श्रुतियों ने भी “ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः” का तथ्य स्वीकृत किया है। पदार्थों के इस शुद्ध ज्ञान को विभिन्न दर्शनों में तत्त्वज्ञान, सम्यक्ज्ञान, तत्त्व साक्षात्कार, परमज्ञान, विज्ञान, विवेक ख्याति इत्यादि नाम दिये गये हैं।

इनमें से सांख्य योग का तत्व ज्ञान विवेक ख्याति के नाम से प्रसिद्ध है और योगशास्त्र का तत्व दर्शन असम्प्रज्ञात योग के नाम से विख्यात है। दोनों प्रकार के शुद्ध ज्ञान को प्राप्त करने की प्रक्रिया बड़ी ही जटिल एवं दुरुह है।

इस उभयस्तरीय प्रक्रिया का रचनात्मक स्वरूप ही योग-साधना है। समस्त भारतीय दर्शन अपने-अपने ढंग से इस ज्ञान को उत्पन्न करने वाली योग-साधना को अपनाते हुए मोक्षप्रद तत्वज्ञान की उपलब्धि की व्याख्या करते हैं। योग का प्रतिपादन करने वाले योगदर्शन की प्राण प्रतिष्ठा यद्यपि पतंजलि विरचित योगसूत्रों में ही हुई है फिर भी पतंजलि को योगदर्शन का आदि प्रवर्तक नहीं माना जाता। योगसंबंधी पूर्ववर्ती ग्रंथों का यद्यपि पतंजलि ने न तो कहीं उल्लेख किया है और न किसी पुरातन योगाचार्य का नाम ही कहीं लिया है फिर भी अधिकांश प्रतिपाद्य विषयों को तर्कों और प्रमाणों से सिद्ध करने की चेष्टा न करना इस बात को सिद्ध करता है कि इन विषयों एवं संज्ञाओं का सामान्य बोध विद्वानों को पहले से रहा होगा।

योगी याज्ञवल्क्य ने हिरण्यगर्भ को योगदर्शन का प्रथम वक्ता या उपदेष्टा स्वीकार किया है। पतंजलि ने स्वयं इस तथ्य को प्रथम योगसूत्र अथ योगानुशासनम् में आये हुए अनुशासन शब्द से सूचित किया है। योगभाष्य के टीकाकार वाचस्पति मिश्र ने इसी तथ्य को प्रस्तुत करते हुए कहा है -

ननु हिरण्यगर्भो योगस्य वक्ता नान्यः पुरातन

इति योगियाज्ञ कल्क्यस्मृतेः कथं पतंजले योगिशास्त्र

मित्याशङ्क्य सूत्र कारेणोक्तम् अनुशासनम् इति

शिष्टस्य शासनमनुशासन मित्यर्थः (त. वै.)

पतंजलि ने अपने सूत्रों में स्वयं कोई संज्ञा नहीं बनायी है वरन् योग के विषय में प्रचलित पदों, विधियों तथा रीतियों से ही योग का वर्गीकरण मात्र किया है। योग सूत्रों को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि उस समय तक योग के अनेक सिद्धान्त विद्वज्जनों के बीच प्रचलित एवं विदित थे।

अतः योग शास्त्र के आदि उपदेष्टा पतंजलि से बहुत प्राचीन हिरण्यगर्भ नामक कोई ऋषि ही ठहरते हैं।⁹ वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण ग्रंथों एवं उपनिषदों और महाभारत¹⁰ आदि पुरातन ग्रंथों का अनुशीलन करने पर यही धारणा बनती है कि योग के आदिम¹¹ उपदेष्टा के रूप में विख्यात हिरण्यगर्भ आदि विद्वान् परमर्षि कपिल थे।

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

सांख्य-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

इन्हीं हिरण्यगर्भा कपिल ने सर्वप्रथम सांख्य योग का उपदेश किया। कदाचित् सांख्य और योग दोनों उस पुरातन काल में एक ही दर्शन के सम्मिलित नाम थे जिनमें से एक सैद्धान्तिक था तो दूसरा क्रियात्मक।¹²

अश्वघोष के बुध चरित (12/20) में भी इसी तथ्य का समर्थन हुआ है। जैन धर्म औपपत्तिक सूत्र की उक्ति भी कपिल को सांख्य और योग का मूल प्रवर्तक सिद्ध करती है।

इस प्रकार योग के आदि आचार्य हिरण्यगर्भ ही हैं। हिरण्यगर्भ सूत्रों के आधार पर (जो इस समय लुप्त हैं) पतंजलि मुनि ने योग दर्शन का निर्माण किया है। उन्होंने अपने योग सूत्रों में इस योग विज्ञान की आधिकारिक व्याख्या प्रस्तुत की है। उस समय तक योग विषय पर विभिन्न रूपों में उसकी व्याख्या प्रस्तुत की जा चुकी थी, यह तथ्य सिद्ध हो चुका है। अन्य दार्शनिक भी किसी न किसी विषय में पतंजलि से मतभेद होने पर निश्चित रूप से उनकी साधना-प्रणाली का अनुमोदन करते हैं।

महर्षि पतंजलि ने जनमानस के लिए अत्यंत सहज एवं सरल सूत्रों में योग विषयक ज्ञान का प्रकाश आलोकित किया। योग पर लिखित अब तक के समस्त ग्रंथों में पातंजल योग सूत्र सर्वश्रेष्ठ, सटीक एवं वैज्ञानिक दस्तावेज माना जाता है।

ये सूत्र पद्यमय हैं। प्रत्येक सूत्र व्यवस्थित क्रम में है व अत्यन्त संक्षिप्त होते हुए भी अधिक से अधिक जानकारी देता है। महर्षि पतंजलि एक सूत्र से दूसरे सूत्र पर व एक अध्याय से दूसरे पर अत्यन्त निर्दोष तार्किकता के साथ बढ़ते हैं। उनके ये सूत्र पुनरुक्ति दोष से अछूते हैं। उनका प्रत्येक शब्द अर्थपूर्ण व प्रसंगानुकूल है।

पतंजलि उन अनेक तकनीकों का प्रतिपादन करते हैं जो धीरे-धीरे मनुष्य के मन पर अपना अमिट प्रभाव डालती हैं और उसकी बोध-क्षमता को तीव्रता व सूक्ष्मता प्रदान करती हैं। सांख्य दर्शन योग-सूत्रों की रचना का आधार है।

योग सांख्य आदि दर्शन यह मानते हैं कि समस्त अनुभव दुखात्मक होते हैं। तमोगुण किसी न किसी अंश में समस्त संयोगों में विद्यमान रहता है इसलिए समस्त बौद्धिक व्यापार किसी न किसी अंश में दुखात्मक भावना से प्रेरित होते हैं। इसलिए महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में दुख के मूलभूत

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Kargundi, Jabalpur MP Collection

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

कारण को जानकर उसे दूर करने की युक्ति प्रस्तुत की जिसका उद्देश्य मनुष्य के असंतोष को मिटाने का सफल प्रयास था ।

1.4 वेदों में योग विद्या :-

सभी धर्म, कर्म, योग, ज्ञान, वैराग्य तथा भक्ति आदि सत्कर्म वेदों द्वारा निर्दिष्ट हैं । “यहां तक कि भविष्य में होने वाले ज्ञान-विज्ञान तथा फल साहित्य का भी वेदों में उल्लेख प्राप्त है ।”¹³

इस विश्व का ज्ञान कराने वाला शब्द रूपी ब्रह्म, वेद ही है । वेद में जो विज्ञान वर्णित है वही विश्व में विविध तत्व एवं शक्तियों के रूप में कार्य कर रहा है, उन तत्वों को वेद में देवतावाची ग्राह्य कर मन्त्र रूप में जो ज्ञान का बीज दिया है उन मंत्रों के प्रकाश में हम आज भी इस युग में अपना पथ प्रदर्शन प्राप्त कर रहे हैं । वेदों में समस्त सृष्टि की निर्माण-कला का विज्ञान निहित है ।

ऋग्वेद के 10 वें मण्डल में आये हुए मुनियों के अनुसार कपिल और कपिलानुयायी मुनि वैदिक काल के ऋषि सिद्ध होते हैं । इस प्रकार योग वैदिक काल में ही भारतीय वेत्ताओं के द्वारा सीखा जा चुका था । ज्ञान की प्राप्ति, शांति और अक्षुण्ण सुख, तथा देवोपासना के लिए योग का व्यवहार ऋग्वेद काल में सम्यक् रूप से ज्ञात था ।

ऋग्वेद में योग की महिमा और यज्ञों की सिद्धि के लिए उसकी परमावश्यकता बतलाते हुए कहा गया है कि योग के बिना विद्वान का कोई भी यज्ञ कर्म सिद्ध नहीं होता । वह योग क्या है, जो चित्त वृत्तियों का निरोध कर कर्तव्य-कर्म मात्र में व्याप्त है ।¹⁴ सभी कर्मों की निष्पत्ति का एक मात्र उपाय चित्त-समाधि या योग ही है । प्रत्येक प्राणी को अपने लौकिक व पारलौकिक उद्देश्यों को सिद्ध करने के लिए योग की शरण में अवश्य ही आना होगा । पुरुष की प्रत्येक अभीष्ट सिद्धि के लिए पुत्रवत्सला श्रुति जननी धर्मानुष्ठान की आज्ञा कर रही है, धर्मचर- धर्म का अनुष्ठान करो । यह अनुष्ठेय धर्म तीन अंगों में विभक्त है - यज्ञ, तप और दान । इनमें भी मुख्य स्थान यज्ञ का है । अतः श्री कृष्ण ने कहा है - यज्ञ, दान और तप ही बुद्धिमान मनुष्यों को पावन करने वाले हैं ।¹⁵

यह यज्ञ तीन प्रकार का है - कर्मयज्ञ, उपासना यज्ञ तथा ज्ञानयज्ञ । उक्त त्रिविध यज्ञों की निष्पत्ति योग पर अवलम्बित है । कर्म यज्ञ की निष्पत्ति

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः । अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

के लिए ऋत्विजों को सर्वथा सावधान रहना पड़ता है जिससे कि यज्ञ के अनुष्ठान में किसी प्रकार की भूल न हो जाय, अन्यथा यज्ञ अपूर्ण ही रह जायेगा ।

जिस प्रकार शरीर के बिना शरीरी आत्मा का भोग योग-सिद्ध नहीं हो सकता, ठीक उसी तरह उपासना का कोई भी अंग योग की सहायता के बिना निष्पन्न नहीं हो सकता क्योंकि प्रेम या भक्ति को उपासना का जीवन और योग को शरीर माना गया है । शांत चित्त में परमात्मा के प्रादुर्भावरूप समीप स्थिति की सम्पादन क्रिया-कलाप का नाम ही उपासना है । योग के बिना चित्त की एकाग्रता कठिन ही नहीं अपितु असम्भव भी है ।

ज्ञानयज्ञ की साधना भी बिना योग के असंभव है । वृहदारण्यकोपनिषद् के मैत्रेयी ब्राह्मण में कहा है-¹⁶ आत्मा का ही दर्शन, श्रवण, निदिध्यासन करना चाहिए । निदिध्यासन ध्यान का नामान्तर है । ध्यान विशाल योगभवन का सप्तम सोपान है अतः यह निश्चित हुआ कि बिना योग के कोई भी यज्ञ निष्पन्न नहीं हो सकता अतएव योगी याज्ञवल्क्य लिखते हैं - यज्ञाचार, दम, अहिंसा, दान स्वाध्याय प्रभृति धर्मों से योग के द्वारा आत्मदर्शन करना परम धर्म है ।¹⁷ इस परम धर्म का साधन योग है । उन्हीं के अनुसार योग शब्द का अर्थ है- जोड़ना, अथवा युक्त करना, समाहित अथवा एकाग्र करना । अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ युक्त करना ही योग है और जिस साधन से इस प्रकार का योग एवं सायुज्य प्राप्त होता है वह भी योग कहलाता है ।

आज का भटका हुआ संसार योग से विमुख है । आज सुख की खोज में मानव अपने शरीर और इन्द्रियों को विषय भोग की भट्टी में झोंकने के साधनों का संग्रह करके सुख और शांति की खोज में भटक रहा है । ऐसी भटकती हुई मानव जाति को वेद अपना दिव्य संदेश दे रहे हैं - अपना मन विश्व के विराट मन के साथ संयुक्त कर दो ।¹⁸ वह दिव्य मन है, उसमें व्याप्त दिव्य ज्ञानादि का प्रकाश आप में भी प्रकाशित होने लगेगा ।

प्राण ही जीवन है । प्राण और मन दोनों मिलकर इस कायारूपी अपूर्व नगरी को स्वर्ग और नरक बना रहे हैं । आज मानव जाति का मन और प्राण उसके वश में नहीं है । वह दूसरों के जीवन पर अपना आधिपत्य चाहता है, परन्तु उसका स्वयं के मन एवं प्राण पर आधिपत्य नहीं है । जब हमारा मन और प्राण हमारे वश में होगा तभी हम आत्मोन्नति की ओर बढ़ सकते हैं ।

मन ही वह प्रथम केन्द्र है जिस पर हमें संस्कार डालना है । मन की साधना से ही मनुष्य उन्नत होता है । वेद ने मन को नियंत्रित करने के लिए सारथि की उपमा दी है - जिस प्रकार से उत्तम सारथि अपने रथ के घोड़ों को चलाता है उसी प्रकार यह मन मनुष्य देह की इतस्ततः प्रवृत्तियों को संचालित करता है¹⁹ अतः मन को सुनियंत्रित एवं वश में रखकर लक्ष्य की ओर अग्रसर करना परमाश्यक है । मन की साधना के लिए वेद कहते हैं - योगेश्वर्य का सम्पादक प्रथम मन को एकाग्र करता हुआ बुद्धिन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों को तत्त्वज्ञान के लिए आत्मज्योति का साक्षात्कार करके पार्थिव पदार्थों से उन्नत उठाता है ।²⁰ इस मंत्र में यज्ञानः प्रथमं मनः इन शब्दों के द्वारा मन को एकाग्र करने का उपदेश है जो योग का प्रथम लक्षण और प्रथम कार्य है । मन को एकाग्र करना अर्थात् चित्त की वृत्तियों को रोकना ही योग है । इसी को महर्षि पतंजलि ने योग के द्वितीय सूत्र में "योगश्चित्तवृत्ति निरोधः" इन शब्दों में लिखा है ।

मन की साधना से क्या लाभ होता है इसका उत्तर इसी मंत्र में लिखा है "निचाय्यज्यौतिर्निसचाश्य" जो आत्म ज्योति है उसका निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करना; महर्षि पतंजलि योग के तीसरे सूत्र "तदा द्रष्टः स्वरूपेऽवास्थानम्" में यही बात स्पष्ट की गई है ।

मन को वृत्तियों से हटाने और वश में करने के लिए वेद ने प्राणायाम का अभ्यास करने का आदेश दिया है शरीर में जो प्राण, अपान, व्यान-उदानादि प्रकार के प्राण हैं उन्हें यथावत क्रिया से संगत करना चाहिए । यजुर्वेद में प्राण शक्ति को शरीरस्थ यज्ञ में अर्पित करने के लिए- प्राणोयज्ञेन कल्पताम् कहा है । प्राण और मन का घनिष्ठ संबंध है । प्राण के वश में होने पर मन वश में हो जाता है और मन के निरोध में सहायता होती है ।²¹

यजुर्वेद में मन के बारे में कहा गया है- कि उस परमदेव सविता के संसार में प्रवर्तमान उसकी आज्ञा में या उस योगी विद्वान की अध्यक्षता में हम मन के सुख लाभ से अपनी सामर्थ्य से आत्मज्योति को धारण करें ।²²

वेदों में योग को परमानन्द प्राप्ति का मार्ग बताया है । परमात्मा की जो वेदवाणी है उसी की आज्ञा में प्रवर्तमान होकर तथा उसके अनुसार बताये मार्ग द्वारा जो योग में युक्त है, उनके संरक्षण में व्यक्ति को मोक्षपद प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए अर्थात् योग द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है और उसके लिए 'युक्तेन मनसा वयम्' हम सबको एकाग्र मन से उसमें संलग्न होना चाहिए, ऐसा वेद ने उपदेश किया है ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

यजुर्वेद में योग का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है कि सुख एवं आत्म प्रकाशोन्मुख इन्द्रियों को प्रज्ञा तथा कर्म से संयुक्त करने के प्रयत्न की ओर बढ़ने का संकेत किया है । ²³ इन्द्रियों को आत्म प्रकाशोन्मुख करने के लिए योग यज्ञ का वर्णन किया गया है । प्राणों के यथावत अभ्यास से अर्थात् उसमें होतृत्व जागृत करने से चक्षुर्यज्ञेन कल्पताम् नेत्र यज्ञ सम्पन्न हो जाते हैं ²⁴ अर्थात् दोनों नेत्र भूमध्य में अपनी दर्शन शक्ति से अपने दिव्य कार्य अन्तर्ज्योति का दर्शन करते हैं । तब “प्राणायामाद शुद्धिक्षये ज्ञान दीप्तिरा विवेक ख्यातेः” योग दर्शन के सूत्र के अनुसार ही स्थिति प्राप्त होती है ।

ज्योति के दर्शन के साथ पुनः श्रोतं यज्ञेन कल्पताम् श्रोतो को भी योग यज्ञ में लगाना चाहिए । जिससे आन्तरिक शब्द अनाहत दिव्य शब्दों का श्रवण होने लगता है । इसी प्रकार शरीर की प्रत्येक इन्द्रिय को योग यज्ञ के साथ संयुक्त करना चाहिए ।

योग के द्वारा अपना ज्ञान, सृष्टि का ज्ञान और परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होकर परमानन्द की प्राप्ति होती है । साधक का लक्ष्य आनन्द की प्राप्ति है । यद्यपि योग में अपना संयम-नियम, अनुष्ठान काम देता है, परन्तु जब उसे परमात्मा, स्वीकार करता है तो उसकी कृपा से धर्ममेघ समाधि भी प्राप्त होती है । जब अपना प्रयत्न प्रभु को स्वीकार हो जाता है तो यही सबसे उच्च आनन्ददायक स्थिति होती है । योग की इस स्थिति का भी वर्णन वेद के मंत्रों में मिलता है । ²⁵ योगी योग यज्ञ द्वारा उत्तरोत्तर उच्च स्थितियों को प्राप्त होता है इसका वर्णन भी वेद में निहित है यथा- योग के अंगों के अनुष्ठान संयमादि को साधना से धारणा, ध्यान और समाधि में परिपूर्ण होने पर मैं पृथ्वी से अंतरिक्ष को प्राप्त होऊँ । अंतरिक्ष में पहुँचने के पश्चात् अंतरिक्ष से प्रकाशमान सूर्यलोक को चढ़ जाऊँ । सुख देने वाले प्रकाशमान उस सूर्यलोक से अत्यन्त सुख और ज्ञान के प्रकाश को मैं प्राप्त होऊँ । ²⁶

जैसा कि पूर्ण मंत्रों में बताया गया है कि इस शरीर में भी पृथ्वी अंतरिक्ष, द्यौ और स्वः लोक है तदनुसार योगी क्रमशः उत्तरोत्तर सूक्ष्म उन्नत ज्ञान प्रकाशमय एवं आनन्द मय स्थितियों को प्राप्त करता है । इस उत्तरोत्तर आरोहण क्रम में योगी को जो अनुभूतियाँ होती हैं उनका भी वेदों में वर्णन किया गया है - आठ चक्रों और नौ द्वारों से युक्त हमारी यह देहपुरी एक अपराजेय देवनगरी है, इसमें एक तेजस्वी कोश है जो ज्योति और आनन्द से परिपूर्ण है । ²⁷

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वैदिक योग साधना का ध्येय है आत्मा का परमात्मा के साथ ऐक्य । उसके लिए साधक की अभीप्सा सुन्दर ढंग से व्यक्त की गयी है - हे अग्नि देव ! यदि मैं तू हो जाऊँ अर्थात् सर्व समृद्धि सम्पन्न हो जाऊँ या तू मैं हो जाए तो इस लोक में सभी तेरे आशीर्वाद सत्य सिद्ध हो जायें । ²⁸

इस प्रकार सभी प्राचीन योग मार्ग वेदाश्रित ही हैं जो वेदों में योग के कल्याण के लिए निर्दिष्ट किये गये हैं ।

इस प्रकार योग वैदिक काल में ही भारतीय ऋषियों, मुनियों द्वारा सीखा जा चुका था । भले ही योग मोक्ष के साक्षात् साधन के रूप में उस समय न जाना जाता रहा हो, किन्तु ज्ञान की प्राप्ति, शांति और अक्षुण्ण सुख तथा देवोपासना के लिए योग का महत्व ऋग्वेद काल में ज्ञात था ।

1.5 उपनिषदों में योग :-

योग हिन्दू जाति की सबसे प्राचीन सम्पत्ति है । यही एक ऐसी विद्या है जिसमें वाद विवाद को कहीं स्थान नहीं है । यही एक वह कला है जिसकी साधना से लोग अजर अमर होकर देह रहते ही सिद्ध पदवी को पा जाते हैं । यह सर्व सम्मत सिद्धान्त है कि योग ही सर्वोत्तम मोक्षोपाय है । अतः इसमें संदेह नहीं कि भारतीय तत्व ज्ञान के कोश को पाने के लिए योग की कुंजी पाना परमावश्यक है ।

भारतवर्ष के आध्यात्मिक इतिहास में योग का सर्वदा विशिष्ट स्थान रहा है दार्शनिक मत-मतान्तरों के भिन्न रहने पर भी योग विषयक किसी प्रकार का विवाद सुनने में नहीं आता । बौद्ध, जैन आदि भी योग पर उतनी ही आस्था रखते थे जितनी श्रद्धा वेद सम्मत मतानुयायी आर्य जनता रखती थी । हिन्दुओं के नित्य नैमित्तिक कर्मों में भी योग के कितने ही अंग आसन, प्राणायाम आदि व्याप्त देखे जाते हैं । यह एक बड़ी विशिष्ट बात है कि योग का यह प्राधान्य प्राचीनतम काल से चला आया है । पॉलड्युसेन इसी को भारत के धर्म जीवन की एक सबसे विलक्षण बात कहते हैं ।

वेद संसार के सबसे प्राचीन ग्रंथ हैं । वेद के प्रत्येक विभाग में योग के विषय में बहुत कुछ मिलता है अतः यह बात अत्युक्ति नहीं कही जा सकती कि योग हमारी सबसे पुरानी सम्पत्ति है ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वेद के दो विभाग हैं - मंत्र और ब्राह्मण । मंत्रों के संग्रह का नाम संहिता है । मंत्रों के विनियोग आदि विषयों को बतलाने वाला ग्रंथ ब्राह्मण कहा जाता है । ब्राह्मणों का अंतिम भाग बहुधा आरण्यक होता है । आरण्यकों का अंतिम अंश उपनिषद होता है । उपनिषद का अर्थ है - रहस्य या गुप्त उपदेश। यही कारण है कि उपनिषद वेदान्त कहे जाते हैं । ऐसा माना जाता है कि वेद की जितनी शाखाएँ थीं उतनी ही संहिताएँ ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद थे । वेदों की कुल 1180 शाखाएँ थीं अतः उतने ही उपनिषद भी होने चाहिए किन्तु अब संहिता ब्राह्मणों के साथ-साथ कुछ उपनिषद भी लुप्त हो गये हैं ।

अड़ियार पुस्तकालय मद्रास में 179 उपनिषदों को संग्रहित किया गया है । इसी पुस्तकालय से ए. महादेव शास्त्री द्वारा सम्पादित 20 योगोपनिषद का संग्रह निकला है । योगोपनिषद अर्वाचीन है । इन्हीं के बाद योग विषय ग्रंथ हठयोग प्रदीपिका, गोरक्ष पद्धति शिवसंहिता आदि बने हुए हैं । निम्नलिखित 20 उपनिषदों के नाम ब्रह्मयोगी कृत टीका सहित दिये हुए हैं -

- | | | |
|-----|-------------------------|----------|
| 1. | अद्वयतारकोपनिषत् | (शु.य.) |
| 2. | अमृतनादोपनिषत् | (कृ.य.) |
| 3. | अमृतबिन्दूपनिषत् | (कृ.य.) |
| 4. | क्षुरिकोपनिषत् | (कृ.य.) |
| 5. | तैजोबिन्दूपनिषत् | (कृ.य.) |
| 6. | त्रिशिरवब्राम्हणोपनिषत् | (शु.य.) |
| 7. | दर्शनोपनिषत् | (सा.वे.) |
| 8. | ध्यानबिन्दूपनिषत् | (कृ.य.) |
| 9. | नादबिन्दूपनिषत् | (ऋ.वे.) |
| 10. | पाशुपतब्राम्होपनिषत् | (अ.वे.) |
| 11. | ब्रम्हविद्योपनिषत् | (कृ.य.) |
| 12. | मण्डलब्राम्हणोपनिषत् | (शु.य.) |
| 13. | महावाक्योपनिषत् | (अ.वे.) |
| 14. | योगकुण्डल्युपनिषत् | (कृ.य.) |
| 15. | योगचूडामण्युपनिषत् | (सा.वे.) |
| 16. | योग तत्वोपनिषत् | (कृ.य.) |
| 17. | योगशिखोपनिषत् | (कृ.य.) |
| 18. | बराहोपनिषत् | (कृ.य.) |
| 19. | शाण्डिल्योपनिषत् | (अ.वे.) |
| 20. | हंसोपनिषत् | (शु.य.) |

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

इन उपनिषदों में योग के सभी विषय आ गये हैं। लगभग सभी उपनिषदों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से थोड़ा अथवा अधिक योग अवश्य ही आया है। उपनिषदों में योग को आध्यात्म योग कहा गया है। संहिता ब्राह्मणों में भी योग का वर्णन किया गया है।

उपनिषद हमारे मोक्ष शास्त्र के परम आधार है। मोक्ष अतीन्द्रिय ज्ञान के बिना उपहासारूप है। अतीन्द्रिय ज्ञान, बिना योग के साध्य नहीं है। योग का इतना भारी किला इसी औपनिषदिक योग की नींव पर खड़ा है।

उपनिषदों में प्राणोपासना अनेक भावनाओं के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार से कही गयी है। प्राचीन तथा अर्वाचीन सभी उपनिषद मोक्ष के दो उपाय बताते हैं - मनोजय तथा प्राणजय हो जाने से मनोजय अनायास सिद्ध हो जाता है। यही कारण है कि योग में प्राणजय पर इतना जोर दिया जाता है। प्राणजय प्राणायाम द्वारा होता है।

योग शिखोपनिषद में योग मार्ग का बहुत ही सुन्दर स्पष्टीकरण किया गया है। आरम्भ में हिरण्यगर्भ का श्री महेश्वर से यही प्रश्न है कि हे शंकर! इस दुखमय संसार में सब जीव पड़े हैं और अपने कर्मों का सुख दुखात्मक फल भोग रहे हैं। इनकी मुक्ति किस सुगम उपाय से हो, यह कृपया बताइये? इसका श्री शंकर जी ने यही उत्तर दिया है कि कर्मबंध से मुक्त होने का उपाय कोई ज्ञान और कोई योग कहते हैं परन्तु मेरा मत तो यह है कि योग हीन ज्ञान और ज्ञानहीन योग कभी भी मोक्ष प्रद नहीं होता। इसलिए ज्ञान और योग इन दोनों का ही मुमुक्षु को दृढ़ता के साथ अभ्यास करना चाहिए।²⁹ इससे यही सिद्ध हुआ कि बन्धनिवृत्ति के लिए साध्य साधन भाव से योग और ज्ञान इन दोनों को स्वीकार करना चाहिए।

योग शिखोपनिषद में कहा गया है कि- इस योग शिखा को जो महामति साधक जानता है उसको तीनों लोक में कुछ भी अज्ञात नहीं रहता।³⁰ इस प्रकार योग के रहस्यों को जानने वाला सर्वज्ञ हो सकता है।

वृहदारण्यकोपनिषद में योग का विशद वर्णन है - वहां लिखा है कि इस प्रकार जानने वाला इन्द्रियों और मन का संयम करके उपरामवृत्ति धारणकर तितिक्षु होकर समाधि परायण होकर अपने अंदर आत्मा को देखता है।³¹

कैवल्योपनिषद में वर्णन है - एकांत देश में शुचि होकर सुखासन से बैठ गर्दन, सिर और शरीर सम करें।³²

गर्भोपनिषद में कहा गया है - यदि योनि से मैं मुक्त होऊँ तो सांख्य योग का अभ्यास करूँ । ³³

मैत्रायणी श्रुति में समाधि से मन जिसका निः शेष हो गया है उस चित्त को आत्मा में निवेशित होने पर जो सुख मिलता है उसका वर्णन करना कठिन है । ³⁴

वृहज्जावाल : मैं वर्णन है कि- जो योगानुष्ठान के द्वारा शक्ति की अमृत वर्षा से स्वयं को चारों ओर से प्लावित कर देता है वह प्रकृति के अधिकार से मुक्त हो जाता है । ³⁵

ज्ञान और योग ये शब्द भगवत्प्राप्ति के चरम साधन हैं अतः इनका उल्लेख मोक्ष साधन के लिए भी उपनिषदों में किया गया है । योगोपनिषद के अतिरिक्त अन्य उपनिषदों में भी योग का बहुत सूक्ष्म विवेचन है । श्वेताश्वतरोपनिषद के द्वितीयाध्याय में योग के विषय में कहा गया है कि- प्राणों का आयाम करके खूब तत्परता के साथ शुद्ध प्राणवायु हो जाने पर नासिका से उच्छवास ले । जैसे सारथि दुष्ट घोड़ों की लगाम को खींच कर उनका नियंत्रण करता है वैसे ही योगी को अप्रमत्त होकर मन का निग्रह करना चाहिए । ³⁶

इसी प्रकार कठोपनिषद में यमराज ने ऋषिकुमार नचिकेता को उपदेश देते हुए योग से अमृतपद की प्राप्ति सहज है, यह बात कही है । ³⁷

मुण्डकोपनिषद में योग के महत्व का वर्णन करते हुए कहा है - हे धीर युक्तात्मा (योगी) सर्वत्र सर्वव्यापी ब्रह्म को पाकर उस सर्व में ही प्रवेश करो । वेदान्त विज्ञान का अर्थ (परमात्मा) जिनके चित्त में सुनिश्चित हो चुका है, जो सन्यास योग से यत्नवान और शुद्ध सत्त्व हो गये हैं वे सब ब्रह्म लोक में परमामृत होकर मुक्त होते हैं । ³⁸

इस प्रकार समस्त उपनिषदों में किसी न किसी रूप से योग का समर्थन करते हुए उसे उपादेय बताया गया है । ऐसा कोई मार्ग मोक्षसाधन का नहीं है जिस मार्ग में योगांगों की आवश्यकता न पड़ती हो । इसलिए कहा जा सकता है कि जिस प्रकार दूध में घृत समाया हुआ है, माता के उपदेशों में बालक का हित भरा हुआ है, उसी प्रकार उपनिषदों में योग समाया है ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

1.6 गीता में योग :-

गीता का प्रतिपाद्य विषय योग है । इसमें संदेह नहीं है कि गीता का अभिप्राय योग की शिक्षा देना है अतः गीता को योग का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ तथा उपनिषदों का भी उपनिषद कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी । गीता के प्रारंभ से अंत तक सभी अध्यायों का नाम योग विशेष है तथा भगवान श्री कृष्ण को योगेश्वर कहा गया है ।

गीता के लगभग 700 श्लोकों में योग, योगी, युक्तः, योगरूढ, युञ्जन, युञ्जीत, योगयज्ञा, योगसेवया इत्यादि युज् धातु से बने शब्द और उनके साथ समस्त पद एक सौ अठारह बार आये हैं । आत्म अहं, बुद्धि, योग - ये ही चार शब्द और इनके प्रकार-विकार सबसे अधिक बार गीता में कहे गये हैं ।

भगवद्गीता के चतुर्थ अध्याय में (4/1-3) भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को सूचित करते हैं कि भगवद् गीता की यह योग पद्धति सर्वप्रथम मैंने सूर्यदेव को बताई थी, सूर्य-देव ने इसे मनु को बताया और मनु ने इसे इक्ष्वाकु को बताया । इस प्रकार गुरु परम्परा द्वारा यह योग-पद्धति एक वक्ता से दूसरे वक्ता तक पहुंचती रही । लेकिन कालक्रम में यह परम्परा लुप्त हो गई । वही प्राचीन योग अर्थात् परमेश्वर के साथ आत्मा के संबंध का विज्ञान मेरे द्वारा अब पुनः तुमसे कहा जा रहा है, क्योंकि तुम मेरे भक्त तथा मित्र हो, अतः तुम इस विज्ञान के दिव्य रहस्य को समझ सकते हो । ³⁹

भगवद् गीता का प्रयोजन मनुष्य को भौतिक संसार के अज्ञान से उबारना है । प्रत्येक व्यक्ति अनेक प्रकार की कठिनाइयों में फँसा रहता है, जिस प्रकार अर्जुन भी कुरुक्षेत्र में युद्ध करने के लिए कठिनाई का अनुभव कर रहा था । अर्जुन ने श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण कर ली फलस्वरूप इस भगवद्गीता का प्रवचन हुआ । स्वयं भगवान कृष्ण ने योग को अनेक रूपों में परिभाषित किया है - ⁴⁰

जीव का परमात्मा के साथ अपना अभेद संबंध सर्वथा अनुभव करते रहना और इसके कारण सब जीवों के साथ आत्मवत् सर्वभूतेषु व्यवहार करना यही परमयोग, जीवात्मा परमात्मा का अभेदात्मक संयोग और भेदभाव जनित दुखों का वियोग है । यहां योग शब्द का प्रयोग योग से साधनीय अवस्था के अर्थ में किया गया है । योग तो साधन है । योगसूत्र, योग-भाष्य के सिद्धान्त भी इस निष्कर्ष के अनुकूल हैं -

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

द्योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः । तदाद्रष्टुः स्वरूपे अवस्थानम् ।

चित्त की वृत्तियों का भेदानुभवात्मक स्वच्छन्द प्रवृत्तियों का निरोध हो जाय तो द्रष्टा पुरुष, जीवात्मा, अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है ।

आत्मा अनन्त, सनातन मुक्त स्वभाव और आनन्द स्वरूप है। इसी दिव्य प्रतिज्ञा के साथ गीता आरम्भ होती है, और तब देहधारी जीवों की दो प्रकार की जीवनधारायें हैं - एक संसृति से संसृति की ओर ले जाने वाली निम्न धारा और दूसरी संसार के पार ले जाने वाली ऊर्ध्वगामिनी धारा जिसके कारण गुणों का और फिर गुणों के कारण मूल स्वरूप और अविद्या का विचार होता है ।

छठवें अध्याय के 23 वें श्लोक में परम योगेश्वर श्रीकृष्ण ने योग का सूक्ष्मातिसूक्ष्म सार दिया है - हमारे देहयुक्त जीवन में दुख का संयोग होता है, इसका जो वियोग है वही योग है । दुख के संयोग के वियोग का नाम ही योग है । ⁴¹

उसी योग में आत्मा अपनी दिव्यता के साथ स्थित होता है । भगवान् उस स्थिति का वर्णन इस प्रकार करते हैं - वह अनुभूति अवर्णनीय है । उस आनन्दमयी स्थिति में वह दिव्य इन्द्रियों द्वारा असीम दिव्य सुख में स्थित रहता है । इस प्रकार स्थापित मनुष्य कभी सत्य से विपथ नहीं होता और इस सुख की प्राप्ति हो जाने पर वह इससे बड़ा कोई दूसरा लाभ नहीं मानता । ऐसी स्थिति को पाकर मनुष्य बड़ी से बड़ी कठिनाई में भी विचलित नहीं होता । यह निस्संदेह संसर्ग से उत्पन्न होने वाले समस्त दुखों से वास्तविक मुक्ति है । ⁴²

इससे यह मालूम होता है कि गीता का योगमार्ग आत्म मिलन, आत्मानुभव और आत्मरति का मार्ग है और ये सम्पूर्ण मार्ग एक ही हैं और वह आनन्द का मार्ग है । स्वरूपेऽवस्थानम् (आत्म स्वरूप में स्थित) होना अनुभव व आनन्द की पराकाष्ठा है। गीता का यह वचन है कि कर्म योग मार्ग में भी शांति और आनन्द की प्राप्ति है - जो व्यक्ति इन्द्रिय तृप्ति की समस्त इच्छाओं से रहित रहता है और जिसने सारी ममता त्याग दी है तथा अहंकार से रहित है, वही वास्तविक शांति को प्राप्त कर सकता है । ⁴³

कर्मयोग का विवेचन करते हुए श्रीकृष्ण ने इस शब्द के दो और अर्थ प्रकट किये हैं । एक है- समत्वं योग उच्यते, अर्थात् सिद्धि असिद्धि में सम रहना योग है ; दूसरा योगः कर्मसु कौशलम्-कर्म में जो कौशल है वह योग

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

है। यह कौशल कर्म मोक्ष दायक कर्म है और कर्म ज्ञान बन जाता है। कर्म योग चित्त शुद्धि का साधन है।

भगवान श्री कृष्ण के कर्म योग में पातंजलि योगदर्शन के वे यम नियम सांगोपांग आ जाते हैं जिनसे चित्त प्रसादन होता है। यम नियम से यह कर्म योग अधिक व्यापक है और फिर इसमें यह विशेषता है कि इसमें ईश्वरार्पण बुद्धि है जो योग सूत्रों में नहीं है। श्रीकृष्ण ऐसे पुरुष को योगी कहते हैं जो तपस्वियों, ज्ञानियों और कर्मियों से श्रेष्ठ है और इसीलिए अर्जुन को वे उपदेश देते हैं कि तस्माद्योगी भवार्जुन। (6/46)

कर्म अभ्यास योग नामक छठे अध्याय में श्रीकृष्ण ने इस योग के मूल मंत्र को 29,30,31 वें श्लोक में इस प्रकार बतलाया है कि योग में स्थित साधक अनन्त चेतन को सब भूतों में व्याप्त और सब भूतों को उस अनन्त चेतन में व्याप्त देखता है और सर्वत्र एकत्व की दृष्टि रखता है। भगवान कहते हैं कि जो मुझ परमात्मा को सब में व्याप्त और सबको मुझमें व्याप्त देखता है वह न मुझसे अदृश्य है और न मैं उसके लिए अदृश्य हूँ। जो सब भूतों में व्याप्त मुझ एक को ही इस प्रकार सर्वत्र वर्तमान जानकर मेरा भजन अर्थात् सेवा करता है, वह व्यवहार में रहकर भी योगी है।⁴⁴

भगवद्गीता की विषय वस्तु ईश्वर तथा जीव से संबंधित है। जिस प्रकार समुद्र के जल की हर बूंद खारी होती है, इसी प्रकार जीव भी परम नियन्ता ईश्वर या भगवान के अंश होने के कारण सूक्ष्म मात्रा में परमेश्वर के सभी गुणों से युक्त होता है। ईश्वर क्षेत्रज्ञ या चेतन है जैसा कि जीव भी है, लेकिन जीव केवल अपने शरीर के प्रति सचेत रहता है किन्तु भगवान समस्त शरीरों के प्रति सचेत रहते हैं।

विभिन्न धर्मों में योग

1.7 बौद्ध धर्म में योग -

साधारण बोलचाल में योग शब्द का अर्थ मेल अथवा संबंध जोड़ना है। पारिभाषिक भाषा में जीव का ईश्वर के साथ संबंध स्थापित करना ही योग है। बौद्ध धर्म में बोधिचित्त और शून्य शब्द व्यवहृत हुए हैं। बौद्ध शास्त्र में बोधिचित्त एक प्रकार से जीवात्मा अथवा व्यक्ति चेतना का बोधक है और शून्य परमात्मा अथवा समष्टि चेतन का पर्याय है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

भगवान बुद्ध के जीवन-काल में योग का प्रभाव चारों ओर फैल चुका था । भगवान बुद्ध घर छोड़कर बोधगया के निर्जन वन में जाते हैं और वहां समाधि का अभ्यास करते हुए शरीर को इस प्रकार कसते हैं कि उनका आहार घटते-घटते चावल के एक दाने पर पहुंच जाता है ।

बुद्ध ने अपने युग के सभी प्रसिद्ध तार्किकों एवं दार्शनिकों के सामने अपनी शंकायें रखी किन्तु किसी के उत्तरों से उनका समाधान नहीं हुआ । उन्हें तो आत्म-निरीक्षण एवं तपश्चर्या से ही सिद्धि प्राप्त हुई और इसी का उन्होंने उपदेश दिया । उस समय के इतिहास से यह पता चलता है कि भगवान बुद्ध के कतिपय शिष्यों ने उन्हीं साधनों का सम्यक् प्रकार से अनुष्ठान कर अनेक सिद्धियां प्राप्त कीं जिनसे उनके जीवन काल में ही उनकी ख्याति चारों ओर फैल गई थी ।

बौद्ध धर्म ने योग के सिद्धांतों को चुपचाप ग्रहण कर लिया । बौद्धों का एक दल ऐसा था जो छिपकर राजयोग एवं हठयोग दोनों प्रकार के योगों की साधना किया करता था और उन लोगों ने अपने सामूहिक अनुभवों की सहायता से उन साधनों को शास्त्र का रूप देकर एक ऐसी पद्धति का निर्माण किया जो पातञ्जल योग पद्धति से बहुत कुछ मिलती है । राजयोग और हठयोग की मूलभित्ति पर तंत्रों का निर्माण हुआ और तंत्रों की सहायता से यह शास्त्र सर्वांगपूर्ण बन गया ।

बौद्धों की योग संबंधी साधनाओं एवं क्रियाओं का स्पष्ट दिग्दर्शन हमें पहले पहल गुह्य समाज नामक तंत्र से मिलता है । इस ग्रंथ का 18 वां अध्याय इस दृष्टि से बड़े महत्व का है । उससे हमें बौद्ध धर्म में प्रचलित योग साधनों का तथा उनके उद्देश्य एवं प्रयोजन का वास्तविक परिचय मिलता है ।

इस अध्याय में केवल उन पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या की गयी है जिनका बौद्धतंत्रों में बहुत अधिक प्रयोग हुआ है

उत्तम सेवा का स्वरूप बताते हुए गुह्यसमाजकार कहते हैं कि इस सेवा में सिद्धि प्राप्त करने के लिए षडंगों का साधन करना चाहिए । योग में इन छः अंगों के नाम उसी ग्रंथ में इस प्रकार उल्लिखित हैं -

- | | | |
|----------------|------------------|---------------|
| (1) प्रत्याहार | (2) ध्यान | (3) प्राणायाम |
| (4) धारणा | (5) अनुस्मृति और | (6) समाधि |

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्रत्याहार उस क्रिया का नाम है जिसके द्वारा इन्द्रियों का निग्रह किया जाता है । पांच ध्यानी बुद्धों के द्वारा पांच इष्ट विषयों पर मन को स्थिर करने का नाम ध्यान है । गुहसमाज के अनुसार प्राण वायु के निरोध का नाम ही प्राणायाम है और इस प्राणवायु को पंचभूतात्मक अथवा पंचविध ज्ञान का स्वरूप माना गया है । चौथे अंग का नाम धारणा है जिसमें उपासक को अपने इष्ट मंत्र का हृदय कमल में ध्यान करना होता है । अनुस्मृति उस पदार्थ के अनवच्छिन्न ध्यान को कहते हैं जिसके निमित्त योग साधना का प्रारम्भ किया गया है।

गुहसमाज तंत्र में आगे उपसाधनों की व्याख्या की गई है जिसमें कहा गया है कि उपसाधनों का अभ्यास लगातार 6 महीने तक करने से देवता का साक्षात्कार होता है, यदि न हो तो उसी अनुष्ठान को तीन बार करें यदि इस पर भी न हो और उसे बोधि लाभ न हो तब उसे अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए हठयोग का अभ्यास प्रारम्भ कर देना चाहिए । अर्थात् देवता के साक्षात्कार का अंतिम उपाय हठयोग को बताया गया है । इससे यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि तांत्रिक उपसाधन का आधार हठयोग है और उत्तम सेवा का आलम्बन राजयोग है ।

गुहसमाज में इस बात को स्पष्ट कर दिया गया है कि तांत्रिक साधना करने के लिए यह आवश्यक कि साधक पहले राजयोग और हठयोग में निष्णात हो जाय ।

बौद्ध योग के परिशीलन के लिए आजीवन अध्ययन करने की आवश्यकता है क्योंकि वह समुद्र की भांति अगाध है ।

बौद्ध धर्म में निर्वाण अथवा मोक्ष के तीन मार्ग बतलाये गये हैं । जो केवल स्वयं मुक्त होना चाहता है वह अर्हत कहलाता है । जो कुछ और लोगों की मुक्ति के लिए भी परिश्रम करता है वह बुद्ध कहलाता है और जो जगत के मोक्ष की चेष्टा करते हुए निर्वाणपद प्राप्त करता है वह बोधिसत्वयान कहलाता है ।

वैशाख पूर्णिमा को तिब्बत में बुद्धोत्सव मनाया जाता है इसी तिथि को महात्मा बुद्ध का जन्म हुआ था और इसी को निर्वाण ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

1.8 जैन धर्म में योग :-

भारत में वैदिक, बौद्ध और जैन मुख्य दर्शन हैं। ये तीनों आत्मा, पाप-पुण्य, परलोक और मोक्ष इन तत्वों को मानते हैं जैनाचार्य योग के विषय में कहते हैं -

मोक्षेण योजनादेव योगो ह्यत्र निरुच्यते !

(श्रीयशोविजय कृता द्वात्रिंशिका 10/1)

मुख्येण ज्ञानाओ जोगो

(श्री हरिभद्रसूरिकृता योगविंशका !)

अर्थात् जिन जिन साधनों से आत्मा की शुद्धि और मोक्ष का योग होता है उन सब साधनों को योग कह सकते हैं। पातंजल योगदर्शन में योग के लक्षण योगश्चित्तवृत्ति निरोधः कहा है। इसी लक्षण को उपाध्याय यशोविजय जी ने इस प्रकार और भी विशद किया है -

समितिगुप्तिधारणं धर्म व्यापारत्वमेव योगत्वम् ।

(पातंजलयोग दर्शनवृत्ति)

यतः समिति गुप्तिनां प्रपञ्चो योग उत्तमः ।

(योगभेदद्वात्रिंशिका 30)

अर्थात् मन, वचन, शरीरादि को संयत करने वाला धर्म व्यापार ही योग है, क्योंकि वह आत्मा को उसके साध्य मोक्ष के साथ जोड़ता है।

जैन आगमों में योग का अर्थ मुख्य रूप से ध्यान लिखा है। ध्यान मूलतः चार प्रकार का है - (1) आर्त्ता (2) रौद्र (3) धर्म (4) शुक्ल इसमें आर्त्ता और रौद्र ध्यान तम और रजोगुण विशिष्ट होने के कारण योग के लिए अनुपयुक्त हैं। धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान योगोपयोगी हैं। इनमें भी शुक्ल ध्यान अत्यन्त परिशुद्ध और मोक्ष साधक है। इस विषय पर समाधि शतक, ध्यान शतक, ध्यान विचार, ध्यानदीपिका, आवश्यक निर्युक्ति, आध्यात्मकल्पद्रुमटीका आदि अनेक ग्रंथ हैं। किसी भी वस्तु की प्राप्ति के लिए उस पर अटल श्रद्धा होनी चाहिए। योग के लिए जो कुछ आवश्यक है उस पर तथा जो पूर्णयोगी है उस पर परीक्षापूर्वक श्रद्धा रखना योग का आवश्यक अंग है। इसको जैन दर्शन में सम्यग्दर्शन कहते हैं। केवल विश्वास रखकर बैठे रहने से कुछ नहीं होता। विश्वास के साथ सम्प्रदाय का रहस्य ज्ञान भी होना चाहिए

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

साथ ही चरित्र शुद्धि भी होना चाहिए। यह ज्ञान दर्शन चरित्रात्मक त्रिविध योग है इसके पालन से योग परिपुष्ट होता है और आत्मा का आध्यात्मिक उत्कर्ष होता जाता है। योग की पूर्णता ही मोक्षप्राप्ति कराती है। जनदर्शन में उपास्वातिकृत तत्त्वार्थाधिकमसूत्र त्रिविध योग के विषय में ही है। इस ग्रंथ को मोक्ष शास्त्र भी कहते हैं।

जब आत्मा विकास की दिशा में प्रयाण करती है तब से मोक्ष प्राप्त होने की अवस्था तक की योग्यता के चौदह गुण जैन आगमों में बताये गये हैं, जो इस प्रकार हैं -

- | | | |
|--------------------------------------|-----------------|---------------------|
| (1) मिथ्यात्व | (2) सास्वादन | (3) मिश्र |
| (4) सम्यग्दर्शन | (5) देशविरति | (6) प्रमत्तश्रमणत्व |
| (7) अप्रमत्तश्रमणत्व | (8) अपूर्वकरण | (9) अनिवृत्ति |
| (10) सूक्ष्म लोभ | (11) उपशान्तमोह | (12) क्षीणमोह |
| (13) सयोगी केवली और (14) अयोगी केवली | | |

उपशान्त मोह पांतजल योग की आठ भूमिकाओं में प्रथम भूमिका है। इस यम से भी पूर्व सूक्ष्मरीत्या योग की जो भूमिकाएं होती हैं वे भी इन चौदह गुणस्थानों में पूर्व के चार गुण स्थानों में परिगणित हुई हैं।

महर्षि पंतजलि योग दर्शन में योग के अंग, लक्षण, परिभाषा आदि कही हैं उन्हें अनेक धर्मों के विद्वानों ने अपनाया है। जैनाचार्यों ने भी अपनी संस्कृति के अनुकूल, योगसूत्रोक्त, नाम, भेद, स्वरूप आदि ग्रहण किये हैं इसे कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता।

यों तो आत्मा एक ही है, परन्तु जैन विद्वानों ने तीन प्रकार की आत्मा माना है। उनके लक्षण इस प्रकार हैं- शरीर धनादि बाह्य पदार्थों में मूढ़ होकर उन्हीं में जो आत्मबुद्धि धारण करता है वह रजस्तमोगुणी बहिरात्मा है। आत्मा में ही जो आत्मभाव धारण करता है और यम नियमादि को समझता और करता है वह अन्तरात्मा है। मोहादि कर्मफलों को सर्वथा धोकर जो मुक्तपद को प्राप्त होता है वह परमात्मा है। उसी परमपद को प्राप्त करने का साधन योग कहलाता है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

1.2 जरथोस्त धर्म में योग :-

ईश्वर प्राप्ति के लिए सभी धर्मों में तीन मार्ग दिखलाये गये हैं - ज्ञान, भक्ति और कर्म । इन तीनों मार्गों से मुक्ति मिलती है, ऐसा शास्त्रों का वचन है । जरथोस्ती धर्म में भी इन तीनों मार्गों का उल्लेख है ।

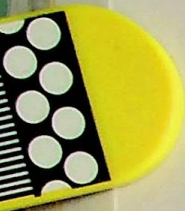
जरथोस्ती धार्मिक साहित्य लगभग समूल नष्ट हो चुका है । उसका थोड़ा बहुत साहित्य ही उपलब्ध है । सौभाग्यवश मूलस्थापक जगद्गुरु ऋषि जरथुस्त्र के मूल श्लोक अभी तक सुरक्षित है और वे ही इस धर्म की भित्ति स्वरूप माने जाते हैं । मूलश्लोक जरथुस्त्र की 'गाथा' के नाम से विख्यात है । 'अहुन वहति गाथा' नाम का मूल अहुन-वर (अहुन-वइर्य) शब्द है जो इस धर्म का मूल मंत्र माना जाता है और जिसके लिए इस शास्त्र में कहा गया है कि सृष्टि पैदा करने से पूर्व स्वयं ईश्वर ने इसका उच्चारण किया था और इसी से सृष्टि उत्पन्न हुई है !

1 0

जिस प्रकार ऋत् शब्द का वेद में प्रयोग हुआ है उसी प्रकार जरथोस्ती शास्त्रों में 'अष्' का प्रयोग हुआ है । यह अष् (ऋत्) जरथुस्त धर्म का मूल आधार है और इस ऋत् को जो समझता है उसे रतु (ऋषि) के नाम से जाना जाता है । यह ज्ञान मार्ग है रतु अर्थात् सम्पूर्ण ज्ञानप्राप्त पुरुष ।

भक्ति के बिना केवल ज्ञान मनुष्य को अहंकार के गड्ढे में ढकेल देता है । इसलिए उस अहंकार को जीतने के लिए प्रेम-भक्ति की आवश्यकता है । उस भक्ति का एक स्वरूप सम्पूर्ण कर्म ईश्वर के प्रति समर्पण करना है । उसी प्रकार अहुनवर में भी कहा गया है कि मनुष्य को 'जीवन के प्रभु का कार्य करने वाला' बनना चाहिए और ऐसा करने से 'वोहु-मनो' (अच्छा मन) का पुरस्कार उसे प्राप्त होता है वोहुमनो प्रेम-शक्ति प्रकट करता है और वह प्रेम केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं बल्कि सारे जीवों के लिए है ।

ज्ञान और भक्ति के दोनों साधनों से मनुष्य अपना जीवन सार्थक कर सकता है फिर भी पूर्ण मोक्ष तो उसे नहीं प्राप्त होता । पूर्ण मोक्ष की प्राप्ति के लिए ईश्वर (अहुरमजद) का सम्पूर्ण प्रभाव प्राप्त करना चाहिए । इसके लिए अहुरमजद का क्षत्र (क्षत्र) साधन करना चाहिए । यह साधन गरीब, लाचारों का रक्षक बनने से प्राप्त होती है । इसमें कर्म मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है और आज भी जरथोस्ती लोग (पारसी जाति) कर्म योग में आगे दिखाई देते हैं ।



...: इति श्री मेघ निरुपमाय ०.१

अथ ०३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः
... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः

... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः
... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः

... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः
... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः

... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः
... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः

... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः
... ३ इति निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः इति श्री मेघ निरुपमायः

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

इस प्रकार ईश्वर प्राप्ति के तीनों मार्ग-ज्ञान, भक्ति और कर्म का समानता पूर्वक साधन करने से ही मनुष्य मोक्ष का अधिकारी बनता है । ऐसी अहुनवर की शिक्षा है ।

1.10 ईसाई धर्म में योग :-

‘योग’ शब्द का प्रचलित अर्थ ईश्वर के साथ एकता प्राप्त करना ही नहीं है, अपितु उससे उन साधनों का भी बोध होता है जो उक्त ध्येय की प्राप्ति में ‘उपयोगी’ माने जाते हैं ।

ईश्वर के साथ एकता करने के कई अर्थ हो सकते हैं । कुछ लोगों के मत में एकता का अर्थ लीन हो जाना है अर्थात् वह अवस्था जिसमें अपना कोई भिन्नत्व नहीं रह जाता, वह उस परमात्मा का ही एक अंग बनकर उसी में लीन हो जाता है । इसे हम एकता की पराकाष्ठा कह सकते हैं । कुछ लोग एकता का अर्थ परमात्मा के साथ एक मन हो जाने को मानते हैं ।

वास्तव में एकता का अर्थ है - परमात्मा के प्रति इस प्रकार प्रेमपूर्वक आत्मसमर्पण करना कि जिससे हमारा चित्त उनकी दिव्य ज्योति से जगमगा उठे, हम हृदय से वही चाहें जो उन्हें प्रिय हो और प्रति दिन, प्रतिक्षण अपना आचरण एवं व्यवहार ऐसा प्रशस्त करने की चेष्टा करें जिससे मनुष्य के साथ मनुष्य का व्यवहार होना चाहिए, इसका ईश्वरीय आदर्श हमारे सामने मूर्तिमान होकर खड़ा हो जाय ।

बाइबिल में एकता का जो वर्णन मिलता है उसका अर्थ है परमात्मा की इच्छा को जीवन का संचालक एवं पथ प्रदर्शक मानना, अपने आपको ईश्वर के मन से मिला देना और मन में इस बात का निश्चय रखना कि मनुष्य का परम ध्येय यही है और उसी में आनन्दित होना ।

बाइबिल में प्रभु का जो जीवन वृत्तान्त तथा उपदेशों का संग्रह है उसमें ऐसी किसी बात का उल्लेख नहीं है जिसका योगसंबंधी साधनाओं से विरोध हो, उपदेश कार्य आरम्भ करते समय ईसामसीह ने चालीस दिन का उपवास किया था, ऐसा वर्णन मिलता है । प्रभु कभी-कभी एकान्त में बैठकर प्रार्थना तथा ध्यान के लिए समय निकाला करते थे, परन्तु साधारण तौर पर ईसा मसीह के जीवन तथा उनके उपदेशों में योग की आवश्यकता का एक भी प्रमाण नहीं मिलता । प्रभु की दृष्टि में ध्यान कोई बाह्य साधन नहीं है अपितु मन की

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वृत्तियों को अनवरत रूप नाम है जो भगवान की ओर लगाने के काम में सहायक होता है ।

प्रार्थना, निर्भरता, वश्यता, ईश्वर एवं मनुष्य मात्र के प्रति प्रेम ये ही योगसाधनाएं हैं जिन्हें ईसामसीह ने आवश्यक माना है । ईसाइयों ने जिन-जिन योग साधनाओं का अभ्यास किया है उनमें उपवासादि कठोर व्रतचर्याओं को बहुत उपयोगी माना गया है ।

ईसाइयों को बराबर इस बात की चेतावनी दी जाती है कि वे भोगविलास की ओर अग्रसर न हों, इन्द्रियों के दास न बनें । उन्हें यह भी शिक्षा दी जाती है कि वे अपनी सम्पत्ति और अपनी सारी शक्तियों को परमात्मा को सौंपी हुई पवित्र धरोहर समझें, उनका विवेकपूर्वक उपयोग करें और उदारतापूर्वक उनका दूसरों को भी उपयोग करने दें ।

रोमन कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेण्ट दोनों मतों के अनेक अनुयायी उपवास को बहुत अधिक उपयोगी मानते हैं । वे यह समझते हैं कि ऐसे समय में जब भौतिक सुखों की आत्मा पर विजय होती दिखती है उपवास से मनुष्य को बड़ा साहस और बल मिलता है, साथ ही उपवास जीवन में आत्मा के प्रभुत्व का द्योतक है और इस बात को भी सूचित करता है कि हम भौतिक जगत् के आधिपत्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं ।

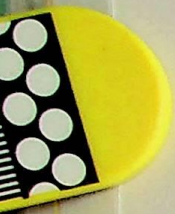
ईसाई धर्म का क्षेत्र बहुत व्यापक है । इस धर्म में सबसे मुख्य बात यह है कि ईश्वर के संबंध में क्रमशः अधिकाधिक जानना और जानकर उनसे प्रीति करना, उन पर भरोसा करना और उनकी इच्छा के अनुकूल आचरण करना ।

ईश्वर को जानने का उपाय है ईसामसीह की शरण में आना और उन्हीं को एकमात्र गति मानना और प्रार्थना, निर्भरता और वश्यता के द्वारा जीवन की पूर्णता को प्राप्त करना ।

योग का स्वरूप-विश्लेषण

1.11.1 चित्तवृत्ति :-

ज्ञान चेतना का एक स्वरूप है, हमें जितने भी अनुभव होते हैं वे विभिन्न माध्यमों से व्यक्तिगत चेतना द्वारा होते हैं । चेतना जब मन बुद्धि, इन्द्रियों



... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..

... ..

... ..

... ..
... ..
... ..

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अथवा शरीर के माध्यम से सक्रिय होती है तो व्यक्तिगत चेतना कहलाती है, जब वह सभी ओर से खींचकर बिना किसी माध्यम के कार्यरत होती है तो दिव्य चेतना या विश्व चेतना के नाम से जानी जाती है ।

यह सम्पूर्ण जगत चेतना की ही अभिव्यक्ति है जो हर देश, काल, परिस्थिति में अनवरत रूप से अस्तित्व में रहती है । योगी निश्चित रूप से चेतना की अनवरतता से वैदिक काल में भी परिचित थे । वे यह जान चुके थे कि प्रत्येक जीव में वह सब कुछ विद्यमान है जो बिना किसी माध्यम के भी रह सकता है । उन्होंने विभिन्न साधनाओं द्वारा उस अवस्था को विकसित करने और स्वतंत्र बनाये रखने का प्रयास किया ।

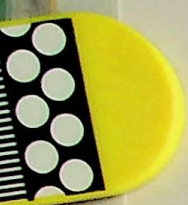
उन योगियों के अथक प्रयासों का फल ही योग है जो हमें आत्म नियंत्रण, आत्मानुशासन, सफलता, निष्ठा व सर्वोच्च उपलब्धि का मार्ग प्रशस्त करता है।

योग मिलन व मिश्रण की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति की निम्न चेतना का उसकी उच्च व शक्तिशाली चेतना से संयोग होता है । ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मनुष्य में महान शक्ति, ज्ञान, समझ और अनुभव उसी आत्मा के अभिन्न अंश के रूप में विद्यमान है । मनुष्य ने अपनी सजगता व चेतन मस्तिष्क द्वारा कितने ही आश्चर्यजनक अविष्कार किये हैं परन्तु यदि वह अपने अवचेतन व अचेतन मस्तिष्क पर भी नियंत्रण कर ले तो वह कितने ही महान कार्य करने की सामर्थ्य प्राप्त कर सकता है ।

देहधारी जहां तक प्राणी है उसके भीतर सार तत्व है चेतना । किन्तु मनुष्य अपने विवेक व बुद्धि के कारण समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ है । यह अखिल ब्रह्माण्ड जड़ व चेतन इन दो अनादि सत्ताओं के योग से बना है । पांचो ज्ञानेन्द्रियों से दृश्यमान जगत् जड़ से अलग है । यदि हम अपने आप को जड़ जगत से मुक्त कर लें तो जड़ जगत से संबंध जनित क्लेशों से मुक्त हो सकते हैं इसलिए महर्षि पतंजलि कहते हैं -

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है ।

चित्त शब्द की व्युत्पत्ति चित् धातु से हुई है जिसका अर्थ सचेत होने से है । अस्तु चित्त का तात्पर्य व्यक्ति चेतना से है जिसके अन्तर्गत चेतना के चेतन, अवचेतन, अचेतन तल शामिल हैं । व्यक्ति चेतना के उपर्युक्त तीनों तलों



...
...
...
...

...
...
...
...
...

...
...

...
...
...
...
...
...
...

...
...
...
...
...
...
...

...
...

...
...
...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

की समग्रता की अभिव्यक्ति को चित्त कहते हैं। चेतना के उपर्युक्त तीन आयामों को चित्त तथा उसके चतुर्थ आयाम को आत्मा कहा गया है।

आत्मा का यह विशिष्ट लक्षण है कि वह प्रकाश स्वरूप है। उसके बिना समस्त ज्ञान अंधकारित है। जब तक ज्ञान केवल सीमित आकार व गति के रूप में ही रहता है तब तक वह द्रव्य के समान ही है। किन्तु एक अन्य तत्व भी है जो ज्ञान के इन रूपों में चेतना डालता है जिसके कारण वे चेतन हो जाते हैं यह तत्व ही चित्त है। “चित्त का अस्तित्व हमारे ज्ञान के समस्त स्वरूपों व प्रकारों में स्पष्ट संकेतित होता है”⁴⁵ ज्ञान की प्रत्येक इकाई चूंकि वह एक बिम्ब है एक प्रकार से सूक्ष्म ज्ञानात्मक पदार्थ है जो चित्त तत्व द्वारा आलोकित होता है अतः हम कह सकते हैं कि ज्ञान की प्रत्येक इकाई चित्त की अभिव्यक्ति है क्योंकि ज्ञान शुद्ध जागृति है, शुद्ध चेतना है, शुद्ध चित्त है।

बहुधा योग में बुद्धि को जिसमें अहंकार और इन्द्रियां सम्मिलित हैं, चित्त कहा जाता है। वह दीपक की लौ के समान सदा परिवर्तनमान रहती है। चित्तवृत्ति शुद्ध सत्व प्रधान तत्वों से बनी है और अपने आपको एक स्वरूप से दूसरे स्वरूप में परिवर्तित करती रहती है और उसके इस व्यापार के कारण ही शरीर में जीवन रहता है।

इस प्रकार चित्त शब्द का अभिप्राय समग्र चेतना से है जो हमारे शरीर के भीतर व बाहर व्याप्त है। चित्त के द्वारा न केवल प्रत्यक्ष व जीवन के व्यापारों का संचालन ही होता है, बल्कि वह अपने आप में संस्कारों व पूर्व जन्म की वासनाओं को पिरोये रखता है।⁴⁶

जिस प्रकार जाल में अनेक गांठे होती हैं, उसी प्रकार चित्त में वासनायें गुथी रहती हैं। उचित वातावरण और प्रेरणा पाकर कभी भी ये संस्कार अनायास ही जागृत हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त चित्त में चेष्टा भी विद्यमान रहती है जिसके कारण इन्द्रियां अपने विषयभूत बाह्य पदार्थों के सम्पर्क में आ पाती हैं। इस प्रकार चित्त का एक महत्वपूर्ण लक्षण स्पष्ट होता है वह यह कि कभी वह अच्छी दिशा में (मुक्ति) और कभी बुरी दिशा में (संसार) में ले जाती है अर्थात् कभी बंधनों को खोलने वाली और कभी बंधन देने वाली, दोनों प्रकार की है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

व्यास भाष्य के अनुसार चित्त एक ऐसी नदी है जो दोनों ओर बहती है जब वह अन्तर्मुख होकर बहती है तो कल्याणवहा कहलाती है अर्थात् कल्याण की तरफ बहने वाली जो कैवल्य के अभिमुख होकर विवेक विषय की तरफ ढलती है तथा जो विषय भोग के लिए बहिर्मुख होकर अविवेक विषय की तरफ ढलती हुई भोगों तक बहा करती है वह पापवहा है । ⁴⁷

जीव स्वभावतः प्रयत्नशील है इसलिए दोनों वृत्तियों में से एक सदैव सक्रिय रहती है । यह सारा दृश्य जगत त्रिगुणात्मक है - सत्व, रजस्, और तमस् । सत्व का स्वभाव प्रकाश है, रजस् का क्रिया और तमस् का स्वभाव स्थिति या रोकना है । हमारे सभी कार्य, विचार, और धारणायें इन गुणों द्वारा नियंत्रित व संचालित होते हैं । इनके घात-प्रतिघात से हमारा चित्त प्रभावित होता है । कोई भी गुण अकेला, व्यक्तित्व को प्रभावित नहीं कर सकता । तीनों गुण एक दूसरे के परस्पर विरोधी होते हुए भी एक दूसरे के अनुकूल कार्य करते हैं । ये गुण अपने स्वरूप से ही परिणाम स्वभाव वाले हैं । चित्त में ही सुख, दुख सत्व, रजस् तथा तमस के परिणाम होते हैं । गुणों के कारण चित्त की अवस्थाओं में परिवर्तन होता है जिसका विवरण निम्न तालिका में प्रदर्शित है -

चित्त की पांच अवस्थायें

क्र.	नाम	अवस्था	गुण का परिणाम	गुण की वृत्ति	वृत्ति का स्वरूप	प्रवृत्ति
1.	मूढ़	अवस्था	तमप्रधान, रज, सत्व, गौण	निद्रा तन्द्रा, भय, मोह, आलस्य	अस्वभाविक	अज्ञान, अधर्म राग, अनैश्वर्य
2.	क्षिप्त	अवस्था	रजप्रधान तम, सत्व गौण	दुख, चंचलता चिन्ता, शोक संसार के कामों में प्रवृत्ति	अस्वभाविक	अज्ञान, अधर्म अनैश्वर्य राग
3.	विक्षिप्त	अवस्था	सत्वप्रधान रज, तम, गौण	सुख, प्रसन्नता क्षमा, श्रद्धा	अस्वभाविक	ज्ञान, धर्म वैराग्य, ऐश्वर्य
4.	एकाग्र	अवस्था	सत्वप्रधान, रज, तम वृत्ति मात्र	तटस्थता	स्वभाविक	वस्तु का यथार्थ ज्ञान

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

5.	निरुद्ध गुणों का बाहर स्वरूप स्थिति	चित्त की	द्रष्टा की
	अवस्था से चित्तसत्त्व में	स्वरूप-	स्वरूप
	निरोध, परिणाम	प्रतिष्ठा	स्थिति का भाव
	संस्कार शेष	स्वभाविक	
		और	
		अस्वाभाविक	
		वृत्तियां	

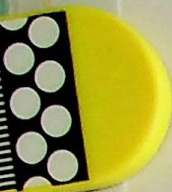
उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि जब सतोगुण की प्रधानता होती है मन अपेक्षाकृत शांत रहता है, वृत्तियां थमी रहती हैं। जब तमोगुण की प्रधानता होती है, व्यक्ति किसी भी तरह सक्रिय नहीं रह पाता। मन सुस्त व निष्क्रिय रहता है। इसी प्रकार रजोगुण की अवस्था में मन सक्रिय व बिखरा रहता है। किसी खास समय में किस गुण विशेष की प्रधानता है यह जानना इसलिए आवश्यक है, जिससे कि उनके निषेधात्मक प्रभावों को मिटाने का प्रयास किया जा सके।

इस प्रकार बाह्य व आन्तरिक संसर्ग से चित्त में प्रतिक्षण गुणों में परिवर्तन होता है उसे चित्त वृत्ति कहते हैं। वृत्त का अर्थ गोला होता है। जैसे किसी जलाशय में पत्थर फेंकने पर पानी में गोलाकार लहरें उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार हमारी चेतना में भी गोलाकार वृत्तियां उठती हैं।

1.11.2 मन :-

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में चित्त (मन) की ही अभिव्यक्ति होती है जैसे हम कोई दृश्य देखते हैं तो देखने की क्रिया के लिए आंखों के अतिरिक्त मस्तिष्क में स्थित रन्नायु केन्द्र का होना भी आवश्यक है परन्तु कभी-कभी हम आंखें खुली रखकर सो जाते हैं वस्तु का चित्र आंखों पर बना हुआ है दर्शनेन्द्रियां भी हैं फिर भी हम नहीं देख पाते, क्योंकि वहां चित्त का अभाव है, उसी प्रकार कभी-कभी रास्ते से गाड़ियाँ दौड़ती हुई निकल जाती हैं फिर भी हम उन्हें सुन नहीं पाते हैं क्योंकि हमारा चित्त श्रवणेन्द्रिय के साथ संयुक्त नहीं रहता। अतः प्रत्येक अनुभव के लिए बाहरी यंत्र, उसके बाद इन्द्रिय व अंत में चित्त या मन का योग होना आवश्यक है।

जब हम कोई दृश्य देखते हैं, या संगीत सुनते हैं तो वह भी मन की ही वृत्ति है। जब हम परेशान होते हैं, दुखी होते हैं हर्षित या करुणामय होते हैं तो ये सभी मन की ही वृत्तियां हैं।



... ३ ...
... ४ ...
... ५ ...
... ६ ...
... ७ ...
... ८ ...
... ९ ...
... १० ...
... ११ ...
... १२ ...
... १३ ...
... १४ ...
... १५ ...
... १६ ...
... १७ ...
... १८ ...
... १९ ...
... २० ...
... २१ ...
... २२ ...
... २३ ...
... २४ ...
... २५ ...
... २६ ...
... २७ ...
... २८ ...
... २९ ...
... ३० ...
... ३१ ...
... ३२ ...
... ३३ ...
... ३४ ...
... ३५ ...
... ३६ ...
... ३७ ...
... ३८ ...
... ३९ ...
... ४० ...
... ४१ ...
... ४२ ...
... ४३ ...
... ४४ ...
... ४५ ...
... ४६ ...
... ४७ ...
... ४८ ...
... ४९ ...
... ५० ...
... ५१ ...
... ५२ ...
... ५३ ...
... ५४ ...
... ५५ ...
... ५६ ...
... ५७ ...
... ५८ ...
... ५९ ...
... ६० ...
... ६१ ...
... ६२ ...
... ६३ ...
... ६४ ...
... ६५ ...
... ६६ ...
... ६७ ...
... ६८ ...
... ६९ ...
... ७० ...
... ७१ ...
... ७२ ...
... ७३ ...
... ७४ ...
... ७५ ...
... ७६ ...
... ७७ ...
... ७८ ...
... ७९ ...
... ८० ...
... ८१ ...
... ८२ ...
... ८३ ...
... ८४ ...
... ८५ ...
... ८६ ...
... ८७ ...
... ८८ ...
... ८९ ...
... ९० ...
... ९१ ...
... ९२ ...
... ९३ ...
... ९४ ...
... ९५ ...
... ९६ ...
... ९७ ...
... ९८ ...
... ९९ ...
... १०० ...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योगशास्त्र के अनुसार ज्ञान का प्रत्येक आयाम, विचार चेतना के विभिन्न तल आदि सब मन की वृत्तियों के अन्तर्गत आते हैं ।

महान मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने भी कहा है कि शारीरिक स्तर पर व्यक्त होने वाली घटनायें भी अवचेतन मन की ही अभिव्यक्तियां हैं । उनके अनुसार सारे दुख, रोग और व्याधियों के मूल में इड ही है । प्राचीन काल के भारतीय मनोवैज्ञानिक भी इस विचार से सहमत हैं । उनकी शब्दावली भले ही भिन्न हो । फ्रायड का इड चित्त की ही झलक है जो समस्त वासनाओं और आद्य मूल वृत्तियों का भंडार है । सारी व्याधियां मन से ही प्रारंभ होती हैं ।

सातवीं शताब्दी में गौण पादाचार्य बहुत बड़े विद्वान थे । उन्होंने मांडूक्य उपनिषद पर विस्तृत भाष्य लिखा था, उनके अनुसार सम्पूर्ण जगत चेतना की मानसिक वृत्ति के सिवाय कुछ नहीं है । यहां मानसिक वृत्ति से उनका तात्पर्य हमारे मानसिक व्यक्तित्व की विभिन्न अभिव्यक्तियों से है ।

जिस प्रकार एक ही व्यक्ति रंगमंच पर भिखारी, राजा, डाकू या संन्यासी की भूमिका में उपस्थित होता है ठीक उसी प्रकार हमारी चेतना भी विभिन्न अवसरों पर अलग-अलग रूपों में उपस्थित होती है । एक ही चेतना अनेक भूमिकाओं का निर्वाह करती है । हमारे मन की प्रत्येक अवस्था जैसे - स्वप्न, जागृति, देखना, बोलना, चिन्तना, छूना, चीखना, भावुक हो उठना, अनुभव करना आदि विभिन्न वृत्तियां हैं अतः हम कह सकते हैं कि चित्त में उठने वाली विचार तरंगे ही वृत्तियां हैं ।

चित्त की वृत्तियों द्वारा ही हमें आन्तरिक अनुभव होता है । जब चित्तवृत्तियां हमें संसार चक्र में खींचकर ले जाती हुई वासनाओं और उनकी पूर्तियों में लग जाती हैं तब उन्हें क्लिष्ट कहा जाता है और जब वे विषय भोगों से वैराग्य कराती हुई मुक्ति की ओर ले जाती हैं तो उन्हें अक्लिष्ट कहा जाता है ।

जैसे हम कोई फूल देखते हैं तो मन प्रफुल्लित हो जाता है तो यह सुखद या अक्लिष्ट वृत्ति है । उसी प्रकार जब हम बीच सड़क में भारी वाहन से कुचले कुत्ते के क्षत-विक्षत शरीर को देखते हैं तो मन इस दृश्य को पसंद नहीं करता । यह क्लिष्ट या दुःखद वृत्ति है । दोनों ही स्थितियों में देखने का माध्यम नेत्र हैं परन्तु दृश्य भिन्न प्रकार के हैं पहला अक्लिष्ट व दूसरा क्लिष्ट ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

1.11.3 वृत्तियों के प्रकार :-

इस प्रकार हम जो कुछ भी देखते, सुनते तथा मन व इन्द्रियों द्वारा अनुभव करते हैं उन्हें पांच भागों में विभक्त किया जा सकता है।⁴⁸ वे हैं - प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, और स्मृति।⁴⁹

क. प्रमाण -

प्रमाण वृत्ति सम्यक् ज्ञान को कहते हैं।⁵⁰ जब हमारी दो अनुभूतियां आपस में विरोधी नहीं होती तब उसे हम प्रमाण कहते हैं। प्रमाण के तीन प्रकार हैं प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम।

इन्द्रियों व विषयों के संबंध से जो ज्ञान होता है वह प्रत्यक्ष ज्ञान है। जो ज्ञान युक्ति से होता है वह अनुमान है, जैसे हम धुआं देखकर तत्काल यह अनुमान लगाते हैं कि वहां अग्नि अवश्य होगी क्योंकि हमारा यह अनुमान एक ऐसे अनुभव पर आधारित है जो कभी गलत सिद्ध नहीं हो सकता, क्योंकि जहां धुआं होगा वहां आग अवश्य होगी और जहां इन्द्रियानुभव न हो, अनुमान न हो वहां ज्ञान का स्रोत आगम कहलाता है।

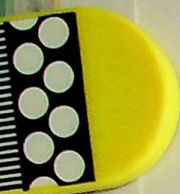
प्रामाणिक पुराणों के वचनों से प्राप्त ज्ञान तथा वेद पुराण आदि आगम की श्रेणी में आते हैं क्योंकि यह ज्ञान ऋषियों ने गहन समाधि की अवस्था में दर्शन व प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त किया था। शास्त्र वर्णित बातें प्रमाण व अनुमान से परे होती हैं।

ख. विपर्यय -

विपर्यय दूसरे प्रकार की चित्त वृत्ति है जिसका अर्थ मिथ्या ज्ञान या असत्य ज्ञान है।⁵¹ जैसे रस्सी को सर्प समझना वास्तविक वस्तु से उसका कोई संबंध नहीं होता इसलिए विपर्यय को अविद्या कहते हैं।

ग. विकल्प -

तीसरे प्रकार की चित्तवृत्ति विकल्प कहलाती है।⁵² निराधार कल्पना ही विकल्प वृत्ति है जिसमें शब्द तो हो पर शब्दार्थ रूप पदार्थ कहीं न हो जैसे आकाश कुसुम। यह वस्तु का यथार्थ ज्ञान नहीं है क्योंकि यह निर्विषय है; यह केवल शब्द ज्ञान के अनन्तर उदय होता है।



... अथवा ...

... अथवा ...

...

...

...

...

...

...

...

...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

घ. निद्रा -

निद्रा एक वृत्ति है ⁵³ जिसमें मानसिक आलम्बन का अभाव होता है । अर्थात् निद्रा मन की वह अवस्था होती है जिसमें बाह्य वस्तुओं के ज्ञान का अभाव होता है । मांडूक्योपनिषद् कहता है कि निद्रावस्था में इच्छा, वासना व स्वप्न का अभाव रहता है । सोकर उठने के बाद हमें कुछ याद नहीं रहता कि नींद में क्या-क्या हुआ । यदि उस वृत्ति का प्रत्यक्ष न हो, उसके संस्कार भी न हो और संस्कारों के न होने से स्मृति भी नहीं हो सकती इसलिए निद्रा भी एक वृत्ति है ।

ङ. स्मृति -

प्रमाण, विपर्यय, विकल्प तथा निद्रा इन चारों वृत्तियों से उत्पन्न संस्कार हमारे चित्त पर पड़े रहते हैं, वे कालान्तर में याद होते रहते हैं । यह पांचवी स्मृति वृत्ति है । ⁵⁴ जागृत अवस्था में जिसे स्मृति कहते हैं, निद्रावस्था में उसी प्रकार को स्वप्न कहते हैं । उपरोक्त पांचों वृत्तियों के कारण ही हम सुख और दुःख, भ्रम और द्वन्द्व का अनुभव करते हैं । ये वृत्तियाँ हमारी त्रिआयामी मनोचेतना का निर्माण करती हैं । हमारे मन की प्रत्येक अवस्था जैसे स्वप्न, जागृति, देखना, बोलना, छूना, चीखना, चिल्लाना, भावुक हो उठना, अनुभव करना आदि सब मन की वृत्तियों के अन्तर्गत ही आती हैं ।

ये वृत्तियाँ हमारी शक्ति व विचारों के विखराव का कारण होती हैं तथा अपने शरीर, मन और स्वभाव के प्राकृतिक नियमों के अनुसार जीवन जीने के मार्ग को अवरुद्ध करती हैं ।

इसलिए महर्षि पतंजलि चित्त वृत्तियों के निरोध की बात कहते हैं । निरोध शब्द की व्युत्पत्ति रुध् धातु से हुई है जिसका तात्पर्य कुण्ठित करने या बाधा उपस्थित करने से है । परन्तु इसका तात्पर्य चेतना के अवरोध से कतई नहीं है अतः इतना तो स्पष्ट है कि निरोध शब्द का प्रयोग चित्त की वृत्तियों को रोकने के लिए किया गया है न कि चेतना को कुंठित अथवा अवरुद्ध करने के लिए ।

प्रत्येक कार्य से मानो चित्त रूपी सरोवर के ऊपर एक तरंग खेल जाती है । यह कम्पन कुछ समय बाद नष्ट हो जाता है । फिर शेष रहते हैं संस्कार-समूह । मन में ऐसे बहुत से संस्कार पड़ने पर वे इकट्ठे होकर आदत के रूप में परिणित हो जाते हैं । हमारा चरित्र इन संस्कारों का समष्टि रूप है । ये

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

संस्कार रूपी प्रवृत्तियां चित्त में इस प्रकार रहती हैं कि कभी भी, अनायास ही प्रगट हो जाती हैं। किसी भी अवांछनीय विचार या प्रवृत्ति के पुनर्जागरण से बचने के लिए यह आवश्यक है कि संस्कार के रूप में उसके बीज बचे हों, उन्हें अभ्यास द्वारा नष्ट कर दिया जाय।

1.11.4 निरोध का अर्थ

अतः : हम कह सकते हैं कि निरोध शब्द का अर्थ विचारों, इच्छाओं, वासनाओं और महत्वाकांक्षाओं को रोकने से नहीं है अपितु चेतना की उन प्रक्रियाओं को रोकने से है जो पूर्व संस्कारों का कारण होती हैं।

निरोध अपने स्वरूप का सर्वथा नाश हो जाना नहीं है किन्तु जड़ तत्व के अविवेक पूर्ण संयोग का चेतन तत्व से सर्वथा नाश हो जाना है इस संयोग के न रहने पर द्रष्टा की स्वरूप (शुद्ध परमात्मा) में अवस्थिति होती है।

साधारण अवस्था में वृत्ति प्रति पल परिवर्तित होती रहती है। चित्त वृत्ति बदलते रहने के दो मुख्य कारण हैं— पहला यह कि यह मन, इन्द्रियों द्वारा बहिर्मुख होकर बाह्य विषयों में आसक्त रहता है। दूसरे यदि इन्द्रियों को बंद करके मन को बाह्य विषयों से खींच भी लिया जाय तो भी अन्तःकरण की क्रियायें चलती ही रहती हैं।

मनःशक्ति—

संसार की सर्वोपरि शक्ति मनः शक्ति है। मनः शक्ति का उद्देश्य है सभी प्रकार की मानसिक बाधाओं को हटाकर मन को पूर्णतया स्वस्थ व संयमी बनाना। यदि मन की शक्तियों को पूरी तरह समाहित करके किसी वस्तु विशेष पर केन्द्रीभूत कर दिया जाय तो उस वस्तु विशेष की सत्ता प्रगट हो जाती है।

यदि हम एक बिन्दु पर अपनी समग्र मनः शक्ति को एकाग्र कर सकें तो हम सहज ही उस वस्तु विशेष की जिस, पर हमने अपनी वृत्तियों को एकाग्र किया है, सारी विशेषतायें जान जायेंगे, चाहे वह वस्तु भौतिक हो मानसिक हो या आध्यात्मिक।

इस सत्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि हमारे उत्कर्ष के प्रथम एवं महत्वपूर्ण साधन हैं — हमारी स्वस्थ व सक्षम ज्ञानेन्द्रियां। परन्तु हमें यह नहीं

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

भूलना चाहिए कि इन्द्रियों का प्रवर्तक है मन । यदि मन असहयोग कर दे तो स्वस्थ व सक्षम इन्द्रियां भी अपने विषय को ग्रहण करने में समर्थ नहीं रह जायेंगी । जब इन्द्रियों का प्रवर्तन-निवर्तन मन पर आधारित है और कर्म सम्पादन इन्द्रियों की प्रवृत्ति के अधीन है तथा अभ्युदय की प्राप्ति सम्यक् कर्म सम्पादन पर आधारित है, तब यह अपने आप स्पष्ट हो जाता है कि हमारा अभ्युदय मन के शुभ संकल्प युक्त होने पर निर्भर है इसलिए मन्त्रद्रष्टा ऋषि शिव संकल्प सूक्त के माध्यम से प्रार्थना करते हैं कि-

शिव संकल्प सूक्त :-

“मेरा वह मन धर्मविषयक संकल्प वाला हो, मन में कभी पापभाव न हो जो जाग्रत अवस्था में देखे सुने, दूर से दूर स्थल तक दौड़ लगाता है और सुप्तावस्था में पुनः अपने स्थान पर आ जाता है जो भूत, भविष्य और वर्तमान को भी ग्रहण करने में समर्थ है । दूरगामी तथा विषयों को प्रकाशित करने वाली इन्द्रियों, ज्योतियों का एकमात्र प्रकाशक अर्थात् प्रवर्तक है वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो ।” ⁵⁵

कर्मवान मनीषी और धीर व्यक्ति यज्ञ में तथा अन्य धन लाभ के क्षेत्रों में जिस मन के द्वारा ही कर्म करते हैं, प्रजाओं के अन्दर जो अपूर्व और प्रकाशमान् ज्योति है वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला होवे । ⁵⁶

जो प्रज्ञान है, जो चित्त है और जो धृति है, प्रजाओं में जो आन्तर ऋक संज्ञक ज्योति है जिसके बिना कोई भी कर्म नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन सदा शुभ संकल्पों वाला ही होवे । ⁵⁷

जिस अपर मन के द्वारा यह भूत, भविष्य, वर्तमान सब जगत् धारित किया हुआ है और जिसके द्वारा सात होताओं वाला यज्ञ विस्तारित किया जाता है वह मेरा मन है परमात्मन! सदा शुभ संकल्पों वाला ही होवे । ⁵⁸

जिसमें ऋचायें सामगान और यजुष रथ की नाभि में आराओं की भांति प्रतिष्ठित हैं और प्रजाओं का सभी कु-सु ओतप्रोत है वह मेरा मन है परमात्मन् ! सदा शुभ संकल्पों वाला ही होवे । ⁵⁹

कुशल सारथि के अश्वों को अभीष्ट स्थल पर न ले चलने के समान व लगामों के द्वारा अश्वों को नियंत्रित रखने के समान जो मनुष्यों को यत्र तत्र

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

ले जाता है, हृदय में प्रतिष्ठित जो अजर और अत्यन्त वेगवान है वह मेरा मन हे भगवन् ! सदा शुभ संकल्पों वाला होवे । ⁶⁰

इस प्रकार मन शरीर का नयन और नियमन दोनों करता है । शरीर के शिथिल होने पर भी मन का वेग कम नहीं होता है । अत्यन्त वेगवान होने से जल्दी वश में नहीं आता है । बिगड़ उठे तो बलवान होने से व्यक्ति को बुरी तरह झकझोर देता है । यदि मन शुद्ध और पवित्र बन जाय तो हमारे जीवन की धारा बदल जायेगी और हमारी समस्त शक्तियां मंगलमय कार्यों में ही लगेंगी

हमारे शास्त्रकारों ने मन की शक्ति से सम्पूर्ण संसार का सृजन होना सिद्ध किया है । यदि अपनी मनन शक्ति को काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद मत्सर, चिन्ता, क्लेश, कलह, ईर्ष्या, द्वेष, राग या दुख आदि में लगाये रहे तो वह कभी भी उत्कर्ष को प्राप्त नहीं होगी वरन् पतन के गर्त में डालती जायेगी । इसके विपरीत यदि उस शक्ति को सत्य व्रत-धारण में लगा दें तो प्रमादि सभी विकार एक एक कर दूर होते चले जायेंगे और फिर सुख शांति और आनंद की निरन्तर वर्षा होने लगेगी । वैसी अवस्था होने पर ही मोक्ष की प्राप्ति संभव होती है ।

छान्दोग्योपनिषद् में मन की उपासना का उपदेश देते हुए कहा गया है कि मन ही आत्मा है, मन ही लोक और मन ही ब्रह्म है इसलिए मन की उपासना करो । इस कथन का अभिप्राय मन को स्वच्छ रखने और आत्म ज्ञान की ओर प्रेरित करने से है ।

इसलिए हमें मन को सब विघ्नों से दूर करके अपनी केन्द्रीभूत शक्ति को उस दिव्य सनातन सत्ता की ओर मोड़ना होगा जिससे उस सत्ता का सत्य-स्वरूप हमारे सामने आ जायेगा जिसे हम अज्ञानवश बाहर ढूँढते हैं हमें यह ज्ञान हो जायेगा कि वह हमारे भीतर ही है ।

इसलिए चित्त की वृत्तियों का निरोध आवश्यक है क्योंकि चित्त आत्म स्वरूप से सचेतन होकर वृत्तियों को चेताया करता है । चित्त यदि स्वरूप में स्थिर हो तो आप ही वृत्ति निरोध होता है । चित्त की वृत्तियों का निरोध कर देने से सारी इन्द्रियां निर्व्यापार हो जाती हैं । जिससे बाह्य प्रपंच दिखना बंद हो जाता है अर्थात् बाह्य आवरण दृष्टि के सामने से हट जाने पर भीतर की सार वस्तु प्रकट हो जाती है ।

... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

निरोध के उपाय -

महर्षि पतंजलि ने चित्त वृत्तियों के निरोध के दो उपाय बताये हैं - अभ्यास और वैराग्य । ⁶¹ चित्त की स्थिरता के लिए जो प्रयत्न करता है वह अभ्यास है । ⁶² अर्थात् स्वभाव से ही चंचल मन को एक ध्येय में स्थिर करने के लिए बारम्बार चेष्टा करते रहने का नाम अभ्यास है ।

इन वृत्तियों को अनेक जन्मों से बहिर्मुख होने के कारण विषयाकार होने की आदत पड़ी हुई है । इस आदत को छोड़ने का नाम है वैराग्य और अन्तर्मुख होकर चित्तवृत्ति को आत्माकार करने का जो प्रयत्न है उसके नाम है अभ्यास ⁶³ अर्थात् मन को दमन करने की चेष्टा अर्थात् प्रवाह रूप में उसकी बाहर जाने की प्रवृत्ति को रोकने का प्रयास ही अभ्यास है ।

यदि श्रद्धा विश्वास व लगनपूर्वक दीर्घ काल ⁶⁴ तक अभ्यास किया जाय तो पांचो वृत्तियों का निरोध हो सकता है क्योंकि मनुष्य का स्वत्व स्वाभाविक रूप से निर्मल है, विकार तो आरोपित हैं । बाहरी विषयों से उत्पन्न उत्तेजना जो केवल आयात है स्वाभाविक नहीं । स्वाभाविक तो निर्मलता है । काम, क्रोध, लोभ, मोह, घृणा, वैर तथा इसी प्रकार के किसी भी उद्वेग में हर समय नहीं रहा जा सकता परन्तु उद्वेग व विकार रहित हर समय रहा जा सकता है इसलिए हमें इन विकारों को त्यागने का अभ्यास करना चाहिए । निरन्तर अभ्यास का परिणाम अमोघ होता है ।

वैराग्य को मन की वह अवस्था कह सकते हैं जिसमें वस्तु विशेष के प्रति लगाव अथवा राग द्वेष का अभाव होता है । महर्षि पतंजलि वैराग्य के दो प्रकार बताते हैं अपर वैराग्य व पर वैराग्य ।

मन व इन्द्रियों के अनुभव में आने वाले पदार्थ दृश्य हैं और जो प्रत्यक्ष नहीं हैं जो धर्म शास्त्रों में वर्णित स्वर्ग और किसी के द्वारा सुनी हुई भोगों की आनुश्रविक हैं । ⁶⁵ जब दृश्य संसार के और सुने हुए कल्पित स्वर्गादि भोगों के प्रति तृष्णा नहीं रहती और उन्हें पाने और भोगने की वासना मिट जाती है तब यह अपर वैराग्य है । चित्त की ऐसी अवस्था का नाम वशीकार वैराग्य है । और जब प्रकृति के गुणों में अर्थात् मन के भीतर छिपे हुए संस्कारों में भी तृष्णा नहीं रहती तब पर वैराग्य की दशा मानी जाती है । ⁶⁶

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

केवल किसी विषय को त्यागने का नाम वैराग्य नहीं है क्योंकि रोग आदि के कारण भी विषयों में अरुचि हो जाती है। उसी प्रकार किसी विषय के अप्राप्त होने पर भी उसका भोग नहीं किया जा सकता।

विवेक द्वारा विषयों को अनन्त दुख और बंधन का कारण समझकर उनमें पूर्णतया अरुचि होना, उनमें सर्वथा संगदोष से निवृत्त हो जाना ही वैराग्य है।

यह चित्त अपनी स्वाभाविक पवित्र अवस्था को फिर से प्राप्त करने के लिए सतत् चेष्टा कर रहा है। किन्तु इन्द्रियां उसे बाहर खींचे रखती हैं। अभ्यास और वैराग्य इन दो उपायों के द्वारा जब वृत्तियों का निरोध किया जाता है, जिसमें समस्त संस्कारों व अविद्या का निवारण हो जाता है।

चित्त को इस महान अभ्यास के योग्य बनाने हेतु यह आवश्यक है कि उसे सामान्य अशुद्धियों से मुक्त किया जाय। इसके लिए अष्टांग योग का पालन करना अनिवार्य है।

1.11.5 अष्टांग योग-

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि योग के ये आठ अंग हैं।⁶⁷ इनमें से प्रथम पांच अंगों को बहिरंग व अंतिम तीन को अन्तरंग योग कहते हैं।

(1) यम

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य यम हैं।⁶⁸ प्राणों का शरीर से वियोग करना सबसे बड़ी हिंसा है इसलिए योगियों के लिए अहिंसा का उच्चतम स्वरूप प्राणीमात्र में अपनी आत्मा को व्यापक रूप में देखना है। जो साधक सम्पूर्ण भूतो को अपनी आत्मा में ही देखता है और समस्त भूतों में भी अपनी आत्मा को ही देखता है वह इस सर्वात्मदर्शन के कारण किसी से घृणा नहीं करता।⁶⁹

महर्षि पतंजलि कहते हैं कि साधक में अहिंसा की पूर्ण प्रतिष्ठा हो जाने पर उसके प्रति दूसरे जीव भी वैराग्य देते हैं।⁷⁰

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

जो सर्व देश में तथा सर्वकाल में मन, वाणी तथा शरीर से दूसरे को पीड़ा नहीं पहुंचाता उसके द्वारा दूसरे उद्धेलित नहीं होते । अतएव दूसरे प्राण भी उससे वैर नहीं करते ।

सारे यमों का मूल अहिंसा है । अहिंसा के पुजारी गांधी जी ने एक गाय के बछड़े को अत्यन्त रुग्णावस्था में देखा; उसके सारे शरीर में कीड़े पड़ जाने और उसका कष्ट असहनीय हो जाने पर उसके बचने की कोई सम्भावना न देखी, तब उनकी सत्व प्रधान बुद्धि ने विवेक पूर्ण ढंग से निश्चय किया कि उसको उस असहनीय कष्ट से बचाने के लिए किसी औषधि द्वारा शीघ्र उसके रुग्ण शरीर को प्राण तत्व से पृथक् कराने में सहायता की जाय । इस प्रकार उन्होंने अहिंसा महाव्रत का पालन करके सर्वोत्कृष्ट उदाहरण पेश किया ।

इसी प्रकार जैन धर्म में भी इन पांच यमों को पांच महाव्रत का नाम दिया गया है । ⁷¹ ये पांच महाव्रत जैन धर्म की आधार शिलायें हैं ।

मन, वाणी और शरीर से किसी प्राणी को कभी किसी प्रकार दुख न देना अहिंसा है, परदोष दर्शन का सर्वथा त्याग भी इसी के अन्तर्गत है वस्तु का यथार्थ ज्ञान सत्य है । जो सत्य बोलता है उसकी बात अर्थगर्भित और प्रामाणिक होती है । श्री व्यास जी महाराज ने सत्य को परिभाषित करते हुए कहा है कि अर्थानुकूल वाणी और मन का व्यवहार होना अर्थात् जैसा अनुमान किया हो और जैसा सुना हो वैसा ही वाणी से कथन करना ही सत्य है । मनु ने भी ऐसा ही कहा है—सत्य बोले, पर वह सत्य न बोले जो अप्रिय हो अर्थात् सत्य को मीठा करके बोले, कटु करके न बोलें । ⁷²

सत्य अहिंसा का ही रूपान्तर है । सत्य का व्यवहार केवल वाणी से ही नहीं होता जैसा कि साधारण मनुष्य समझते हैं । बल्कि कर्तव्य भी सत्य ही है यथार्थ रूप से अपने कर्तव्य रूपी सत्य का पालन करने के कारण ही राजा हरिश्चन्द्र सदा के लिए अमर हो गये ।

दिया ।

वेद व्यास जी ने योग दर्शन पर भाष्य करते हुए सत्य को परिभाषित किया है । ⁷³ उसी प्रकार स्कन्ध पुराण में कहा गया है कि जैसा सुना, जैसा अपने हृदय में निश्चय किया हो उसी प्रकार कहना सत्य है परन्तु वह सत्य सत्पुरुष को पीड़ादायक न हो । ⁷⁴

देवी भागवत में कहा गया है कि वह सत्य सत्य नहीं जिससे किसी सत्पुरुष की हानि होती है, जिस मिथ्या से किसी सत्पुरुष की रक्षा होती हो,

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वह मिथ्या भी सत्य में शामिल है। वास्तव में जिस भाषण से सत्पुरुष का हित होता है वह सत्य में शुमार है। ⁷⁵

जब व्यक्ति या साधक सत्य का पालन करने में पूर्णतया परिपक्व हो जाता है, उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं रहती। ⁷⁶ तभी वह योगी कहा जाता है।

इस प्रकार सत्य की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि हजार अश्वमेध और सत्य की तुलना की जाय तो सत्य ही गुरुत्व होगा। ⁷⁷

अन्यायपूर्वक किसी के धन, द्रव्य या अधिकार आदि का हरण करना स्तेय है। इस प्रकार किसी वस्तु को प्राप्त करने का मूल कारण लोभ या राग है। अधिकारीगणों का रिश्वत लेना, दुकान-दारों का निश्चित या उचित मूल्य से अधिक दाम लेना अथवा तौल में कम तथा चीजों में मिलावट करना स्तेय है। इनका त्यागना अस्तेय है।

मनुस्मृति में कहा गया है कि अन्याय से दूसरे का धनादि लेना स्तेय है। ⁷⁸ मैथुन अथवा अन्य किसी प्रकार से भी वीर्य का नाश न करते हुए जितेन्द्रिय रहना अर्थात् अन्य सब इन्द्रियों के निरोध पूर्वक उपस्थेन्द्रिय के संयम का नाम ब्रह्मचर्य है। ⁷⁹

जब साधक की पूर्णतया ब्रह्मचर्य में दृढ़ स्थिति हो जाती है तब उसके मन, बुद्धि, इन्द्रिय और शरीर में अपूर्व शक्ति का प्रादुर्भाव हो जाता है। साधारण मनुष्य किसी काम में भी उसकी बराबरी नहीं कर सकते। ⁸⁰

शारीरिक, मानसिक, सामाजिक आदि सारी शक्तियां ब्रह्मचर्य पर निर्भर हैं। 25 वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचारी रहने के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके शास्त्रानुसार केवल संतानोत्पत्ति के लिए ऋतुसमय पर स्त्री संयोग करने से ब्रह्मचर्य व्रत नहीं टूटता। ⁸¹

ब्रह्मचर्य ही उत्कृष्ट तप है। इससे बढ़कर तपश्चर्या दूसरी नहीं हो सकती। ब्रह्मचर्य की महिमा अपार है। सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों में जो जीवन कला दिखलयी देती है वह सब ब्रह्मचर्य का ही प्रताप है। ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवताओं ने काल को भी जीत लिया है। ⁸²

...
...
...
...

...
...
...
...

...
...
...
...

...
...
...
...
...

...
...
...
...
...

...
...
...
...
...

...
...
...
...
...

...
...
...
...
...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

मन, वाणी और शरीर से होने वाले सब प्रकार के मैथुनों का सब अवस्थाओं में सदा त्याग करके सब से वीर्य की रक्षा करना ब्रह्मचर्य है । ⁸³ धन, सम्पत्ति, भोग-सामग्री अथवा अन्य वस्तुओं को अपनी (शरीर रक्षा) आवश्यकताओं से अधिक केवल अपने ही भोग के लिए संचय या इकट्ठा करना परिग्रह है और इनसे बचना अपरिग्रह है ।

अपरिग्रह के संबंध में महात्मा गांधी जी लिखते हैं कि अपरिग्रह का संबंध अस्तेय से है जो चीज चोरी की नहीं है पर अनावश्यक है उसका संग्रह करने से वह चोरी की चीज के समान हो जाती है ।

संन्यासी शरीर निर्वाह मात्र से अधिक वस्तुओं का मन, वाणी, शरीर से परित्याग करे और गृहस्थ मन से त्याग करे अर्थात् आसक्त न हो तभी उन्हें अपरिग्रही कहा जायेगा । ⁸⁴

यमों का पालन करना नितांत आवश्यक है इनके पालन करने से संसार में फैली हुई भयंकर अशांति का नाश हो सकता है । इनके पालन से संसार की अवस्था ठीक रह सकती है ।

(2) नियम

यमों के साथ ही साथ नियमों का पालन करना भी नितांत आवश्यक है । शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणीधान ये पांच नियम हैं । ⁸⁵ शौच दो प्रकार का है- बाह्य और अभ्यान्तर । मृत्तिका जल आदि से पात्र, वस्त्र स्थान आदि को पवित्र रखना तथा मृत्रिका जल आदि से शरीर के अंगों को शुद्ध रखना, शुद्ध सात्विक आहार से शरीर को स्वस्थ निरोग रखना यह बाह्य शौच कहलाता है । उसी प्रकार अभ्यान्तर शौच का अर्थ है ईर्ष्या, अभिमान, घृणा आदि मलों को मैत्री आदि से दूर करना चित्त का शौच है । इसी प्रकार वृहत पराशर में भी शौच का वर्णन किया है । ⁸⁶

कर्तव्य कर्म का पालन करते हुए उसका जो कुछ परिणाम हो तथा प्रारब्ध के अनुसार अपने आप जो कुछ भी प्राप्त हो एवं जिस अवस्था और परिस्थिति में रहने का संयोग प्राप्त हो जाय उसी में संतुष्ट रहना और किसी भी प्रकार की कामना या तृष्णा न करना संतोष है । ⁸⁷

संतोष सुख की जड़ है और असंतोष दुख की अतः कहा जा सकता है कि सत्व के प्रकाश में चित्त की प्रसन्नता का नाम ही संतोष है

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

जिस प्रकार अग्नि में तपाने से धातु का मल-भस्म हो जाने पर उसमें स्वच्छता और चमक आ जाती है उसी प्रकार तप की अग्नि में शरीर, इन्द्रियों आदि का तम-रूपी आवरण के हट जाने पर उनका सत्वरूपी प्रकाश बढ़ जाता है ।

कितने ही कष्ट पड़े फिर भी अपने धर्म (कर्तव्य-धर्म) से न डिगना तप है । ⁸⁸

इसी प्रकार चाणक्य सूत्र में तप को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि ⁸⁹ निष्काम भाव से तप का पालन करने से अनायास ही अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है ।

स्वाध्याय अर्थात् जिनसे अपने कर्तव्य-अकर्तव्य का बोध हो सके ऐसे वेद शास्त्र महापुरुषों के लेख आदि का पठन-पाठन करना और गायत्री आदि मंत्रों का जाप करना स्वाध्याय है ।

शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि ब्राह्मण जिस दिन स्वाध्याय नहीं करता उसी दिन से ब्राह्मणत्व से वह गिर जाता है । ⁹⁰

गीता में कहा गया है कि स्वाध्याय करना वाणी का तप है । ⁹¹

छान्दोग्य उपनिषद में धर्म के त्रिस्कन्ध में से एक है स्वाध्याय का स्कन्ध है । ⁹² स्वाध्याय के महत्व को बताते हुए शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि सम्पूर्ण पृथ्वी का दान करने से जो पुण्य प्राप्त होता है उससे तिगुना पुण्य उस पुरुष को मिलता है जो प्रतिदिन स्वाध्याय करता है । ⁹³

ईश्वर की भक्ति विशेष अर्थात् फल सहित सर्व कर्मों को उन्हें समर्पण करना ईश्वर-प्राणीधान है । ईश्वर के नाम, रूप लीला, धाम, गुण और प्रभाव आदि का श्रवण, कीर्तन और मनन करना अपने को भगवान के यंत्र बनाकर चलना, जिस प्रकार वह नचावे, वैसा ही नाचना, उसकी आज्ञा का पालन करना, उसी से अनन्त प्रेम करना- ये सभी ईश्वर प्राणीधान के अंग हैं ।

ईश्वर प्राणीधान में ईश्वर शब्द का अभिप्राय उच्चतर सत्ता से है तथा प्राणिधान का तात्पर्य उसमें विश्वास से है । इस प्रकार ईश्वर प्राणीधान से तात्पर्य अविनाशी सत्ता के अस्तित्व को स्वीकार करने, उसके प्रति सजग होने

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

तथा उसमें विश्वास या आस्था उत्पन्न करने से है। वह सत्ता अव्यक्त है तथा नाम रूप और विचार के अनुभव के परे है।

तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणीधान व्यावहारिक जीवन को शुद्ध व सात्विक बनाने में अधिक सहायक होते हैं। तप से शरीर, वाणी, मन और अन्तःकरण की अशुद्धि दूर होती है। स्वाध्याय से तत्व ज्ञान की प्राप्ति तथा मन की एकाग्रता और ईश्वर-प्राणीधान से कर्मों में कामना और फलों में आसक्ति का त्याग तथा ईश्वर का अनुग्रह प्राप्त होता है।

(3) आसन

अष्टांग योग का तीसरा अंग है आसन जिसका संबंध विशेष कर शारीरिक स्थिति से है। अर्थात् जिस रीति से स्थिरता पूर्वक बिना हिले डुले और सुख के साथ बिना किसी प्रकार के कष्ट के दीर्घकाल तक बैठ सकें, वह आसन है। आसनों के अनेक प्रकार हैं जो शरीर को हल्का, स्वस्थ व योग-साधना के योग्य बनाने में सहायक होते हैं।⁹⁴

आसनों के अभ्यास का लाभ यह है कि इनसे शरीर के प्रति गहरी सजगता प्राप्त होती है जिससे प्राणिक अवरोधों को दूर किया जा सकता है। इस प्रकार आसन प्राणायाम के अभ्यास के लिए एक सीढ़ी या प्रथम सोपान का कार्य करता है।

(4) प्राणायाम

प्राणायाम अष्टांग योग का चौथा पहलू है। आसनों के अभ्यास के द्वारा व्यक्ति शरीर के और मन की सीमाओं का अतिक्रमण करता है, आसन के स्थिर होने पर श्वास प्रश्वास की गति को रोकना प्राणायाम है।

प्राण का अर्थ है प्राण शक्ति व आयाम का अर्थ है नियंत्रण पूर्वक श्वास को लम्बा करना अथवा रोकना। प्राण श्वास नहीं है और न ही कोई आत्म तत्व है किन्तु प्राण वह जड़ तत्व है जिससे श्वास प्रश्वास आदि समस्त प्रक्रियायें एक जीवित शरीर में होती हैं।

सृष्टि के आरम्भ में सभी पदार्थ इसी प्राण शक्ति द्वारा उत्पन्न होते हैं। इसी प्राण शक्ति का सहारा पाकर जीवित रहते हैं और प्रलय के समय इसी का सहारा न मिलने के कारण प्राण में ही लीन हो जाते हैं।⁹⁵

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

भौतिक पदार्थों में सबसे अधिक व्यापकता का सूचक आकाश और सबसे अधिक शक्ति का प्रकाशक प्राण को माना गया है। यह प्राण ही समष्टि से न केवल मनुष्य को बल्कि सभी जड़ पदार्थ, वृक्ष, लता तथा चेतन-कीट-पतंग जलचर, पशु पक्षी भी इससे जीवन पा रहे हैं इसलिए ये सब प्राणधारी कहलाते हैं।

इस प्रकार प्राण ही वह सार शक्ति है जो सभी तत्वों के अस्तित्व का निर्धारण करती है। इस मूलभूत प्राण को महाप्राण कहते हैं। जब महाप्राण का संयोग प्रकृति से होता है तो स्थूल व सूक्ष्म अभिव्यक्तियों का सृजन होता है। इस प्राण से इडा पिंगला की उत्पत्ति होती है जो सूक्ष्म प्राणिक अनुभूति के आयाम हैं।

इन प्राणिक शक्ति से पांच अभिव्यक्तियां होती हैं जिन्हें पंचप्राण कहते हैं। पंचप्राणों का शरीर में विभिन्न कार्य व प्रभाव होते हैं।

प्राण उर्ध्वगामी शक्ति है। वह हृदय से लेकर नासिका पर्यन्त शरीर के उत्तरी भाग में वर्तमान है। फेफड़े, हृदय, ग्रास नली, श्वास नली इन अंगों के कार्यकलापों का नियंत्रण और नियमन प्राण द्वारा ही होता है।

अपान निम्न गामी शक्ति है। यह नाभि से लेकर पाद तल तक अवस्थित है। यह गुर्दे, मूत्राशय, बड़ी आंत, उत्सर्जक अंगों के क्रिया कलापों को नियंत्रित करता है।

समान पाश्विक गति युक्त शक्ति है। यह नाभि से हृदय तक वर्तमान है। यह उदर, जिगर, प्लीहा, अग्नाशय, छोटी आंत से संबंधित क्रियाओं का नियंत्रण करता है; पचे हुए रस को सभी अंगों में समान रूप से बांटना इसका कार्य है।

उदान वृत्तीय गति युक्त शक्ति है। यह कंठ में से सिर पर्यन्त गति करने वाली शक्ति है। यह पैरों, हाथों, गले की गति को समन्वित और नियंत्रित करती है, तथा मस्तिष्क व ऐन्द्रिय अंगों को निर्देशित करती है।

व्यान सर्व व्यापी शक्ति है। यह उपस्थमूल से उग्नर है। जब प्राणिक ईंधन समाप्त हो जाता है तथा कहीं से भी उसकी पूर्ति की सम्भावना नहीं रहती तब व्यान के सुरक्षित भंडार का उपयोग होता है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि इन पंच प्राणों का संबंध पदार्थ जगत तथा, अनुभव के भौतिक क्षेत्र से है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्राणायाम के अभ्यास से मन के सूक्ष्म क्षेत्रों और अनुभवों को भी नियंत्रित किया जा सकता है क्योंकि सारी इन्द्रियों का व्यापार प्राण से ही चलता है । इसलिए प्राण सब इन्द्रियों की वृत्तियों को रोककर मन की एकाग्रता में समर्थ होता है ।

प्राणायाम सब क्षेत्रों के विकारों का नाशक है । मनुस्मृति में कहा गया है कि जिस प्रकार अग्नि संयोग से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही इन्द्रियों के दोष भी प्राण को रोकने से नष्ट हो जाते हैं । ⁹⁶

मन का प्राण से घनिष्ठ संबंध है । मन को रोकना अति कठिन है । पर प्राण के निरोध तथा वश में करने से मन का निरोध व वशीकरण आसान हो जाता है । इसलिए प्राणायाम योग का आवश्यक अंग है । प्राणायाम के अभ्यास से मन व इन्द्रियां शुद्ध होने से यह योग्यता आ जाती है कि मन को किसी एक जगह स्थिर किया जा सके ।

(5) प्रत्याहार

जब मन व इन्द्रियां शुद्ध हो जाती हैं तब इन्द्रियों की बाह्य वृत्ति को सब ओर से समेटकर मन में विलीन करने के अभ्यास का नाम प्रत्याहार है । ⁹⁷ प्रत्याहार का अर्थ है पीछे हटना । विषयों से विमुख होना ।

इन्द्रियां चित्त के अधीन होकर काम करती हैं और यम-नियम प्राणायामादि के प्रभाव से जब चित्त का निरोध हो जाता है तब इन्द्रियां भी निरुद्ध हो जाती है । प्रत्याहार सिद्ध होने पर इन्द्रियां सर्वथा वश में हो जाती हैं ।

उपर्युक्त पांचों अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार को बहिरंग साधन कहते हैं, तथा धारणा, ध्यान समाधि को अन्तरंग साधन कहते हैं । इन तीनों अंगों को मिलाकर संयम भी कहा जाता है ।

(6) धारणा

चित्त को किसी एक देश में (मानसिक अथवा भौतिक बिन्दु) पर ठहराना धारणा है । इस प्रकार धारणा का अर्थ मन को एक बिन्दु पर एकाग्र करना होता है । ⁹⁸



...
...
...
...

...
...
...

...
...
...
...

...

...
...
...

...
...
...

...
...
...

...

...
...
...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

धारणा का सर्वोत्तम उदाहरण अर्जुन की एकाग्रता है जिसमें सिर्फ पक्षी की आंख (लक्ष्य) ही दिखाई दे रही थी। अर्थात् उसमें एकाग्रता की तीव्रता इतनी अधिक थी कि उसकी समस्त क्षमता मात्र एक बिन्दु, पक्षी की आंख पर केन्द्रित हो गई थी।

धारणा में मन को जिस एक वृत्ति में एकाग्र किया था उसी वृत्ति में चित्त का एकाग्र हो जाना अर्थात् केवल ध्येय मात्र की ओर ही वृत्ति का प्रवाह चलना। उसके बीच किसी दूसरी वृत्ति का न उठना ध्यान है।⁹⁹

महर्षि महेश योगी जी के अनुसार चेतना का एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना इस क्रिया को ध्यान कहते हैं। अर्थात् ध्यान चेतना की एक लहर है। जो चेतना की चंचल स्थिति को चेतना की निश्चल स्थिति में बदल दे। महर्षि जी कहते हैं कि मन की स्थिरता का नाम ध्यान नहीं है। मन की चाल का नाम ध्यान है।

(7) ध्यान

योग सूत्रों के अनुसार ध्यान का तात्पर्य चेतना की अन्तर्वस्तुओं के अबाध प्रवाह से है। ध्यान में दृश्य, द्रष्टा और देखने की प्रक्रिया में एकत्व हो जाता है क्योंकि ये ही चेतना की अन्तर्वस्तुएं हैं। इस प्रकार ध्यान केवल एक मानसिक प्रक्रिया नहीं होती, वह एक अनुभव बन जाता है।

ध्यान की अवस्था में साधक की सजगता ध्यान के प्रतीक के साथ एकाकार या लीन हो जाती है। जहां चेतना मात्र एक इकाई बन जाती है और मानसिक अनुभव यथार्थ बन जाता है। यह ध्यानात्मक अवस्था सम्पूर्ण मानवीय अभिव्यक्ति को संयम के अनुभव से अनुप्राणित करती है।

ध्यान के द्वारा हम तनावों से मुक्ति पाते हैं। ध्यान का संबंध अनुभव सिद्ध अन्तः चेतना से है। हमारे भीतर की यही चेतना ध्यान का विषय होती है अर्थात् ध्यान वह प्रक्रिया है जिसमें हम अपनी चेतना का दर्शन करते हैं।

(8) समाधि

ध्यान करते करते जब चित्त ध्येयाकार में परिणित हो जाता है, उसके अपने स्वरूप का अभाव हो जाता है। उसे ध्येय से भिन्न उपलब्धि नहीं होती उस अवस्था को समाधि कहते हैं।¹⁰⁰

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योग सूत्रों के अनुसार समाधि वह अवस्था है जहां व्यक्ति को स्वयं अपने प्रति चेतना का अभाव होता है और केवल ध्येय का आभास होता है ।

समाधि की अवस्था में मन का व्यापार स्वमेव रुक जाता है किन्तु इसे मन की जड़ अवस्था भी नहीं कह सकते । ऐसा प्रतीत होता है कि मानों इस अवस्था में मन शून्य हो गया हो । उसमें अन्य किसी बात की सजगता नहीं रहती।

योग के अनुसार समाधि एक ऐसी अवस्था है जिसमें मन अविचलित भाव से एक विषय से एकाएक हो जाता है । कोई अस्थिर वृत्तियां उसमें नहीं आती । विषय की चेतना भी नहीं रहती ।

समाधि में साधक चेतना के उस बिन्दु पर पहुंचता है जिसके परे चेतना का कोई अस्तित्व नहीं होता । वह चेतना के उस गहन तल पर अवस्थित होता है जहां उसका स्वयं का अस्तित्व ही थम जाता है ।

प्राचीन लेखकों ने समाधि को चेतना की वह उच्चतम अवस्था कहा है जहां मनोशरीर भी काम नहीं करता । वहां केवल आत्मा क्रियाशील होती है । उस अवस्था में ज्ञान के आधार की भी आवश्यकता नहीं रह जाती

पंचकोष

चेतना के 5 तल होते हैं । प्रथम है शरीर अथवा अन्नमय कोश, दूसरा है प्राणमय कोश, तीसरा है मनोमय कोश, चौथा विज्ञानमय कोश, पांचवा व अंतिम कोश है आनन्दमय कोश । इनमें आनन्द मय कोश सूक्ष्मतम होता है । जहां केवल शुद्ध आनन्द के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं होता । इन सबसे सूक्ष्म आत्मा होती है । जिसे शुद्ध तम चेतना या पुरुष कहते हैं ।

समाधि की उपलब्धि तभी सम्भव होती है जब चेतना परिष्कृत होती हुई गहन से गहनतर तल पर उतरती जाती है, जहां वस्तु, गति, विचार, वृत्ति सबका अतिक्रमण होता है ।

समाधि दो प्रकार की होती है एक है सम्प्रज्ञात समाधि व दूसरी है अस्मृज्ञात समाधि । सम्प्रज्ञात समाधि में प्रज्ञा शब्द का अर्थ है बोध और सम

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

का अर्थ सहित होता है, अतः असम्प्रज्ञात समाधि वह अनुभवातीत अवस्था है जहां सहजता युक्त बोध बना रहता है ।

पतंजलि के अनुसार वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता इन चारों के संबंध से युक्त जो समाधि है वह सम्यक् ज्ञान पूर्वक समाधि कहलाती है ।¹⁰¹

जब चित्त विषयों पर इस तरह ध्यान केन्द्रित करता है तो उसे सवितर्कसमाधि कहते हैं । जब पांच तन्मात्रों पर उनके गुणों सहित ध्यान लगाते हैं तो सविचार समाधि, जब केवल तन्मात्रों पर ध्यान रहता है, गुणों पर नहीं तो निर्विचार समाधि होती है ।

आनन्द की स्थिति में मन बुद्धि पर इस प्रकार केन्द्रित होता है कि ऐन्द्रिय व्यापार से आनन्द विद्यमान रहे । अस्मिता की दशा में बुद्धि निर्गुण, निराकार शुद्ध तत्त्व पर केन्द्रित होता है । इन सभी स्थितियों में ज्ञेय विषयों पर मन चेतना रूप में केन्द्रित होता है। इसलिए इन सबको सम्प्रज्ञात समाधि (विषयों के ज्ञान सहित) कहते हैं ।

इस प्रकार सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था में पूर्ण, सतत् अविरल सजगता बनी रहती है । यह सजगता ज्ञान युक्त होती है ।

दूसरे प्रकार की समाधि में समस्त मानसिक क्रियाओं को विराम का सतत् अभ्यास किया जाता है. उसमें प्रत्यय हीन संस्कार मात्र शेष रहता है ।¹⁰²

असम्प्रज्ञात में प्रतीक की चेतना का अभाव होता है । चेतना जरा भी निष्क्रिय नहीं होती, लय की अवस्था में भी गहराई में संस्कारों की लहरें विद्यमान होती हैं ।

जब संस्कार भी पूर्णतः निश्शेष हो जाते हैं तो चेतना का पूरा लोप हो जाता है । इसी अवस्था को निर्बीज समाधि कहते हैं । असम्प्रज्ञात समाधि कोई स्थायी अवस्था नहीं होती । यह एक अस्थायी अवस्था है जो एक अवस्था से अन्य उच्चतर अवस्था में पहुंचने के संक्रमण-काल जैसी होती है ।

1.11.6 योग के प्रमुख भेद

साधनों के भेद से योग को निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त किया गया है

1. राजयोग -

राजयोग को राजसी, उच्चतर अथवा सर्वोच्च योग कहा जा सकता है। राजयोग का मूल लक्ष्य मानव व्यक्तित्व की सुषुप्त शक्तियों को जाग्रत करना है। प्रायः समस्त योगों एवं विशेषकर राजयोग द्वारा सदैव यह स्वीकृत एवं प्रतिपादित किया गया है कि मानव व्यक्तित्व की संरचना के अंतर्गत एक गहरी एवं सुषुप्त आत्मिक-आध्यात्मिक शक्ति या क्षमता सन्निहित है। यदि इस क्षमता को उपयोग में लाने की विधि की जानकारी हो तथा उसके प्रति सजगता बनी रहे तो प्रत्येक व्यक्ति उसे प्राप्त कर सकता है।

अतः सुषुप्त शक्तियों को जाग्रत करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राजयोग अभ्यासों के समूह को सर्वाधिक प्रभावशाली विधियों के रूप में स्वीकार किया गया है।

राजयोग को दो समूहों में विभाजित किया गया है। प्रथम समूह के अंतर्गत-यम, नियम, आसन और प्राणायाम ये चार अवस्थाएँ आती हैं। इस प्रथम समूह को बहिरंग योग कहते हैं क्योंकि ये व्यक्ति के बाह्य व्यक्तित्व व्यवहार और क्रिया को रूपान्तरित करते हैं। इन चार अवस्थाओं के माध्यम से हम उन वृत्तियों को नियंत्रित करने में सक्षम होते हैं जो बाह्य उत्तेजना और वातावरण से प्रभावित होती हैं।

राजयोग के दूसरे समूह के अंतर्गत-प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये चार अवस्थाएँ आती हैं। इसमें मनुष्य को ऐन्द्रिय अन्तर्मुखता की प्रारम्भिक अवस्था से लेकर समाधि की अवस्था तक फैले हुए मन के सम्पूर्ण क्षेत्र का अनुभव करना होता है।

2. ज्ञानयोग -

योग का दूसरा पहलू ज्ञानयोग है। ज्ञानयोग का तात्पर्य ध्यानात्मक सजगता की ऐसी प्रक्रिया से है जो हमें अपनी आन्तरिक प्रकृति के निकटतर

॥ ३ ॥

...

...

...

...

...

...

...

...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

लाती है तथा हमारे अन्दर अन्तर्ज्ञात क्षमता या आत्मिक ऊर्जा उत्पन्न करती है । यह अन्तर्ज्ञात या प्रदीपक विद्या ही ज्ञानायोग का अंतिम परिणाम है ।

ज्ञानयोग का लक्ष्य चिन्तनात्मक-कल्पनात्मक ज्ञान को हटाकर अनुभवात्मक ज्ञान प्राप्त करना है जो कि आपके अपने अनुभव और बोध पर आधारित हो ।

ज्ञानयोग की प्रक्रिया आत्मविश्लेषण के साथ प्रारंभ होती है । यह गहन आत्मान्वेषण के भाव से निर्देशित एक ध्यान योग है । इसमें हम अपनी अन्तर्ज्ञात क्षमता, योग्यता और विशिष्टता के प्रति सजग होते हैं । ये विशेषतायें ही पूर्व निबन्धित मन की सीमाओं को तोड़ती हैं और इस प्रकार हमें अपने श्रोत के निकटतर लाती हैं । इसलिए ज्ञानयोग को ध्यान का एक अंग कह सकते हैं ।

3. कर्म योग -

कर्म का शाब्दिक तात्पर्य कार्य से है । जब कर्म के साथ योग शब्द जोड़ देते हैं तो कर्मयोग बने जाता है तब इसका तात्पर्य ऐसे कार्य से होता है जिसका सम्पादन ध्यानात्मक सजगता से किया गया हो ।

कर्म योग का प्रमुख कार्य है- स्वयं के कार्यों को समांजस्यपूर्ण बनाते हुए उच्चतर सत्ता से संयोग स्थापित करना । कर्मयोग के अभ्यास द्वारा शक्ति और चेतना का बिखराव नियंत्रित होता है जिसके परिणाम स्वरूप अन्ततः शुद्ध एवं अनुभवातीत अवस्था की प्राप्ति होती है ।

कर्मयोग का लक्ष्य है सदैव देते रहना, वहां प्राप्ति या उपलब्धि का कोई भाव नहीं रहता अर्थात् बिना किसी इच्छा या व्यक्तिगत प्रयोजन अथवा अभिप्राय के कार्य सम्पादित करना ही कर्मयोग है । जो कर्म फल की आशा से हम अपने लिए करते हैं, वे हमें फल भोगने के लिए बंधन में ले आते हैं और जो फलाशात्यागपूर्वक भगवान के लिए करते हैं वे हमें जड़मुक्त कर परमधाम को पहुंचाते हैं । इस प्रकार कर्म करते समय अपने परमधाम को ठीक रखना ही कुशलता है और यह कुशलता ही योग है ।

4. भक्तियोग -

अनुग्रह, प्रेम, भक्ति ये तीनों एक ही स्नेह के पर्याय हैं । केवल इसी स्नेह के ऊपर समस्त विश्व का उदय और आनन्द निर्भर है । अपरिभित कल्याण

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

गुणों के ज्ञान से उत्पन्न हुए, अपने समस्त संबंधीजन तथा पदार्थों से ही क्या, प्राणों से भी कई गुना अधिक हजारों विघ्न आने पर भी न टूटने वाले, अत्यधिक सुदृढ़, गंगा प्रवाह के समान अखंड प्रेम के प्रवाह को भक्ति कहते हैं। जिस अखंड स्नेहधारा में सदा सर्वदा एक मात्र भगवान ही विषय हैं, अन्य नहीं, वही उत्कृष्ट अथवा अनन्य भक्तियोग है।

5. हठयोग -

यौगिक साहित्य के अनुसार हठ शब्द दो मंत्रों हं और टं के संयोग से बना है। इडा और पिंगला नाडियों से इन मंत्रों का साम्य स्थापित किया जाता है। इडा नाडी हमारे शरीर की एक प्रमुख प्राणिक वाहिका है। यह प्राण के निष्क्रिय पहलू का प्रतीक है जो मनः शक्ति के रूप में अभिव्यक्त और अनुभूत होती है। पिंगला का संबंध और शक्ति, शारीरिक आयाम में प्राणशक्ति के रूप में अभिव्यक्त होती है।

इस प्रकार हठयोग का तात्पर्य ऐसे योग से है जिसके द्वारा इन दो शक्तियों के बीच संतुलन स्थापित किया जाता है। हठयोग के अभ्यासों को मूलतः छः समूहों में विभक्त किया गया है - नेति, धौति, बस्ति, नौलि, कपालभाति, और त्राटक। योग शास्त्रों में इस बात का उल्लेख है कि शरीर के अन्दर जीवनी शक्ति के दुरुपयोग और असंतुलन की अवस्था से बचने के लिए हठयोग के अभ्यास विशेष उपयोगी सिद्ध होते हैं।

6. मंत्रयोग -

मंत्र का सामान्य अर्थ है- ध्वनि कम्पन। मंत्र का शाब्दिक अर्थ है - वह शक्ति जो मन को बंधन से मुक्त करती है। (मनमात् त्रायतेइति) मन केवल एक वस्तु से दूसरी वस्तु की ओर भागता रहता है क्योंकि वह अपने को बहलाना चाहता है। हमारा मन जीवन के तामसिक और राजसिक गुणों की ओर आकर्षित होता रहता है। यह व्यक्ति की स्वार्थपूर्ण इच्छाओं, आकांक्षाओं की पूर्ति करता है। मन को इन इच्छाओं-आकांक्षाओं तथा अहंकार से मुक्त करना ही मंत्र का उद्देश्य है।

7. लययोग -

लय शब्द का अभिप्राय विलीन होने से है। सिद्धान्तः लय योग क्रिया और कुण्डलिनी योग के समान है। लय योग की तकनीकें मुख्यतः ध्यानात्मक

... १३ ...

— परिचय —

... १४ ...

— परिचय —

... १५ ...

— परिचय —

... १६ ...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्रकृति की हैं। तथा शक्ति की अभिव्यक्ति के साथ उन्हें संयोजित और सुमेलित करती हैं। लय योग में शक्ति जागरण के साथ-साथ साधक को चेतना के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों का अवलोकन करना चाहिए। लय योग में चेतना का अवलोकन अधिक तीव्रतापूर्वक किया जाता है। वहां शक्ति केवल एक उपकरण होती है जिसके माध्यम से चेतना के अन्दर परिवर्तन घटित होते हैं।



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

संदर्भ - अध्याय : 1

1. योग : समाधि: स च सार्व भौमश्चित्तस्य धर्म :
2. योगश्चित्त वृत्ति निरोधः
3. संसारोत्तरणे युक्तियोग शब्दे ना कथ्यते ।
4. समत्वं योग उच्यते
5. योगः कर्मसु कौशलम्
6. पुंप्रकृत्योर्वियोगेऽपि योग इत्यामिधीयते
7. यदा पञ्चावतिष्ठन्त ज्ञानानि मना सह , बुद्धिश्च नविचेष्टति तामाहु परमां गतिम
तां योगमति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रिय धारणाम, अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ
(कठोपनिषद अ 2, वल्ली 3)
8. द्वौ क्रमोचित्त नाशस्य योगो ज्ञानं च राघवः, योगो वृत्तिद निरोधो हि ज्ञानं सम्यगवेक्षणम
असाध्यः कस्योचिद्योगः कस्यचित्तत्वनिश्चयः, प्रकारौ द्वौ ततो देवो जगाद परमः शिवः
(योगवशिष्ट)
9. महाभारत (11/34965) अहिर्बुध्नयसंहिता (प्राकृत मंडल 12/39)
मनुस्मृति (1/88/89) और भामती (2/1/3) इसी तथ्य को पुष्ट करते है ।
10. विद्यासहायवन्तमादित्यस्थं समाहितम् ।
कपिलं प्राहुराचार्योः सांख्य निश्चितनिश्चिताः ॥
हिरण्यगर्भो भगवानेषच्छन्दसि सुस्तुतः ।
सोऽम योग रतिर्ब्रम्हन् ! योग शास्त्रेषु शब्दितः (महा. 339/68-69)
11. “कपिलोऽग्रज इति पुराणवचनात् कपिलो हिरण्यगर्भो वा व्ययदिश्यते ”
(श्वे. उप. शांकरभाष्य)
12. कपिलं परमर्षि चयं प्राहुर्यतयः सदा ।
अग्निः स कपिलो नाम सांख्ययोग प्रवर्तकः ॥ (महा. 11/3/65)
13. भूतं भूतं भविष्यं च सर्व वेदात् प्रसिध्यति । (मनु. 12/96)
14. यस्माद्धते न सिध्यति यज्ञो विविश्चितश्चन ।
स धीनां योमिन्वति ॥ (ऋ. संहिता मंडल 1 / सूक्त 18/ मंत्र-7)

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

15. यज्ञो दानं तपैश्व पावनानि मनीषिणाम् (गीता 18/5)
16. आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यः मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः । वृहदारण्यकोपनिषद् 2/4/5)
17. इज्याचारदंभाहिसादानस्वाध्यायकर्मणाम् ।
अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम् ॥
18. सं ते मनो मनसा सं प्राणः प्राणेन गच्छताम् ॥ (यजुर्वेद 6/18)
19. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽमीशुभिर्वाजिनऽङ्ग्व । (यजुर्वेद 34/6)
20. युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्वाय सविता धियः ।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथित्याऽअध्यामरत् ॥ (यजु. 11/1)
21. प्राणाय स्वाहाऽपानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा (यजु. 22 /3)
22. युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे ।
स्वर्गाय शक्त्या ॥ (यजु. 11/2)
23. युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्यतोधिया विवम् ।
वृहज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान् ॥ (यजु. 11/3)
24. आयुर्यज्ञेन कल्पतांप्राणो यज्ञेन कल्पतां, चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोत
यज्ञेन कल्पतां, पृष्ठयज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् ।
प्रजापतेः प्रजाऽअभम स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम ॥ (यजु. 9 /21)
25. महांश्इन्द्रो यऽओजसा पर्जन्यो वृष्टि मांश्इव ।
स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ॥ (यजु. 6/40)
26. पृथिव्या ऽअहमन्तरिक्षमारुह्यमन्तरिक्षाद्विवमारुहम् ।
दिवो नाकस्य पृष्ठातस्वर्ज्योतिरगामहम् ॥ (यजु. 17/67)
27. अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ॥ (अथर्व. 10/2/31)
28. यदग्रे स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् ।
स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥ (ऋ. 8/44/23)
29. योगहीनं कथं ज्ञानं मोक्षदं भवतीहभो : ।
योगोऽपि ज्ञान हीनस्तु न क्षमो मोक्षकर्मणि
तस्माज्ज्ञानं च योग च मुमुक्षुदृढयभ्यसेत ॥

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

30. योग शिखा महागुहं यो जानाति महामतिः ।
न तस्य किंचिद ज्ञातं त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥
31. तस्मादेवंविच्छान्तो दान्त उपरतस्तितक्षुः
समाहितो भूत्वात्मन्येवात्मानं पश्यति । (वृह. 4/4/23)
32. विविक्तदेशे च सुखासनस्थः
शुचिः समग्रीवशिरः शरीरः । (कैवल्योपनिषद्)
33. यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्सांख्यं योगगम्यसे । (गर्भोपनिषद्)
34. समाधिनिर्धतम य चेत्तसो
निवेशितस्यात्मनि यत्सुमं लभेत (मैत्रायणी श्रुतिः)
35. योगयुक्त्या तु तद्भस्म प्लाव्यमानं समन्ततः ।
शाक्तेनामृतवर्षेण हाधिकारान्निवर्तते ॥ (वृहज्जावालः)
36. प्राणान् प्रपीडेह स युक्तचेष्टः
क्षीणे प्राणे नासिकयोच्छवसीत ।
दुष्टाश्वयुक्तमिव वाहमेनं
विद्वान मनो धारयेताप्रमतः ॥ (श्वे. उप. 2/9)
37. अध्यात्मयोगधिगमेन देवं
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥ (कठ 1/2/12)
38. ते सर्वगं सर्वतः प्राप्यधीरा
युक्तात्मानः सर्वमेवाविशन्ति ॥
वेदान्तविज्ञान सुनिश्चतार्थः
संन्यासयोगद्यतय शुद्धसत्त्वाः ।
ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले
परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे ॥ (मुण्ड. 3/2/5-6)
39. इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानध्मव्ययम्
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकतेऽब्रवीत् ॥1॥
एवं परम्पराप्राप्तमियं राजर्षयो विदुः ।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप ॥2॥
स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोऽसि मै सरवा चेति रहस्यं होतदुत्तमम् ॥3॥

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

40. समत्वं योग उच्यते (2/48)
 योगः कर्मसु कौशलम् (2/50)
 योगो निःस्पृहता स्मृता (6/12)
 आत्मौप्येन सर्वत्र योगास्तु समदर्शनम् ।
 श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥ (6/47)
 मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते
 श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः (12/2)
 मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
 मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ (9/34)
 सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।
 इष्टोऽसि मे हृदमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥
 मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥ (18/64-65)
41. तं विद्याद्दुःखसंयोग वियोगं योगसंज्ञितम्
 स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा (6/24)
42. सुखमात्यन्तिक यत्तद्बुद्धिगाहमतीन्द्रियम्
 वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः
 यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः
 यास्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते (6/21-22)
43. विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
 निर्ममो निरहंकारः स शान्तिं शान्तिमाप्तिं गच्छति ॥ (2/71)
44. सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
 ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ (6/29)
 यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
 तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥ (6/30)
 सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
 सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥ (6/31)
45. सांख्य में ज्ञान की प्रक्रिया से संबंधित दोनों पहलुओं को दो शब्दों द्वारा व्यक्त किया गया है- ज्ञान की अनुभूति वाला तत्त्व चित्त कहा गया है तथा वह तत्त्व जो एन्द्रिय ज्ञेय को मन में प्रतिबिम्बित करता है और बिम्ब बन जाता है वह समूचा बुद्धि कहा गया है। चित्त के बुद्धि में प्रतिबिम्बित होने की प्रक्रिया ही ज्ञान की प्रक्रिया है (भारतीय दर्शन का इतिहास)
46. चित्त इन्द्रियों के माध्यम से बाहर जाकर उन पदार्थों पर पड़ता है और उनके प्रतिबिम्ब के रूप में परिणत हो जाता है

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

“इन्द्रियाण्येव प्रणालिका चित्त संचरण मार्गः तै संयुज्य तद्गोलकद्वारा बाह्य वस्तुषूपरक्तस्य चित्त स्येन्द्रिय साहित्ये नैवार्थाकारः परिणामो भवति ।” योगवार्तिक 1-4-7

47. चित्त नदी नामें भयतो वाहिनी । वहति कल्याणाय वहति पापाय च । या तु कैवल्य प्राग्भारा विवेक विषय निम्न सा कल्याण वहा । संसार प्राग्भाराऽविवेक विषय निम्ना पाप वहा ।
योगदर्शन 1/12 पर व्यास भाष्य

48. वृतयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः (पांतजल योग प्रदीप 1/5)

49. प्रमाण विपर्यय विकल्प निद्रा स्मृतय (पा.यो.प्र. 1/6)

50. प्रत्यक्षानुमानुगमा प्रमाणानि (पा.यो.प्र.1/7)

51. विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रपिष्टम् (पा.यो.सू. 1/8)

52. शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः (पा.यो.सू. 1/9)

53. अभाव प्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥ (पा. यो. सू. 1/10)

54. अनुभूतिविषया संप्रमोषः स्मृतिः (पा. यो. सू. 1/11)

55. यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथेवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
(शुल्क यजुर्वेद 34/1)

56. येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

57. यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ञयोतिरन्तरमृतं प्रजासु
यस्मान्न ऋते किं चन कर्मक्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
(शुक्ल यजुर्वेद 34/1-2-3)

58. येनेदं भूतंभुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

59. यस्मिन्नृचः साम यजूं षि यस्मिन् प्रतिष्ठता रथनामाविवाराः ।
यस्मिंश्चत् सर्वमोत् प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

60. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजन इव ।
हत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठम् तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
(शुक्ल यजु. 34/ 4-5-6)
61. अभ्यास वैराग्यभ्यां तन्निरोधः ॥ (पा.यो.सूत्र 1/12)
62. तत्र स्थितौ यत्नोभ्यासः ॥ (पा.यो.सूत्र 1/13)
63. अम्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ (गीता 6 / 35)
64. स तु दीर्घकाल नैरन्तर्यं सत्काराऽऽसेवितो दृढभूमिः ॥ (पा.यो.सूत्र 1/14)
65. दृष्टा नुश्रविक विषय वितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम् ॥ (पा.यो.सूत्र 1/15)
66. तत्परं पुरुषख्यातेर्गणवैतृष्यम् ॥ (पा. यो. सू. 1/16)
67. यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधयोऽष्टावगुणानि ॥
68. अहिंसा सत्यास्तेयब्रम्हचर्यापरिग्रहा यमाः ॥ (पा. यो. सू. 2/28-30)
69. यस्तु सर्वानि भूतान्यात्मन्येवानुपश्रियति
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते (ईशा -6)
70. अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरात्यागः (पा,यो,सू- 2/35)
71. तन्क्षिप्तं पट्टमं ठाण महावीरेण देसियं ।
अहिंसा निउणा दिट्ठा सत्वभूजु संजमा ॥
जावन्ति लोएपाणा, तसा अदुवा थावरा ।
ते जाणमजाणं मा न हणे नौ विधायए ॥ (दश.अ. 6 गा. 9-10)
72. सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियम् ॥ (मनुस्मृति)
73. परत्र स्वबोध संक्रान्तये वागुप्ता सा यदि न वंचिता
भ्रान्ता व प्रतिपत्ति बन्धया वा भवेदति । एथा सर्वभूतो पकरार्थ
प्रवृत्ता, न भूतोपधाताय । यदि चैवमय्यमिधीयमाना भूतोपघात
परेवस्यान्न सत्यं भवेत् पापमेव भवेत् ॥
74. इष्टं श्रुतं चानुमित स्वानुभूतं यथार्थतः ।
कथनं सत्यभिव्युक्तं पर पीडा विवर्जितम् ॥
(स्कं. पु. 1/2/55/16, लिग. पु. पू. भा. 8/13)



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

75. सत्यं न सत्यं खलुयत्रहिंसा दयान्वितं चानृतमेव सत्यम् ।
हितनराणां भवतीह येन तदेवसत्यं नतथान्यथेव ॥ (देवी भागवत तृ. अ. 11/36)
76. अस्तेयं प्रतिष्ठायां सर्वं रत्नोपस्थानम् ॥ (पा. यो. सू. 2/37)
77. अश्वमेघं सहस्रं च सत्यं च तुलया धृतम् ।
अश्वमेघं सहस्रं द्विं सत्यमेव विशिष्यते ॥
78. अन्याये न परधनादि ग्रहणं स्तेयम् । (मनुस्मृति 6/92)
79. ब्रम्हचर्येण तपसा देवामृत्युमुपाघ्नत ।
इन्द्रो ह ब्रम्हचर्येण देवेभ्यः स्वरा मरत् ॥ (अथर्व. वे. अध्याप 3, सूक्त 5 मं/19)
80. ब्रम्हचर्यप्रतिष्ठयां वीर्यलाभः ॥ (पा. यो. सू. 2/38)
81. ऋतुकाले स्वदारेषु संगतिर्या विधानतः ।
ब्रम्हचर्यं तदेवोक्तं ग्रहस्थाश्रमवासिननाम् ॥ (श्रीयाज्ञवल्क्य)
82. न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम् ।
उर्ध्वरेता भवेद् यस्तु स देवो न तु मानुषः ।
83. कर्मणामनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा ।
सर्वत्र मैथुनं त्यागी ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ॥ (गरुड पूर्व. आचार. 238/6)
84. यतीनां सर्वं सन्यासो मनोवाक् काय कर्मणा ।
गृहस्थापनां मनसारं मृत एषोऽपरिग्रहः ॥ (स्कंद पु. 1/2/55/19)
85. शौचं संतोषतपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधाननि नियमाः ॥ (पा. यो. सू. 2/32)
86. शौचं वाक् काय मनसा शुद्धिः ।
वाङ्मनोजलं शौचानि सदायेषां दिज्जनमनाय ॥
त्रिभिः शौचरूपेतोयः सस्वर्ग्यो नात्र संशयः ॥ (वृद्ध पाराशर 6/126)
87. संतोष परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत् ।
संतोषं मूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः ॥ (मनुस्मृति 4/12)
88. तपः स्वधर्मं वर्तित्वम् । (म. भा. वन. 3/3/88)
89. तपः सारं इन्द्रिय निग्रहः । (चाणक्य सूत्र 5/85)

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

90. तदहर ब्राम्हणो भवति यदहस्वाध्यायं ।
नाधीते तस्मान्स्वाध्यायोऽध्येतव्यः ॥ (शतपथ ब्रा. 11/5/7)
91. स्वाध्यायाभ्यासनं चैव बाहुययं तप उच्यते । (गीता 17/15)
92. त्रयोधर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययन दानमिति । (छान्दोग्य 2/23/1)
93. यावन्त हवा इयां पृथिवीं वित्रेण पूर्णाददल्लोकं जयति
त्रिस्तावन्तं जयति भूयां स वाक्ष्ये य एवं विद्वान अहरहः स्वाध्यायमधीत् ।
(शतपथ 11/5/7)
94. स्थिर सुख आसनम् ॥ (पा. यो. सू. 2/46)
95. सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्याकाशादेव समुत्पद्यन्ते ,
आकाशं प्रत्यस्तं यन्ति । (छा. 1/9/1)
96. दहन्ते ध्यायमानां धातूनां हि यथा मला :
तथेन्द्रियाणां दहन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् (मनुस्मृति)
97. स्वविषया सम्प्रयोगे चित्त स्वरूपानुकार इविन्द्रियाणां प्रत्याहारः ॥
(पा.यो.सू. 2 / 54)
98. देशबन्धनिचत्तस्य धारणा । (पा. यो. सू. 3/1)
99. तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ॥ (पा. यो. सू. 3/2)
100. तदेवार्थमात्र निर्मासं स्वरूप शून्यमिव समाधिः ॥ (पा.यो.स 3/3)
101. वितर्क विचारानन्दास्मितानुगमात् सम्प्रज्ञातः ॥ (पा. यो. सू. 1 / 17)
102. विराम प्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कार शेषोऽन्यः ॥ (पा.यो. सू. 1/18)



अध्याय : 2

योग का बाल-विकास से संबंध

- 2.1 मानव-समाज में बालक की संस्थिति
- 2.2 बालक-केन्द्रित शिक्षा का औचित्य
- 2.3 बालक के विकास का अर्थ
- 2.4 बाल-विकास के आयाम
 - क. वंशानुक्रम,
 - ख. वातावरण
- 2.5 बालक का सर्वांगीण विकास
 - क. शारीरिक
 - ख. क्रियात्मक
 - ग. संवेगात्मक
 - घ. सामाजिक
 - ङ. भाषा-विकास
 - च. मानसिक विकास
 - छ. चरित्र का विकास
 - ज. यौगिक दृष्टि से विकास



अध्याय : 2

योग का बाल-विकास से संबंध

- 2.1 मानव-समाज में बालक की संस्थिति
- 2.2 बालक-केन्द्रित शिक्षा का औचित्य
- 2.3 बालक के विकास का अर्थ
- 2.4 बाल-विकास के आयाम
 - क. वंशानुक्रम,
 - ख. वातावरण
- 2.5 बालक का सर्वांगीण विकास
 - क. शारीरिक
 - ख. क्रियात्मक
 - ग. संवेगात्मक
 - घ. सामाजिक
 - ङ. भाषा-विकास
 - च. मानसिक विकास
 - छ. चरित्र का विकास
 - ज. यौगिक दृष्टि से विकास

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अध्याय 2

योग का बाल विकास से संबंध

2.1 मानव समाज में बालक की संस्थिति -

मानव समाज के जीवन-प्रवाह में बालक का स्थान असाधारण महत्व रखता है। वह अतीत का परिपाक और भविष्य की आशा है। जिन संस्कारों से युक्त होकर, जिन विचारों को, भावों को ग्रहण कर वह पूर्ण रूप से खड़ा होगा, उस पर मानव उन्नति या अवनति निर्भर रहेगी। इसीलिए 'बालक' को मानव-समाज का सबसे मनोहर स्वरूप कहा गया है।

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि राष्ट्र का आधार वह समर्थ, सशक्त भावी पीढ़ी है जो संस्कारवान हो। आज के आस्था-संकट व सांस्कृतिक प्रदूषण के युग में यह एक अनिवार्य आवश्यकता है कि भौतिक विकास के साथ-साथ बालकों के भावनात्मक नव-निर्माण व सर्वांगीण विकास पर भी समान रूप से ध्यान दिया जाय।

2.2 बालक-केन्द्रित शिक्षा का औचित्य -

सभ्यता व शिक्षा के विकास के साथ-साथ वर्तमान में बालकों के अध्ययन की आवश्यकता एवं उनका महत्व बढ़ता जा रहा है। प्राचीन काल में बालक को पूर्व निर्धारित शिक्षा के उद्देश्यों के अंतर्गत ही अध्ययन करना पड़ता था। प्राचीन कालीन शिक्षा अध्यापक केन्द्रित थी अर्थात् अध्यापक की इच्छानुसार ही पाठ्यक्रम, अध्यापन-पद्धति, परीक्षा-कार्य आदि निर्धारित होते थे। अब शिक्षा अध्यापक के स्थान पर बालक केन्द्रित करने पर अधिक बल दिया जाने लगा है क्योंकि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करके उसे सुयोग्य नागरिक बनाना है।

छोटा बच्चा बहुत ही जिज्ञासु होता है। वह एक खुली किताब की तरह निष्कपट, सृजनशील तथा सीखने के लिए तत्पर होता है। बड़ों का अनुकरण करना उसका स्वभाव होता है।



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

आवश्यकता है उसे उचित वातावरण प्रदान करने की जिससे उसका व्यक्तित्व पूर्ण विकसित हो सके। यदि हम उसके सामने श्रेष्ठ जीवन का मार्ग प्रस्तुत करते हैं उसे उसकी स्वाभाविक, सहज व सृजनात्मक क्षमता से परिचित कराते हैं तो वह अवश्य ही आदर्श नागरिक बनने में सफल होता है।

प्रत्येक मकान की आधारशिला उसकी अन्य संरचना से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसी प्रकार प्रत्येक बालक का प्रारम्भिक विकास बाद के विकास की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होता है। गर्भावस्था से लेकर मृत्युपर्यन्त मनुष्य में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं, कभी ये परिवर्तन तेज गति से होते हैं तो कभी धीमी गति से। हम ध्यान दें या न दें परन्तु प्रत्येक व्यक्ति में ये परिवर्तन हमेशा होते रहते हैं। जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में ये परिवर्तन जल्दी-जल्दी होते हैं, इसलिए हमें यह पता चलता है कि बालक बढ़ रहा है किन्तु प्रौढ़ व्यक्ति में ये परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ते फिर भी विकास का क्रम जारी रहता है। विकास का अर्थ केवल बढ़ना ही नहीं है, वह गुणात्मक भी होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विकास निरन्तर प्रवाहित होने वाली प्रक्रिया है जो जन्म से भी पूर्व, गर्भकाल से प्रारम्भ हो जाती है।

2.3 बालक के विकास का अर्थ -

हरलॉक के मतानुसार "विकास का अर्थ है वह व्यवस्थित व समानुगत परिवर्तन जो परिपक्वता की प्राप्ति में सहायक हो।"¹ "व्यवस्थित" शब्द का अर्थ है कि इन परिवर्तनों में कोई न कोई क्रम अवश्य होगा व प्रत्येक परिवर्तन अपने पूर्व परिवर्तन पर निर्भर रहेगा। "समानुगत" शब्द का तात्पर्य है कि उन परिवर्तनों में सामंजस्य होना आवश्यक है।

'विकास' को परिभाषित करते हुए आइजनेक ने लिखा है - "मानव विकास का अर्थ है - मानव में होने वाले परिवर्तनों का क्रम।"²

विकास के संबंध में गेसल का विचार है कि विकास केवल धारणा नहीं है, विकास का निरीक्षण किया जा सकता है, मूल्यांकन किया जा सकता है तथा मापन भी किया जा सकता है। विकास का मापन शारीरिक तथा व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से किया जा सकता है परन्तु विकासात्मक क्षमताओं की दृष्टि से व्यावहारिक मापन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।³

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि परिवर्तनों की श्रृंखला ही विकास है परन्तु सभी परिवर्तन एक ही प्रकार के नहीं होते। ये

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

सभी परिवर्तन विकास की प्रक्रिया को अनेक प्रकार से प्रभावित करते हैं। इन परिवर्तनों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है -

- (1) आकार संबंधी परिवर्तन
- (2) अनुपात संबंधी परिवर्तन
- (3) पुराने लक्षणों का लोप और
- (4) नवीन लक्षणों को ग्रहण करना

कद बढ़ना, वजन बढ़ना, शरीर के अन्य भागों का विकास आदि आकार संबंधी परिवर्तनों के स्पष्ट लक्षण हैं। एक बालक व वयस्क में अनुपात संबंधी विभिन्नता पाई जाती हैं। 13-14 वर्ष की आयु में जब बालक किशोरावस्था में प्रवेश करता है तब बालक व वयस्क के शारीरिक अनुपात में समानता आने लगती है।

बालक के विकास क्रम में कई पुराने लक्षण लुप्त हो जाते हैं ; जैसे ग्रीवा ग्रंथि (Thymus gland) तथा शीर्ष ग्रंथि (Pineal gland) का लुप्त हो जाना। उसी प्रकार पहले के बाल (Baby hair) तथा दूध के दाँत भी लुप्त हो जाते हैं।

परिवर्तनों की श्रृंखला में नवीन लक्षणों को ग्रहण करना भी एक विशेषता है। शारीरिक तथा मानसिक रूप से बालक के नये दाँत आते हैं, लैंगिक विशेषतायें प्रगट होने लगती हैं। उसमें लैंगिक जिज्ञासा, नैतिकता, धार्मिकता व स्वाभाविकता आदि का भी विकास होता है।

2.4 बाल विकास के आयाम -

हमारे मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि यह विकास किन बातों से प्रभावित होता है ?

वैज्ञानिकों ने इसके दो प्रमुख कारण बताये हैं -

- (क) वंशानुक्रम
- (ख) वातावरण

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (१)
- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (२)
- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (३)
- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (४)

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना

- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (१)
- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (२)
- संस्कृत-भाषा-शब्द-कोश-प्रस्तावना (३)

(क) वंशानुक्रम -

हम में से प्रत्येक व्यक्ति दो प्रभावों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया का परिणाम है। वह क्या है ? और वह कैसे बना ? इसके लिए दो बातें उत्तरदायी हैं - एक तो प्रत्येक व्यक्ति में अपनी कुछ ऐसी विशेषतायें होती हैं- जिन्हें वह जन्म से वंशानुक्रम द्वारा प्राप्त करता है। वंशानुक्रम में उन गुणों या विशेषताओं का समावेश होता है जो हमें अपने माता-पिता तथा पूर्वजों द्वारा जन्म से प्राप्त होती हैं।

दूसरी बात है - प्रत्येक व्यक्ति का पालन-पोषण तथा विकास प्रारंभ से ही किसी विशेष वातावरण में होता है। वातावरण से उन परिस्थितियों और प्रभावों को समझा जा सकता है जो जन्म के पूर्व से ही प्रारंभ होकर जीवन भर हमारे चारों ओर रहते हैं और जो दूसरी क्रियाओं पर निरंतर प्रभाव डालते रहते हैं।

वंशानुक्रम का अर्थ - पीटरसन के अनुसार "व्यक्ति को उसके माता-पिता के द्वारा उसके पूर्वजों से जो प्रभाव प्राप्त होता है वही उसका वंशानुक्रम है।"⁴

बुडवर्थ और मारिक्वस के अनुसार "वंशानुक्रम में वे सभी कारक आ जाते हैं जो व्यक्ति में जीवन आरंभ के समय उपस्थित होते हैं, जन्म के समय नहीं वरन् गर्भाधान के समय अर्थात् संस्कार जन्म से लगभग नौ माह पूर्व उपस्थित होते हैं।"⁵

प्रत्येक बालक रंग, रूप, आकृति आदि में अपनी माता-पिता से मिलता-जुलता है। इसका कारण है- माता-पिता से प्राप्त होने वाले गुण। ऐसा पाया जाता है कि विद्वान माता-पिता के बालक विद्वान होते हैं परन्तु यह भी देखा जाता है कि माता-पिता विद्वान होने पर भी उनके बच्चे मूर्ख होते हैं ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बच्चा अपने माता-पिता के साथ-साथ उनके पूर्वजों से भी अनेक शारीरिक व मानसिक गुण प्राप्त करता है।

वास्तव में हमारा जन्म वंशानुक्रम द्वारा ही होता है। भारतीय समाज में जातिवाद का उद्गम सम्भवतया इसी तथ्य को ध्यान में रखकर हुआ है। वंशानुक्रम के आधार पर ही समस्त मानव जाति को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्गों में विभक्त किया गया है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वंशानुक्रम को समझने के लिए हम कह सकते हैं कि जैसा बीज बोया जायेगा वैसा ही फल प्राप्त होगा। प्रत्येक मनुष्य के शरीर का निर्माण कोषों (Cells) द्वारा होता है। शरीर का आरंभ केवल एक कोष से होता है जिसे 'संयुक्त कोष' [Zygote] कहते हैं। यह कोष 2, 4, 8, 16, 32 इसी क्रम में बढ़ता जाता है। संयुक्त कोष दो उत्पादक कोषों [germ cells] का योग होता है। इनमें से एक कोष पिता का होता है जिसे पितृकोष [Sperm] और दूसरा माता का होता है जिसे मातृकोष [Ovum] कहते हैं। स्त्री व पुरुष के प्रत्येक कोष में 23-23 जोड़े होते हैं। हमारी सभी असंख्य परम्परागत विशेषतायें इन 46 गुणसूत्रों में निहित रहती हैं। ये विशेषतायें गुणसूत्रों में विद्यमान पिट्रयैकों [genes] में होती है। इन्हीं जीनों द्वारा बालक अपना रंग, रूप, कद व अन्य शारीरिक, मानसिक गुण प्राप्त करता है अर्थात् ये पितृक ही बालक में सम्भाव्य विशेषताओं व गुणों का निर्धारण करते हैं।

इस प्रकार बीज रूप में बालक माता-पिता के जिन गुणों, विशेषताओं तथा संस्कारों को प्राप्त करता है वही वंशानुक्रम है।

(ख) वातावरण -

बालक का विकास वंशानुक्रम के अतिरिक्त वातावरण से भी प्रभावित होता है। व्यक्ति के चारों ओर जो कुछ भी बाह्य विश्व में है वह उसका वातावरण या पर्यावरण है। वातावरण में सभी बाह्य शक्तियां प्रभावित करती हैं।

बोरिंग, लैंगफील्ड तथा वेल्ड के अनुसार - "जीन्स के अतिरिक्त व्यक्ति को प्रभावित करने वाली प्रत्येक वस्तु वातावरण है। एक व्यक्ति के वातावरण से तात्पर्य उन सभी उद्दीपनों के योग से है जिन्हें वह जन्म से मृत्यु तक ग्रहण करता है।"⁶

वातावरण दो प्रकार का होता है -

- (1) आन्तरिक वातावरण और
- (2) बाह्य वातावरण।

जन्म के पहले जीव गर्भ में अपने वातावरण से घिरा रहता है। यह आन्तरिक वातावरण है। प्राचीन काल से ही हमारे भारतीय आचार्य इस बात पर बल देते आ रहे हैं कि बालक की शिक्षा का प्रारंभ गर्भावरण से ही हो

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

जाता है । महाभारत में अभिमन्यु ने चक्रव्यूह को तोड़ना अपनी माता के गर्भ में ही सीखा था । यह कथा इस बात की पुष्टि में प्रमाण-सिद्ध होती है ।

गर्भावस्था में माता के प्रत्येक अंग का जैसा व्यवहार होगा, गर्भस्थ बालक का प्रत्येक अंग उसी के अनुरूप संस्कार तथा क्षमता ग्रहण करेगा अतः माता गर्भावस्था में अपनी समस्त इन्द्रियों को निरोग, स्वस्थ और सुन्दर रखे और अपने चरित्र को सर्वथा निर्दोष, निष्पाप व शुद्ध रखे ।

माता किस प्रकार अपनी संतान-धारण करे, इस विषय का सुन्दर ज्ञान 'यजुर्वेद' के निम्नलिखित मंत्र में पाया जाता है जिसमें माता अपने शिशु को सम्बोधित करती हुई कहती है -

“वांच ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि
श्रोतं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेदू ते शुन्धामि
पायुं ते शुन्धामि चरित्रवान ते शुन्धामि ।”

(यजुर्वेद 6/14)

इसी प्रकार गर्भवती स्त्री को घर की बुजुर्ग महिलायें समझाती हैं कि वह धार्मिक पुस्तकें पढ़े, साहसी व वीरता की कहानियाँ पढ़े, ये सभी बातें बालक के आन्तरिक वातावरण को प्रभावित करती हैं ।

बाह्य वातावरण में पारिवारिक वातावरण, विद्यालयीन वातावरण, सामाजिक वातावरण, प्राकृतिक वातावरण आदि सम्मिलित हैं जो एक बालक के विकास को आजीवन प्रभावित करते रहते हैं ।

इस प्रकार बालक का विकास न तो पूर्ण रूप से वंशानुक्रम पर निर्भर है और न ही केवल वातावरण पर । बालक का सम्पूर्ण विकास वंशानुक्रम व वातावरण दोनों पर समान रूप से निर्भर करता है ।

वंशानुक्रम व्यक्ति को जन्मजात शक्तियाँ प्रदान करता है, वातावरण उसे इन शक्तियों की सिद्धि के लिए सुविधायें और अवसर प्रदान करता है ।

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि वंशानुक्रम और वातावरण बालक के व्यक्तित्व-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं किन्तु यह जानना भी आवश्यक है कि यह विकास क्यों होता है ?

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

मनोवैज्ञानिकों ने इसके दो प्रमुख कारण बताये हैं -

- (1) आन्तरिक रूप से शारीरिक तथा मानसिक शील गुणों की परिपक्वता ।
- (2) व्यक्ति का अभ्यास और अनुभव ।

जरसील्ड और उनके साथियों के अनुसार - परिपक्वता वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव की अन्तर्निहित सम्भाव्य क्षमतायें कार्यात्मक तत्परता की अवस्था में पहुँच जाती हैं । इस प्रक्रिया में संरचना में होने वाले वे परिवर्तन भी सम्मिलित हैं जो वृद्धि के साथ होते हैं । कार्य-निष्पादन के लिए पृष्ठभूमि निर्मित करने वाला संरचना का प्रगतिपूर्ण अभ्यास भी इस प्रक्रिया में सम्मिलित है ।⁷

मनुष्य के भीतर अनुवांशिक रूप से प्राप्त शारीरिक व मानसिक शील गुणों के विकास का प्रगट होना ही परिपक्वता है । परिपक्वता के आधार पर ही बालक में एकाएक शील-गुण प्रगट होते हैं जैसे कि यह समझा जाता है कि बालक को चलना सीखने में अभी समय है, उनमें यह शीलगुण एकदम प्रगट हो जाता है और बालक चलने लगते हैं ।

ऐसे ही अभ्यास और अनुभव के आधार पर बालक का विकास होता है । अनेक क्रियाओं के अनुभव द्वारा बालक का विकसित होना ही सीखना कहलाता है क्योंकि उसमें शारीरिक व व्यावहारिक रूप से जो परिवर्तन आते हैं उसमें अभ्यास की आवश्यकता होती है । कभी अभ्यास द्वारा, कभी आवृत्ति द्वारा, कभी विशेष प्रकार के प्रशिक्षण के द्वारा बालक सीखता है । बालक एक क्रियाशील प्राणी है इसलिए उसके व्यवहार में जो मूल रूप से परिवर्तन आता है, उसके पीछे उसकी भिन्न-भिन्न क्रियाओं का अभ्यास ही है ।

कैरल का कथन है कि - बालक के शारीरिक विकास और उसके सामान्य व्यवहार में घनिष्ठ सहसंबंध है । यदि हम समझना चाहते हैं कि भिन्न-भिन्न बालकों में क्या समानतायें हैं ? क्या विभिन्नतायें हैं, और आयु-वृद्धि के साथ-साथ व्यक्ति में क्या-क्या परिवर्तन आते हैं तो हमें बालक के शारीरिक विकास का भली-भाँति अध्ययन करना होगा ।⁸

यहाँ परिपक्वता का संबंध आनुवांशिकता से है और सीखने की क्रिया का संबंध वातावरण से है ।



१. अथ भक्तियोगः । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
२. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

३. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
४. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

५. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
६. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

७. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
८. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

९. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
१०. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

११. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।
१२. भक्त्या भगवत्प्राप्तये । भक्त्या कुरुते भगवत्प्राप्तये ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि परिपक्वता और सीखना ये दो भिन्न तत्व न होकर परस्पर संबंधित हैं और दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हुए बालक के विकास-क्रम पर अपना महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं ।

2.5| बालक का सर्वांगीण विकास -

किसी भी बालक के सर्वांगीण विकास का अर्थ है - उसका शारीरिक विकास, क्रियात्मक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास, भाषा विकास, मानसिक विकास, चरित्र का विकास, बौद्धिक विकास, सृजनात्मकता का विकास इत्यादि का संतुलित रूप से विकसित होना ।

(क)| शारीरिक विकास -

बालक के शारीरिक विकास के अन्तर्गत उसकी (1) अस्थियों का विकास, (2) उसकी लम्बाई, (3) उसका वजन, (4) मांसपेशियाँ और वसा, (5) शारीरिक अनुपात (सिर, चेहरे का अनुपात, धड़ का अनुपात, हाथ और पैरों का अनुपात), (6) दांत (अस्थायी और स्थायी दांत) (7) नाड़ी संस्थान का विकास, (8) परिवहन संस्थान (9) पाचन संस्थान (10) श्वसन तंत्र इत्यादि का विकास सम्मिलित है ।⁹

किसी भी बालक का शारीरिक विकास उसके सामान्य व्यवहार को अत्यधिक प्रभावित करता है । बालक के व्यवहार पर उसके शारीरिक विकास का प्रभाव दो प्रकार से पड़ता है । पहला है प्रत्यक्ष प्रभाव । शारीरिक विकास यह निश्चित करता है कि बालक निश्चित उम्र में क्या कर सकता है । यदि एक आठ साल के बालक का शारीरिक विकास अच्छा है तो वह खेल में अपने साथियों की बराबरी कर सकता है । खेल में वह प्रतिस्पर्धा कर सकता है, थकान अनुभव नहीं करता है । ये सभी भावनायें खेल में उसके व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं और उसकी ये भावनायें उसके शारीरिक विकास से संबंधित हैं ।

बालक के शारीरिक विकास का उसके व्यवहार पर अप्रत्यक्ष प्रभाव भी पड़ता है । उदाहरण के लिए एक मोटा बालक है जो अपनी शारीरिक अयोग्यता के कारण अपने मित्रों के साथ खेल नहीं पाता या उसके मित्र उसे खिलाने से मना कर देते हैं, इससे बालक में हीनता की भावना आ जायेगी । दूसरे उसके बारे में क्या सोचते हैं यह बात भी बालक के व्यक्तित्व को प्रभावित करती है ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

किसी बालक का शारीरिक विकास उसके व्यक्तित्व-निर्माण में आधार स्तम्भ की तरह है। शारीरिक विकास के कारण नाड़ी संस्थान का विकास होता है जिससे बालक की बौद्धिक व मानसिक योग्यताओं का विकास होता है। बालक की मांसपेशियों के विकास से उसकी गत्यात्मक क्षमता व शारीरिक शक्ति बढ़ जाती है। शारीरिक विकास के कारण अन्तःस्रावी ग्रंथियां अपना कार्य सुचारु रूप से कर पाती हैं। बालक की शारीरिक संरचना उसकी अभिव्यक्तियों को भी निर्धारित करती है।

कुछ प्रमुख कारक हैं जो शारीरिक विकास को प्रभावित करते हैं जैसे-वंशानुक्रम, वातावरण, आहार, रोग, अंतःस्रावी ग्रंथियाँ, वृद्धि, यौन, संवेगात्मक व्यवधान, विटामिन्स, पारिवारिक प्रभाव, सामाजिक, आर्थिक स्तर इत्यादि।

(ख) क्रियात्मक विकास -

क्रियात्मक विकास को परिभाषित करते हुए हरलॉक ने लिखा है कि इसका अर्थ है- मांसपेशियों की उन गतिविधियों का नियंत्रण जो जन्म के समय निरर्थक और अनिश्चित होती है।¹⁰

नाड़ियों व मांसपेशियों की क्रियाओं द्वारा जो शारीरिक गतिविधियाँ सम्भव हो सकती हैं उन्हें हम क्रियात्मक योग्यतायें कह सकते हैं। बालक ने क्रियात्मक योग्यताओं में कितनी निपुणता प्राप्त की है, इस पर उसका सर्वांगीण विकास निर्भर करता है क्योंकि इन्हीं के द्वारा उसकी शारीरिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

क्रियात्मक विकास का बालक के जीवन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अत्यधिक महत्व है। बालक का क्रियात्मक विकास जितना अच्छा होगा उसमें उतनी ही अधिक क्रियाशीलता होगी। अधिक क्रियाशीलता अच्छे स्वास्थ्य का परिचायक है।

बालक का सामाजीकरण अच्छे क्रियात्मक विकास पर निर्भर करता है। खेलों के द्वारा ही बालक अपना सामाजिक दायरा निश्चित करता है। क्रियात्मक योग्यताओं और कौशलों द्वारा बालक आत्मनिर्भर बनता है। अच्छी क्रियात्मक योग्यताओं के विकास से बालक में शारीरिक सुरक्षा व मनोवैज्ञानिक सुरक्षा की भावनायें जाग्रत होती हैं जिनसे उसमें आत्मविश्वास आता है, जिससे वह अपने स्व को समझ सकता है। बालक ऐसी अनेक क्रियाओं और कौशलों का

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

आपकी जानकारी (1)

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

आपका यह प्रश्न-उत्तरों का संग्रह आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार तैयार किया गया है। इस संग्रह में आपकी व्यक्तिगत जानकारी, जैसे कि आपका नाम, पता, फोन नंबर, ईमेल आदि, शामिल है। यह जानकारी आपको और अधिक जानकारी के लिए सहायक होगी।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अभ्यास करता है जिससे उसे आनन्द की प्राप्ति होती है । अपने कौशलों द्वारा वह अपने समूह में लोकप्रिय भी हो सकता है ।

छः से ग्यारह वर्ष की अवधि में बालक स्वयं खाना खाना, स्वयं कपड़े पहनना, स्वयं स्नान करना, चित्रकारी करना, नाचना, गाना, लकड़ी या मिट्टी के खिलौने बनाना, गेंद लपकना और फेंकना, साइकिल चलाना, स्केटिंग करना, तैरना आदि अनेक कौशल सीखता है ।

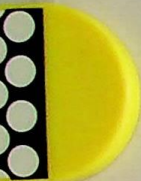
बालक के क्रियात्मक विकास को अनेक कारक प्रभावित करते हैं जैसे दुर्बल शारीरिक अवस्था, बीमारी, आहार, वस्त्रों का प्रयोग, व्यक्तित्व संबंधी शीलगुण, बुद्धि, भय, मांसपेशीय नियन्त्रण के विकास के अवसरों का अभाव, सीखने के अवसरों की कमी, प्रोत्साहन का अभाव, अभ्यास व निर्देशन आदि का अभाव इत्यादि ।

(ग) संवेगात्मक विकास -

किसी भी व्यक्ति का व्यवहार किसी परिस्थिति विशेष में स्नेह, क्षमता, सुख, दुख, भय, क्रोध, ईर्ष्या आदि आन्तरिक वृत्तियों द्वारा प्रभावित होता है, यही आन्तरिक वृत्तियाँ संवेग कहलाती हैं । आइजनेक और उनके साथियों ने लिखा है कि "अधिकांश विद्वान इस बात से सहमत हैं कि संवेग वह जटिल अवस्था है जिसमें व्यक्ति किसी वस्तु या परिस्थिति को अधिक बढ़ा हुआ प्रत्यक्षीकरण करता है, इसमें बढ़े स्तर पर शारीरिक परिवर्तन होते हैं, इसमें व्यक्ति का व्यवहार Approach या Withdrawal की ओर संगठित होता है तथा अनुभूति आकर्षण या प्रतिकर्षण की सूचना देती है ।"¹¹

प्रत्येक संवेग के मूल में कोई न कोई भाव होता है । भाव दो प्रकार के होते हैं - प्रिय और अप्रिय भाव, इन्हीं दोनों भावों से सभी संवेगों की उत्पत्ति होती है ।

बालकों के कुछ प्रमुख संवेग हैं - स्नेह, क्रोध, भय, चिन्ता, ईर्ष्या, शर्मीलापन, जिज्ञासा इत्यादि । बालक के जीवन में संवेगों का बहुत अधिक महत्व है । संवेगों की अभिव्यक्ति से बालक तनावमुक्त हो जाता है । बालकों की संवेगात्मक अनुक्रियायें आदतों के निर्माण में सहायता करती हैं । सभी संवेग बालकों की सामाजिक अन्तः क्रियाओं को प्रभावित करते हैं । बालक का जीवन के प्रति दृष्टिकोण संवेगों से प्रभावित होता है । किसी भी बालक की संवेगात्मक



...
...
...
...

...
...
...
...

...
...
...
...

... ()

...
...
...
...
...
...
...
...

...
...
...
...

...
...
...
...
...
...
...
...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अभिव्यक्तियों से उसके व्यवहार और व्यक्तित्व का मूल्यांकन सम्भव है । संवेग बालकों को क्रियाशील बनाते हैं ।

संवेगों का महत्व उन परिस्थितियों में और भी बढ़ जाता है जब संवेगों की बढ़ी हुई क्रियाशीलता व्यक्त नहीं हो पाती, तब वह नर्वस हो जाता है, उसमें वाणी संबंधी दोष उत्पन्न हो जाते हैं । अंगूठा चूसना और नाखून काटने जैसे व्यवहार भी विकसित हो जाते हैं, जब बालक में कटु संवेग अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं तो उसकी मानसिक क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है ।

इन परिस्थितियों में उनके संवेगों को समझ कर समुचित रूप से नियंत्रित किया जा सकता है । जिस संवेग के जाग्रत होने पर बालक को हानि पहुंच सकती है, उसे उत्पन्न होने का अवसर ही न दिया जाय । संवेगों के विषय को बदल कर भी संवेगों को नियंत्रित किया जा सकता है । बच्चों को हमेशा काम में लगाये रखकर अवांछनीय संवेगों का निरोध किया जा सकता है । दबाये गये संवेगों को समय-समय पर उभरने का अवसर हँसी, मजाक, खेलों के द्वारा दे सकते हैं जिससे भावना-ग्रंथियाँ उत्पन्न नहीं होती ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बालक के व्यक्तित्व-निर्माण के लिए उनके संवेगों को सही दिशा व गति देना अत्यंत आवश्यक है ।

(घ) सामाजिक विकास -

किसी भी व्यक्ति का सामाजिक विकास जीवन पर्यन्त चलता रहता है । कोई बालक अपने जीवन में कितनी प्रगति करेगा यह उसके सामाजिक व्यवहार पर निर्भर करता है । बालक जिस समुदाय में जन्म लेता है उसका जीवन उसी पर निर्भर करता है । हरलॉक के अनुसार - "सामाजिक विकास का अर्थ उस योग्यता को अर्जित करना है जिसके द्वारा सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुसार व्यवहार किया जा सके" ।¹²

चाइल्ड के अनुसार - "सामाजिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति में उसके समूह मानकों के अनुसार वास्तविक व्यवहार का विकास होता है" ।¹³

जन्म के पश्चात् नवजात शिशु असहाय होता है और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरों पर निर्भर रहता है । उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति जिस रूप में होती है और उसकी जो-जो प्रतिक्रियायें

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

होती हैं उसी के आधार पर उसका सामाजिक विकास होता है । बालक का शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक विकास उसके सामाजिक विकास पर निर्भर करता है ।

बालक के प्रारंभिक सामाजिक अनुभव इस बात का निर्धारण करते हैं कि वह किस प्रकार का सामाजिक प्राणी बनेगा । बालक के सामाजिक विकास में प्रारंभिक पारिवारिक वातावरण का अत्यधिक योगदान रहता है । परिवार का आकार, बालक का परिवार में स्थान, उसके पालन-पोषण की विधि, परिवार के सदस्यों का उसके प्रति व्यवहार इत्यादि बातें बालक के सामाजीकरण को प्रभावित करती हैं ।

परिवार के बाद उसके सामाजिक विकास को उसका पास-पड़ोस और स्कूल अत्यधिक प्रभावित करते हैं । स्कूल में बच्चों को सामाजिक अनुभवों को प्राप्त करने के अधिक अवसर मिलते हैं । कुशल नेतृत्व, खेल, आर्थिक स्तर, मित्रगण, संगति आदि भी सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण कारक होते हैं।

पूर्व बाल्यावस्था में उसके सामाजिक व्यवहारों के अन्तर्गत - आक्रमकता, झगडा, चिढ़ाना, निषेधात्मक व्यवहार, सहयोग, ईर्ष्या, उदारता, आश्रितता, सामाजिक अनुमोदन की इच्छा, सहानुभूति आदि आते हैं ।

(ड) भाषा-विकास -

भाषा अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का सबसे सशक्त माध्यम है । बालक का प्रत्येक विकास किसी न किसी रूप में भाषा-विकास से संबंधित है । डमविल के अनुसार - "किसी जाति के भाषा-विकास का इतिहास उसका बुद्धि विकास का इतिहास है । दूसरे प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य भाषा के कारण ही अधिक श्रेष्ठ है । भाषा का विकास और सभ्यता का विकास साथ-साथ चलता है । प्रारंभ में शिशु स्थूल वस्तुओं का ही प्रयोग करता है । बाद में वह भाषा का प्रयोग करने लगता है । शिक्षा का एक प्रधान उद्देश्य बालक को भाषा का समुचित ज्ञान कराना है । किसी भी व्यक्ति की बौद्धिक योग्यता का सर्वश्रेष्ठ माप उसका शब्द-भंडार ही है ।"¹⁴

बालक के जीवन में भाषा-विकास का महत्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि भाषा सामाजिक सम्पर्क का सबसे बड़ा साधन है । वह भाषा के द्वारा ही समझ में उचित समायोजन कर सकता है । जो बालक अपनी मधुर वाणी से सबको आकर्षित करते हैं उनका अधिक लोकप्रिय होना स्वाभाविक ही होता है ।

... १ ॥ ...

... १ ॥ ...

... १ ॥ ...

... १ ॥ ...

...-...

... १ ॥ ...

... १ ॥ ...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

भाषा के द्वारा ही सभ्यता व संस्कृति का निर्माण होता है। भाषा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा सभी प्रकार की सांस्कृतिक उपलब्धि सम्भव हो सकती है। किसी भी भाषा की अभिव्यक्ति ही उस समाज के साहित्य को जन्म देती है।

कोई भी बालक किस प्रकार बोलना सीखता है, यह जानना भी आवश्यक है। बालकों की भाषा एक कौशल है, अन्य कौशलों की तरह ही यह कौशल भी बालक सीखते हैं। स्वरयंत्र, जीभ, गला, फेफड़ा आदि सभी की परिपक्वता पर भाषा विकास निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त होठ, दांत, तालू और नाक के विकास पर भी भाषा-विकास निर्भर करता है।

इन अंगों के अतिरिक्त बोलना सीखने के लिए यह भी आवश्यक है कि मस्तिष्क का साहचर्य क्षेत्र और Speech Mechanism दोनों ही परिपक्व हों। साथ ही साथ बालक को बोलने के अभ्यास का अवसर प्राप्त होना चाहिए।

अभिभावकों को अपने बच्चों को बोलने के लिए प्रेरित करने की भी आवश्यकता होती है क्योंकि अक्सर ऐसा देखा जाता है कि बालक जब संकेत से कोई चीज मांगता है तो उसे तुरन्त वह चीज उपलब्ध कर दी जाती है जिससे बालक बोलने की आवश्यकता नहीं समझता। उसे बोलने के लिए प्रेरित करना, सही उच्चारण के लिए प्रोत्साहित करने से बालक का भाषा-विकास निश्चित रूप से अच्छा होगा।

प्रयास एवं भूल द्वारा भी बालक बोलना सीखता है। सम्बद्धता द्वारा अर्थग्रहण में बालक ध्वनि के साथ-साथ उस वस्तु को भी देखता है जिससे वह संबंधित सार्थक शब्द बोलना सीखता है।

बालक का भाषा विकास निम्न अवस्थाओं में होता है - (1) दूसरों की बात को समझना या ग्राहकता (2) शब्द-निर्माण तथा शब्द-योग (3) वाक्य-निर्माण तथा वाक्य-प्रयोग (4) शुद्ध उच्चारण। ये चारों अवस्थाएँ एक दूसरे से संबंधित हैं इसलिए एक दूसरे पर निर्भर करती हैं।

किसी बालक के भाषा-विकास को निम्नलिखित बातें प्रभावित कर सकती हैं परिपक्वता, बुद्धि, स्वास्थ्य, सामाजिक अधिगम के अवसर, प्रेरणा, निर्देशन, सामाजिक-आर्थिक स्तर, यौन, पारिवारिक संबंध, व्यक्तित्व संबंधी विशेषतायें कई भाषाओं का प्रयोग इत्यादि।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर हम बालकों के भाषा-विकास में सहायता कर सकते हैं ।

(च) मानसिक विकास -

मानसिक विकास के अन्तर्गत स्मृति, कल्पना, चिन्तन का विकास इत्यादि आते हैं ।

(1) स्मरण -

स्मरण एक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें धारण की गई विषय सामग्री को चेतना में पुनः लाया जाता है । स्मृति के लिए पहले धारणा आवश्यक है और अधिगम (Learning) के बिना धारणा सम्भव नहीं है और धारणा पुनः स्मरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है ।

स्मृति की तीन प्रक्रियायें होती हैं -

- (1) सांवेदिक स्मृति
- (2) अल्पकालीन स्मृति और
- (3) दीर्घकालीन स्मृति

स्मृति को प्रभावित करने वाले कारकों में मुख्य है चिन्ता, जिन बच्चों में चिन्ता अधिक होती है उनका पुनः स्मरण उतना ही कम होता है । अधिक चिन्ता बालकों के ध्यान को विचलित कर देती है । अधिगम, सामग्री की सार्थकता भी स्मरण को प्रभावित करती है । उसी प्रकार प्रेरणा, मानसिक झुकाव, रुचि, संवेगात्मक अवस्थाएँ भी उसे प्रभावित करती हैं ।

(2) कल्पना -

कल्पना एक मानसिक शक्ति है । जब हमें कोई इन्द्रिय-अनुभव होता है तो हमारे स्नायु इस प्रकार प्रभावित हो जाते हैं कि हम बाहरी उत्तेजना के अभाव में भी, अपने मन में उस पदार्थ का चित्र देखने लगते हैं ।

जब बालक अपने अनुभवों को संचित करना सीख लेता है तब वह उन्हें नये रूप में प्रस्तुत करता है । कल्पना रचनात्मक होती है और नवीन लोक का निर्माण करती है । कल्पना में अप्रत्यक्ष रूप से स्मृति का भी उपयोग होता

... ..
... ..
... ..

- आर्याणी कर्माणां (३)

... ..
... ..

- ... (१)

... ..
... ..
... ..

-

... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..

- ... (१)

... ..
... ..
... ..

... ..
... ..

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

है। जिन बच्चों की स्मरण-शक्ति अच्छी होगी उनकी कल्पना-शक्ति भी अच्छी होती है।

स्मृति का संबंध भूतकाल से होता है और कल्पना का भविष्य से। बालक के जीवन में कल्पना का अत्यधिक महत्व होता है। कल्पना मौलिकता का सृजन करती है। कल्पना के विकास के साथ ही वह बुद्धि के क्षेत्र में खोज की प्रवृत्ति विकसित करने लगती है। बालकों की क्रियात्मक योग्यता, सामाजिक विकास, खेल इत्यादि कल्पना पर आधारित होते हैं। कल्पना के विकास में उसका भाषा-ज्ञान, कहानियाँ, अभिनय, कवितायें, कला आदि सहायता करती हैं।

(3) चिन्तन -

चिन्तन एक उच्च ज्ञानात्मक प्रक्रिया है जिसके द्वारा ज्ञान संगठित होता है। विचार करना ही चिन्तन है। प्रत्येक व्यक्ति को कभी-कभी किसी समस्या का सामना करना पड़ता है और समस्या-समाधान के लिए वह सोचता है। इस प्रकार समस्या के प्रति व्यक्ति की अनुक्रिया ही चिन्तन है। चिन्तन में तर्क की प्रधानता होती है। चिन्तन करने से बालक की बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। चिन्तन में बालक क्रियाशील होता है। बचपन के चिन्तन का स्तर निम्न होता है। आयु बढ़ने के साथ-साथ चिन्तन में तर्क की प्रधानता बढ़ती जाती है।

(छ) चरित्र का विकास -

एक व्यक्ति में सभी प्रवृत्तियों के विकास के योग को उस व्यक्ति का चरित्र कहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह जिस समाज में रह रहा है उसके रीति-रिवाजों का पालन करे। चरित्र के अन्तर्गत व्यक्ति की अनेक मानसिक शक्तियों का समावेश होता है। चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता सुदृढ़ संकल्प-शक्ति मानी जाती है जो लक्ष्य में आने वाली बाधाओं के होने पर भी मार्ग से पीछे नहीं हटने देती। हमारे देश में चरित्र का सबसे बड़ा आधार आध्यात्मिकता है।

बालक को एक अच्छा नागरिक बनाने के लिए उसके चारित्रिक विकास में उचित योगदान देना अत्यन्त आवश्यक है। बालक के नैतिक या चारित्रिक विकास को अनेक बातें प्रभावित करती हैं जैसे बुद्धि, आयु, यौन, परिवार, विद्यालय, धर्म, मनोरंजन, मित्र-मंडली इत्यादि।

... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

- भावार्थ -

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

- भावार्थ -

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

उपरोक्त सभी विकास जब समुचित ढंग से होते हैं तब उसे सर्वांगीण विकास कहते हैं। शिक्षा का मूल उद्देश्य है - बालक का सर्वांगीण विकास करना। आज की शिक्षा पद्धति अपने उद्देश्य में आंशिक रूप से ही सफल हो रही है। इसके अनेक कारण लक्षित हो रहे हैं। हमें उन कारणों को जानकर उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना है।

(ज) यौगिक दृष्टि से विकास -

सम्पूर्ण विश्व के बच्चों को सर्वांगीण और समानुपातिक विकास के लिए एक प्रक्रिया की आवश्यकता है और उसका नाम है योग। योग का तात्पर्य 'संयोजन' है जिससे सम्पूर्ण जीवन में एकत्व स्थापित हो सके।

यदि हम कल्पना करें कि हर विद्यालय में गणित और विज्ञान की तरह योग भी सिखाया जाये तो क्या होगा, निश्चित रूप से इसका परिणाम अच्छा ही आयेगा। इस संदर्भ में स्वामी सत्यानंद सरस्वती जी ने कहा है -

“समूचे विश्व का भाग्य छोटे बच्चों पर निर्भर है। यदि आप भविष्य में आशा की झलक देखना चाहते हैं तो वह मेरे और आपके द्वारा नहीं प्राप्त होगी बल्कि आध्यात्मिक संस्कार सम्पन्न बच्चे हमें वह झलक प्रदान करेंगे।”

योग ही वह मार्ग है जिसके माध्यम से बच्चों को अपनी संस्कृति को जानने की अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो सकती है। इससे वे अपनी अन्तः शक्ति का अनुभव करने में समर्थ हो जायेंगे, अपने आध्यात्मिक अनुभवों से वे उच्च स्तरीय चेतना के संचालन में भी समर्थ हो सकेंगे जिससे जीवन का मार्ग उस स्तर तक जा सकता है जिसकी सम्भावना पहले नहीं की जा सकती थी।

योग के सभी अभ्यास नाड़ियों एवं शारीरिक प्रणालियों से विष को दूर करके शारीरिक, मानसिक और प्राणिक संतुलन को स्थापित करने पर बल देते हैं। योग के द्वारा प्रत्येक बालक अपनी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने एवं तनावपूर्ण परिस्थितियों का सहजतापूर्वक सामना करने में सक्षम होता है।

बच्चे हर समय कुछ न कुछ उछलकूद करते रहना पसंद करते हैं। उनके लिए विद्यालय में 3 से 6 घंटे एक जगह बैठना बड़ा ही उबाऊ और थकाने वाला होता है। उन्हें घूमना, फिरना और बातें करना अच्छा लगता है, उनके शिक्षक कक्षा में अक्सर कहते हैं चुप रहो, शोर मत करो इत्यादि, इस विषय की ओर ध्यान दो, तब बच्चों को बाध्य होकर विषय की ओर ध्यान देना पड़ता

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

है जिससे उनका शरीर तनाव से भर जाता है, उस विषय पर मन लगाने की अपेक्षा वे अपने आपको एक तरह से बंद कर लेते हैं, इसलिए यदि हम चाहते हैं कि वे कुछ पढ़ें, लिखें, शांत रहे किन्तु तनावपूर्ण न हो तो योग के कुछ अभ्यासों द्वारा सफलता पाई जा सकती है ।

अलबर्ट आइंस्टाइन के अनुसार -

‘यह कम आश्चर्यजनक नहीं है कि आधुनिक शिक्षा तकनीकों ने पवित्र जिज्ञासा का पूरी तरह गला घोट दिया है, क्योंकि एक नन्हें पौधे को प्रेरणा के अतिरिक्त उन्मुक्तता की कहीं अधिक आवश्यकता होती है जिसके बिना वह निश्चित ही नष्ट हो जाता है’ ।

इस प्रकार बच्चों पर अपनी इच्छायें व अनुशासन को न थोपा जाये, उन्हें उनके ढंग से तनाव रहित होकर कार्य करने दिया जाय तो निश्चित ही वे एक स्वस्थ नागरिक बनेंगे ।

(क) भावतीत ध्यान :-

महर्षि महेश योगी द्वारा प्रणीत भावातीत ध्यान पद्धति न केवल भारत में अपितु सम्पूर्ण विश्व में तनाव-मुक्ति की एक महत्वपूर्ण विधि साबित हो रही है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति एक सीधी परन्तु शिथिल ध्यान-आसन की स्थिति में रहता है, जिससे उसके मन में न तो किसी प्रकार का भार होता है और न तनाव और निर्वाध रूप से व्यक्ति भावातीत अवस्था में पहुँच जाता है । इसमें विचारों को रोका नहीं जाता है बल्कि विचारों, भावों आदि को आने दिया जाता है फलतः एक स्थिति में उनका प्रभाव स्वतः समाप्त हो जाता है ।

भावातीत ध्यान के सुबह व शाम के अभ्यास से व्यक्ति को अपने तनावों से मुक्ति मिलती है । आज का प्रत्येक बालक अनेक तनावों से घिरा रहता है - गृहकार्य पूरा होगा कि नहीं ? खेलने मिलेगा कि नहीं ? टी.वी. देखने मिलेगा कि नहीं, याद नहीं हुआ तो मार पड़ेगी इत्यादि. ये सारे विचार उसे सदा तनाव ग्रस्त रखते हैं.

भावातीत ध्यान की स्थिति में उसकी विचार की गति, श्वास की गति, नाडी की गति शिथिल पड़ जाती है । इसके नित्य अभ्यास से बालक चंचलता, उत्तेजनशीलता, आक्रमकता, विरोध आदि भावों से कुछ ही समय में मुक्त हो जाता है जो उसकी स्वाभाविक क्रियाओं में बाधा उत्पन्न करते हैं ।

(ख) आसन एवं प्राणायाम :-

इस तरह योग के द्वारा बालकों के शारीरिक विकास में हम सहायता कर सकते हैं। शारीरिक वृद्धि से तात्पर्य उनके मस्तिष्कीय, र्नायविक तथा नलिका विहीन ग्रंथियों के सामंजस्यपूर्ण विकास तथा परिपक्वता से है। बालकों के कंकालीय ढांचा, मांसपेशियां तथा उन्हें जोड़ने वाले तंतुओं के विकास के लिए उन्हें तनाव रहित होकर सीधा बैठना आसनों द्वारा सिखाया जा सकता है। लोच, सक्रियता, बैठने का सही ढंग आदि बढ़ते बच्चे के शरीर के लिए लाभदायक होता है।

श्वसन संस्थान के विकास के लिए श्वसन तकनीकें सिखाना लाभकारी होता है। फेफड़ों का विकास आठ वर्ष की उम्र तक होता है इसलिए बच्चों को नाड़ी शोधन व अनुलोम-विलोम प्राणायाम का अभ्यास कराने से उनके मस्तिष्क के दोनों गोलार्धों के बीच संतुलन कायम होता है। इसके अतिरिक्त यौगिक प्राणायाम व उदर श्वसन भी महत्वपूर्ण प्राणायाम है जिसके अभ्यास से श्वास-प्रश्वास त्रुटि रहित होता है, उसमें दक्षता आती है तथा ऊर्जा का अपव्यय रुकता है। तैरने वाले बच्चों को यदि प्राणायाम का नियमित अभ्यास कराया जाय तो वे पानी के अन्दर ज्यादा समय तक तैर सकते हैं क्योंकि उन्हें अपने फेफड़ों की कुल क्षमता के उपयोग की तकनीक आ जाती है।

आसनों के प्रयोग से रक्त-परिवहन-तंत्र पुष्ट होता है। शरीर के प्रत्येक अंग को रक्त सुचारु रूप से प्राप्त होता है, हृदय, रक्त वाहिनी शिराओं, नाड़ियों का विकास अच्छी तरह से होता है जिससे बालक का रक्तचाप, नाड़ी की गति व शरीर का तापमान उचित अनुपात में होता है। बालकों की चयापचय दर अधिक होती है इसलिए उन्हें भूख भी अधिक लगती है। आसनों से पाचक अंगों को उत्तेजना मिलती है जिसके पाचक रस उचित मात्रा में स्रावित होते हैं जिससे पाचन तंत्र सुचारु रूप से कार्य कर सकता है।

आजकल बालकों की आम समस्या है भूख न लगना, इसका कारण है खेल के प्रकार व अवधि में कमी, क्योंकि संचार माध्यमों के तीव्र विकास ने बालकों के पास समय की न्यूनता उत्पन्न कर दी है, बालक एक ही जगह पर बैठकर टी.वी., इन्टरनेट, विडियोगेम खेलता रहता है जिससे पाचन तंत्र की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। भोजन ठीक से पचता नहीं है जिससे भूख नहीं लगती है। इन सभी कमियों को योग के सरल आसनों से दूर किया जा सकता है व पाचन तंत्र की क्रियाशीलता को बढ़ाया जा सकता है।

नलिका विहीन ग्रंथियों के विकास में योग आसनों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इन ग्रंथियों के विकास पर ही किसी बालक का भविष्य निर्भर होता है । मेरुदंड के ऊपर एक अत्यन्त छोटी ग्रंथि होती है जो पीनियल कहलाती है । लाखों वर्ष पूर्व मानव मस्तिष्क के विकास में इस ग्रंथि की अति सक्रिय भूमिका थी इसलिए उस समय के लोगों में कहीं अधिक शारीरिक और आध्यात्मिक क्षमता थी; भावनाओं पर अत्यधिक नियंत्रण होता था किन्तु धीरे-धीरे इस ग्रंथि का ह्रास होता गया और आज एक अवशेष के रूप में यह लघु ग्रंथि है, हमें इसकी सुरक्षा का उचित प्रबंध करना होगा अन्यथा कुछ हजारों वर्षों में यह पूर्णतः नष्ट हो जायेगी ।

योग में इस ग्रंथि का सहसंबंध आज्ञा चक्र से है, इसे तृतीय नेत्र माना गया है । यह ग्रंथि बच्चों में अत्यधिक क्रियाशील होती है किन्तु 8 से 10 वर्ष की अवस्था में इसका ह्रास प्रारंभ होता है और उसके स्थान पर पीयूष ग्रंथि सक्रिय हो जाती है । इस पीनियल ग्रंथि का मस्तिष्क की क्रियाशीलता पर संतुलित प्रभाव होता है जो सम्पूर्ण मस्तिष्क को ग्रहण-शील स्थिति में रखता है किन्तु इसके क्षय के साथ ही यौन हार्मोन क्रियाशील हो उठते हैं । रक्त में अत्यधिक मात्रा में इन हार्मोन्स के मिलने से बच्चे विचलित व असंतुलित होने लगते हैं; उनके प्राण व मन में एक प्रकार की उथल-पुथल होने लगती है जिसके कारण चुल्लिका और एड्रिनल ग्रंथियों का तालमेल प्रभावित होता है जिससे बच्चों का व्यवहार दोषपूर्ण होने लगता है उनमें अत्यधिक क्रोध व हिंसक वृत्तियां जन्म लेने लगती हैं ।

यदि हम पीनियल ग्रंथि के क्षय को टाल सकें तो बच्चा असामयिक यौन जिम्मेदारी से मुक्त रहेगा जिससे अनुकंपी व परानुकंपी तंत्रिका तंत्र (पिंगला व इडा) के बीच संतुलन बना रहेगा और बच्चा अवांछनीय उद्वेगों के तनावों और दबावों से न केवल बचा रहेगा बल्कि निर्दोष बचपन का अनुभव अधिक समय तक कर सकेगा ।

यौन चेतना का जागरण उस समय वांछनीय कहा जाता है जब बालक इसकी मानसिक प्रतिक्रिया को संतुलित रखने के लायक हो जाय । समय से पूर्व यौन परिपक्वता तथा उसकी अभिव्यक्ति बालक के मानसिक विघटन का कारण भी हो सकती है । यदि बालक में यौन कल्पनायें विकसित होने लगेँ और वह उन्हें अभिव्यक्त नहीं कर पाये तो उसके मन पर उसका घातक प्रभाव पड़ता है, वह बेचैन हो सकता है, क्योंकि वह शारीरिक रूप से इस परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार नहीं होता ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

शांभवी मुद्रा का नियमित अभ्यास बच्चों के लिए बड़ा ही लाभकारी होता है । इस अभ्यास का प्रभाव आज्ञाचक्र पर पड़ता है जिससे यौन परिपक्वता तब तक सक्रिय नहीं होती जब तक उसके लिए उचित शारीरिक व मानसिक विकास नहीं हो जाता । इस अभ्यास को रोचक बनाने के लिए बच्चों को मनोदर्शन के लिए प्रेरित कर सकते हैं । इस अभ्यास से बालक अपना मनोभावनात्मक संतुलन बनाये रखता है । साथ ही मनोदर्शन की क्षमता भी विकसित होती है जिससे बड़ी कक्षाओं में पढ़ाये जाने वाले विषयों का मनोचित्रण करते हुए वह उनका चिंतन करने में सक्षम हो जाता है ।

वैज्ञानिक प्रयोगों से अब यह सिद्ध भी हो चुका है कि योग अभ्यासों द्वारा पीनियल ग्रंथि का अस्तित्व लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है ।

प्राचीन गुरुकुल शिक्षा पद्धति में बालक सेवा और सरल अनुशासित जीवन जीते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करते थे जिससे उनका मन अध्ययन में लगा रहता था, वे अपनी बौद्धिक क्षमताओं को खुला रखते थे । उन्हें सूर्य नमस्कार, नाड़ी शोधन प्राणायाम, मंत्र जप तथा मनोदर्शन के साथ विभिन्न मुद्राओं का अभ्यास भी कराया जाता था । यज्ञोपवीत संस्कार के साथ बच्चों को गायत्रीमंत्र के जप की शिक्षा दी जाती थी । आज भी यह पवित्र परम्परा विद्यमान है किन्तु इस संस्कार के महत्व को न समझकर कुछ लोग इसे सामाजिक कर्मकाण्ड के रूप में देखते हैं किन्तु यह एक योगिक अभ्यास है जिससे बच्चे अनेक मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक उठापटक से बचे रहते हैं ।

भावनात्मक व्यवहार को भी योग व ध्यान की सहायता से परिष्कृत किया जा सकता है । जिस बालक में मनस् शक्ति की अधिकता होती है वह उदासी, चिन्ता, दबाव, परेशानी व आलस से घिरा रहता है, उसमें गतिशीलता का अभाव पाया जाता है, वह अपनी मानसिक शक्ति को सृजनात्मकता में बदलने में स्वयं को असमर्थ पाता है ।

इसके विपरीत जिस बालक में प्राण-शक्ति की अधिकता हो तो वह अत्यंत हिंसक, उपद्रवी और तोड़फोड़ करने वाला होगा । अनियंत्रित ऊर्जा का अत्यधिक जमाव कुछ न कुछ विपत्ति लाने वाला होता है ऐसे बच्चों को सिखाना, पढ़ाना मुश्किल होता है क्योंकि ऐसे बच्चे बड़े ही बेचैन रहते हैं उनका मन किसी एक काम में एकाग्र ही नहीं हो पाता, उनमें धैर्य व अनुशासन का अभाव पाया जाता है । वे हर बात का विरोध करते हैं, चिड़चिड़े होते हैं, झूठ का सहारा अक्सर लेते रहते हैं ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

“चाटर्स ऑफ द सोल” नामक लेख में जे. हूपर सुझाव देते हैं कि अति सक्रियता तथा सीखने में आने वाली कठिनाइयों का कारण तंत्रिका तंत्र की आन्तरिक उत्तेजना होती है।

योग इस असामान्य भावात्मक स्थिति के निराकरण के लिए व्यावहारिक उपचार की व्यवस्था करता है। बच्चों में क्रोध व आक्रमकता की भावना को कम करने के लिए उन्हें कर्मयोग के लिए प्रेरित करना लाभदायक होता है, उन्हें पेंटिंग, बागवानी, खिलौने बनाना या घर के छोटे-छोटे काम में लगाकर उनकी शक्ति को रचनात्मक दिशा में मोड़ा जा सकता है।

जिन बच्चों को छोटी-छोटी बातों में क्रोध आता है उन्हें शशांक आसन से बहुत लाभ होता है। शशांक आसन से एड्रिनल नामक हार्मोन का स्राव नियंत्रित होता है, इस स्राव की अधिकता ही गुस्से में अपना आपा खोने की स्थिति का कारण होती है। नाड़ी शोधन प्राणायाम और योगनिद्रा उन्हें शारीरिक व भावनात्मक विश्राम प्रदान करती हैं जिससे उनके मनस व प्राण शक्ति के बीच स्वस्थ संतुलन स्थापित होता है।

बच्चों में व्याप्त चिन्ता, परेशानी, अपराध-बोध, आलस्य को दूर करने में शिथिलीकरण के अभ्यास जैसे योगनिद्रा या शवासन का अभ्यास कराना लाभदायक होता है, इससे बच्चे के अचेतन मन में छिपे तनाव और दबाव दूर होते हैं।

कुछ सरल योगाभ्यास भी हैं जो आठ वर्ष के बच्चों के लिए उपयुक्त हैं जिससे उनकी मनस् व प्राण शक्ति के संतुलन को बनाये रखने में सहायता मिलती है, साथ ही मानसिक व भावात्मक तनावों से भी छुटकारा मिलता है। इसके लिए बच्चों को गतिशील सूर्य नमस्कार सिखाना लाभदायक होता है। सूर्य नमस्कार शरीर के अंगों को तानता है, विश्राम पहुँचाता है तथा ऊर्जा में संतुलन लाता है, इससे पीनियल ग्रंथि के असामाजिक क्षय को रोका जा सकता है। नाड़ी शोधन प्राणायाम तंत्रिका तंत्र में संतुलन लाता है जिससे बच्चे का मन शांत रहता है। आसन व प्राणायाम का मिला-जुला अभ्यास मस्तिष्क तथा नलिका विहीन ग्रंथियों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है, इससे बच्चे के मन और भावना में सामंजस्य आता है।

योग के द्वारा बच्चे की कार्यकुशलता, व्यावहारिक दक्षता और ग्रहणशीलता को भी नियंत्रित किया जा सकता है। मस्तिष्क ज्ञान का अति समर्थ उपकरण है। किसी बच्चे में मस्तिष्क अत्यधिक क्रियाशील होता है, कुछ में कम

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

क्रियाशील । कुछ बच्चे मंदबुद्धि, कुछ कुशाग्र बुद्धि के, कुछ अशांत, अस्थिर होते हैं, ये सब मस्तिष्क की भिन्न अवस्थाएँ हैं ।

योगनिद्रा योगशिक्षा की सूक्ष्म प्रणाली है इसका प्रयोग ज्ञान को बढ़ाने व मन्दबुद्धि बच्चों के मस्तिष्क विकास में सहायक होता है । इसके प्रयोग से हम बच्चों के अवचेतन मन में उत्तम संस्कार संप्रेषित करने में समर्थ होते हैं । मस्तिष्क की आन्तरिक संरचना को कुछ प्रायोगिक विधियों जैसे - आसन, प्राणायाम, योगनिद्रा, सूर्यनमस्कार तथा मंत्रोच्चारण द्वारा प्रभावित किया जा सकता है, उसकी त्रुटियाँ दूर होती हैं और उनके कार्य नियमित होते हैं ।

इडा व पिंगला नामक दो नाड़ियाँ मेरुदंड में स्थित होती हैं । इनमें से एक हमारे मस्तिष्क तथा उसके क्रिया-कलापों को नियंत्रित करती है दूसरी हमारी प्राणशक्ति तथा उस पर पड़ने वाले प्रभावों को नियंत्रित करती है । बच्चे के स्वस्थ विकास के लिए इन दोनों का संतुलित होना आवश्यक है ।

किसी भी बच्चे का सुस्त या मंदबुद्धि होना यह सिद्ध नहीं करता कि उसके मस्तिष्क में कोई यांत्रिक गड़बड़ी है, सुस्ती का मुख्य कारण है- मस्तिष्क को आवश्यक ऊर्जा की पूर्ति नहीं हो पा रही है ।

प्राणायाम के द्वारा प्राणशक्ति मस्तिष्क के प्रत्येक अंग तक पहुँचती है तथा उसकी संपूर्ण कार्यक्षमता को पुनः सक्रिय करती है, न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक क्रियाओं के लिए प्राण का संचार अत्यंत आवश्यक है । प्राणायाम के द्वारा शरीर में विद्युत क्रियाशीलता उत्पन्न होती है । वैज्ञानिक अन्वेषणों में यह देखा गया है कि प्राणायाम के मध्य मस्तिष्क विशेष प्रकार का विद्युत आवेश छोड़ता है ।

स्मरण शक्ति के विकास में मंत्र, योगनिद्रा तथा अन्तर्मौन की भूमिका महत्वपूर्ण है । अन्तर्मौन के द्वारा उनके मन की गहराइयों में छिपे संस्कारों को बाहर निकाला जा सकता है । शिथिलीकरण के अभ्यास से विशेष प्रकार की चेतना के विकास द्वारा स्मरण शक्ति को बढ़ाया जा सकता है, विश्राम की अवस्था में जो सीखते हैं उसे याद भी रख सकते हैं । शिथिलीकरण न केवल अच्छे स्वास्थ्य के लिए बल्कि सीखने के लिए भी आदर्श स्थिति होती है क्योंकि यह पूर्णतः यौगिक अवस्था होती है ।

सृजनात्मकता को भी योग के द्वारा विकसित किया जा सकता है । इससे कल्पना शक्ति, मनोदर्शन, गायन, व्यक्तित्व-निर्माण आदि में सहायता मिलती है । योग-निद्रा करते समय लिए गये संकल्प से चरित्र-विकास में सहायता मिलती है ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

बोलना भी एक कला है, बोलने से ऊर्जा का नाश होता है । भाषा-विकास का सर्वोत्तम साधन मंत्रोच्चारण है । दिन में प्रतिघंटा चौबीस बार ध्वनि पूर्वक ॐ के उच्चारण से आवाज में सुधार आता है, इससे बोलने में कम ऊर्जा लगती है, अविराम घंटों बोला जा सकता है । भाषा संबंधी त्रुटियों को भी दूर किया जा सकता है ।

इस प्रकार योगाभ्यास में अन्य अभ्यासों की तरह ऊर्जा का न तो व्यय होता है और न ही मांसपेशियों में कड़ापन आता है । आसन शारीरिक स्थितियाँ हैं, जिनसे मांसपेशियों में खिचाव आता है, रक्त का संचार होता है, उनमें लचीलापन आता है तथा सम्पूर्ण शरीर का स्वास्थ्यवर्धन होता है । नाड़ी मंडल व नलिका विहीन ग्रंथियाँ स्वस्थ और मजबूत बनती हैं ।

यदि योग को शिक्षा में अन्य विषयों की तरह ही स्थान दिया जाता है तो बालक की अन्तर्निहित प्रतिभा के विकास में निश्चित रूप से सफलता मिलेगी । योग आत्म-कल्याण का सर्वश्रेष्ठ साधन है ।

अतः यह कहा जा सकता है कि योग स्वयं में एक परिपूर्ण शिक्षा है जिसे सभी बच्चों को सामन रूप से प्रदान किया जा सकता है, क्योंकि नियमित योगाभ्यास से बच्चों में शारीरिक क्षमता का विकास होता है, भावनात्मक स्थिरता आती है तथा बौद्धिक व रचनात्मक प्रतिभा विकसित होती है । योग एक ऐसा एकीकृत कार्यक्रम है जो बच्चों के समग्र व्यक्तित्व का संतुलित तथा बहुमुखी विकास करता है ।

शिक्षा के क्षेत्र में व्यावहारिक स्तर पर अभी तक योग-पद्धति के लाभों को अनदेखा किया जाता रहा है. परन्तु शैक्षणिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण विषय है अतः प्रस्तुत शोध-कार्य में तुलनात्मक दृष्टि से बालकों पर योग के प्रभावों का अध्ययन किया जा रहा है.



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

संदर्भ - अध्याय : 2

1. "Development is more than a concept. It can be observed appraised, and to some extent even "measured" in three major manifestations - (a) anatomic (b) physiologic (c) behavioural. Behaviour signs, however, constitute a most comprehensive index of developmental status and development potentials."
- Gesell : " Developmental Paediatrics", Nervous child p. 225
2. "Devlopment is not limited to growing larger. Instead it consists of a progressive series of changes of an orderly coherent type toward the goal of maturity."
- Hurlock L.B. : Child Development, Tokyo.
3. "The term development refers to a sequence of changes in organisms (animal and human), groups of organisms, cultural fields and dead matter."
- H.J. Eysenek, Encyclopedia of Psychology, 1972
4. "Heridity may be defined as what one gets from his ancestral stock through his parents."
- H.A. Peterson : 1948, Educational Psychology.
5. "Heridity covers all the factors that were presents in the individual when he began life, not at birth, but at the time of conception, about nine months before birth."
- Woodworth & Marquis : 1956, Psychology.
6. "The environment is everything that affects the individual except his genes. A person's environment consists of the sum total of the stimulation which he receives from his conception until his death."
- Boring, Langfeld & Weld, 1962.
7. "Maturation is the process by which under lying potential capacities of the organism reach a stage of functional readiness. This process involves both the changes in structure that come with growth and

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

the progressive exercise of structures that provide groundwork for later performances."

- A.T. Jersild, et. al. 1975 child Psychology.

8. "The inter-relationship between physical and behaviour is so important that an understanding of how the human child grows and develops is essential to an understanding of similarities and differences between different individuals and the changes that take place in the same individuals with increasing age."

- Carrel, A. Man The Unknown, New York. 1935.

9. "Motor development consists of control of the movements of the muscles which, at birth and shortly afterward, random and meaningless."

- Hurlock, E.B. : Child Development (Asian Edition)

10. "Motor abilities can be described briefly as the various kinds of bodily movements that are made possible through the co-ordination of nerve and muscle activity."

- Crow and Crow : Educational Psychology p. 34.

11. "Most writers agree that it is a complex state involving heightened perception of an object or situation, wide spread bodily changes, an appraisal of felt attraction or repulsion and behaviour organized towards approach or withdrawal."

- H.J. Eysenck, et. al. Encyclopedia of Psychology, 1972.

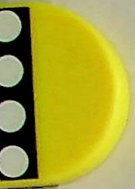
12. "Social development means acquisition of the ability to behave in accordance with social expectation."

- E.B. Hurlock, 1978. Child Development.

13. Social development is the process by which an individual is led to develop actual behaviour according to the standards of his group.

- I.L. child, Quoted by G. Lindzy, 1954.

14. "The history of the development of language of the race is the history of the growth of intelligence. Man's superiority over lower ani-



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

mals can be explained almost completely on the basis of language, language keeps pace with the growth of civilization. The same is true in the life of individual, At first the infants deals only with the concrete, later with the ideas and language. Education consists to some extent in the growth of language habits. The best single measure of the intelligence of an individual is the size of his vocabulary.

- Dumville : Fundamentals of Psychology p.127.

अध्याय : 3

नियमित योग-शिक्षा एवं योग-शिक्षा से वंचित बालकों के विकास से संबंधित सांख्यिकीय विवरण.

3.1 प्रतिदर्शों का चयन.

3.2 प्रश्नावली का प्रारूपण.

3.3 उपलब्ध सांख्यिकीय विवरण.

(1) प्रतिदर्श क्रमांक 1 (6 से 10 वर्ष)

(2) प्रतिदर्श क्रमांक 2 (11 से 16 वर्ष)

3.4 प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़ों का सामान्य-विश्लेषण.

अ. नियमित रूप से यौगिक क्रियायें करने वाले और यौगिक क्रियायें न करने वाले छात्रों से प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़े.

प्रथम प्रतिदर्श-आयुवर्ग 6 से 10 वर्ष.

3.5 आ. नियमित रूप से यौगिक क्रियायें करने एवं यौगिक क्रियायें न करने वाले विद्यार्थियों से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़ों का स्वरूप-विश्लेषण.

द्वितीय प्रतिदर्श आयुवर्ग 11 से 16 वर्ष.

3.6 इ. सह-संबंध

3.7 वार्षिक परीक्षा परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन.



अध्याय 3

नियमित योग-शिक्षा एवं योग-शिक्षा से वंचित बालकों के विकास से संबंधित सांख्यिकीय विवरण

3.1 प्रतिदर्शों का चयन -

प्रस्तुत शोध प्रबंध में बच्चों के व्यक्तित्व विकास पर योग करने और योग न करने का क्या प्रभाव पड़ता है ? इस विषय से संबंधित तथ्यों का अध्ययन करने के लिए दो प्रतिदर्श चुने । प्रथम 6 से 10 वर्ष का तथा द्वितीय 11 से 16 वर्ष के बच्चों का । इसके लिए ऐसे विद्यालयों के बच्चे चुने गये जहां प्राणायाम व ध्यान इत्यादि नियमित रूप से सिखाया जाता है और जहाँ प्राणायाम व ध्यान नहीं सिखाया जाता ।

3.2 प्रश्नावली का प्रारूपण -

दोनों समूहों में 100-100 बच्चे जो योग करते हैं और 100-100 बच्चे जो योग नहीं करते हैं, इस प्रकार 400 बच्चों से 45 प्रश्नों की एक प्रश्नावली भरवाई गई। इस प्रश्नावली में सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत शारीरिक विकास, सामाजिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास और भाषा-विकास संबंधी प्रश्न किए गये । इसके अतिरिक्त दिनचर्या संबंधी प्रश्न, आहार संबंधी प्रश्न, यम, नियम, प्राणायाम, ध्यान संबंधी कुछ प्रश्न भी किए गये । प्रत्येक के लिए 3 संभावित उत्तर दिये गये थे, जिनमें से प्रथम स्थान पर विधेयात्मक उत्तर वाले, दूसरे स्थान पर निषेधात्मक उत्तर वाले तथा तीसरे स्थान पर तटस्थ उत्तर थे, जिनमें से किसी एक पर सही का चिन्ह लगाना था । दोनों समूहों के लिए अलग-अलग प्रश्नावली बनायी गई । जो बच्चे योग नहीं करते उनसे 40 प्रश्नों के उत्तर ही भरवाये गये । प्रश्नावलियां परिशिष्ट में संलग्न हैं ।

6 से 10 वर्ष के बच्चे तथा 11 से 16 वर्ष के बच्चे जो योग करते हैं तथा जो योग नहीं करते हैं से प्राप्त उत्तरों का विवरण निम्नानुसार है -

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

6 से 10 वर्ष के बच्चों का प्रतिदर्श
(प्रति 100 बच्चों में)

योग करने वाले बच्चे

S.No.	A	B	C
1	78	19	3
2	86	6	8
3	53	12	35
4	74	7	19
5	43	29	28
6	72	8	20
7	58	19	23
8	67	19	14
9	81	13	6
10	72	20	8
11	22	42	36
12	56	40	4
13	45	47	8
14	31	58	11
15	19	68	13
16	52	32	16
17	54	21	25
18	55	14	31
19	46	25	29
20	54	26	20
21	57	13	30
22	60	11	29
23	77	15	8
24	52	23	25
25	24	6	70
26	72	9	19
27	79	18	3
28	62	15	23
29	65	6	29
30	49	8	43
31	65	9	26
32	61	11	28
33	44	20	36
34	35	50	15
35	79	4	17
36	78	2	20
37	54	42	4
38	57	17	26
39	78	4	18
40	56	7	37
41	72	20	8
42	70	21	9
43	57	23	20
44	89	2	9
45	76	6	18

योग न करने वाले बच्चे

S.No.	A	B	C
1	64	29	7
2	82	3	15
3	45	17	38
4	67	10	23
5	14	35	51
6	44	30	26
7	31	49	20
8	51	34	15
9	47	30	23
10	68	22	10
11	12	14	74
12	51	37	12
13	40	43	17
14	28	62	10
15	20	71	9
16	46	45	9
17	49	27	24
18	51	40	9
19	41	28	31
20	46	29	25
21	55	24	21
22	53	17	30
23	65	23	12
24	57	21	22
25	20	12	68
26	67	9	24
27	57	35	8
28	51	28	21
29	60	14	26
30	34	11	55
31	59	12	29
32	68	21	11
33	33	41	26
34	38	41	21
35	68	6	26
36	49	8	43
37	51	23	26
38	43	11	46
39	64	7	29
40	49	28	23

- A - नकारात्मक उत्तर (+ ve) _____
 B - सकारात्मक उत्तर (- ve) _____
 C - उदासीन उत्तर (न्यूट्रल) _____

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

3.4 प्राप्त सांख्यिकी आंकड़ों का सामान्य-विश्लेषण -

(अ) नियमित रूप से यौगिक क्रियायें सम्पन्न करने वाले और यौगिक क्रियायें न करने वाले छात्रों से प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़ों का स्वरूप-विश्लेषण. (प्रथम प्रतिदर्श 6 से 10 वर्ष)

6 से 10 वर्ष के ऐसे बालक जो प्रतिदिन ध्यान और प्राणायाम का अभ्यास करते हैं तथा ऐसे बालक जो योग के इन अंगों को नहीं अपनाते, के व्यक्तित्व विकास में क्या अंतर है, यह जानने के लिए यह प्रश्नावली तैयार की गई थी. प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण निम्नानुसार है -

3.41 दिनचर्या संबंधी प्रश्नावली -

सर्वप्रथम दिनचर्या संबंधी प्रश्न पूछे। पहला प्रश्न है - आप सुबह कितने बजे सोकर उठते हैं ? इसमें योग करने वाले 78% बच्चे 6 बजे सोकर उठते हैं जबकि योग न करने वाले 64% बच्चे ही 6 बजे उठते हैं।

दूसरा प्रश्न है - उठने के पश्चात् आप सर्वप्रथम क्या करते हैं ? योग करने वाले 86% बच्चे तुरन्त ब्रश करते हैं, वहीं योग न करने वाले बच्चों का प्रतिशत 82 है।

तीसरा प्रश्न है - आप टायलेट (शौच) के लिए जाते हैं ? योग करने वाले 53% बच्चे अपने आप जाते हैं जबकि योग न करने वाले 45% बच्चे अपने आप जाते हैं।

अगला प्रश्न है- आप कब नहाते हैं ? इसमें योग करने वाले 74% बच्चे स्कूल जाने से पहले नहा लेते हैं जबकि योग न करने वाले 67% बच्चे स्कूल जाने से पहले नहाते हैं।

पांचवा प्रश्न है - स्कूल से आने के बाद आप क्या करते हैं ? पहले समूह के 43% बच्चे स्कूल से आने के बाद सोते हैं तो दूसरे समूह के 14% बच्चे

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

ही स्कूल से आने के बाद सोते हैं। प्रथम समूह के 29% बच्चे दूरदर्शन देखते हैं तो दूसरे समूह के 35% बच्चे।

अगला प्रश्न है - रात को आप कब सोते हैं - 72% बच्चे पहले समूह के खाने के बाद पढ़ाई करके सोते हैं तो दूसरे समूह के 44% बच्चे।

बच्चों की दिनचर्या की उनके व्यक्तित्व विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रश्न 1 से 8 का अवलोकन करने से यह स्पष्ट हो रहा है कि प्रातः उठने से लेकर रात को सोने तक की स्थिति में योग करने वाले बच्चे ज्यादा नियमित हैं। जल्दी सोकर उठने वाले बच्चों में स्फूर्ति, ताजगी, प्रत्येक कार्य को करने का उत्साह व पढ़ाई में एकाग्रता देखी जा सकती है। यह स्पष्ट ही है कि यदि नित्यकर्म नियमित हैं तो उसका स्वास्थ्य पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जो बच्चे दोपहर को सो लेते हैं, शाम को फिर वे नई स्फूर्ति से खेल सकते हैं, पढ़ सकते हैं, जबकि देर से उठने वाले बच्चों की दिनचर्या ही गड़बड़ा जाती है व शाम तक वे थके व बुझे-बुझे से दिखते हैं।

3.42 खान-पान से संबंधित प्रश्नावली -

अगला प्रश्न है - आप नाश्ते में क्या पसंद करते हैं ? इसमें योग करने वाले 58% बच्चे पराठा या रोटी सब्जी पसंद करते हैं, योग न करने वाले बच्चों का 31% रोटी-सब्जी नाश्ते में पसंद करते हैं। ब्रेड बटर, आमलेट 19% पहले समूह में व दूसरे समूह में 49% बच्चे तथा हल्का नाश्ता जैसे बिस्किट, चिप्स इत्यादि को पसंद करते हैं पहले समूह में 23% दूसरे समूह में 20% बच्चे।

आठवां प्रश्न है ? आप कैसा भोजन करते हैं- इसमें पहले समूह के 67% बच्चे शुद्ध शाकाहारी हैं जबकि दूसरे समूह के 51% बच्चे शाकाहारी हैं। 19% बच्चे मांसाहारी हैं तो दूसरे समूह में 34% बच्चे मांसाहारी हैं।

उपरोक्त आहार संबंधी दोनों प्रश्नों से यह बात सामने आयी कि योग से सात्विक भोजन की प्रवृत्ति बढ़ती है और यह सर्वविदित है कि सात्विक भोजन से व्यक्ति सतोगुण की ओर प्रेरित होता है।

3.43 यम नियमादि से संबंधित प्रश्नावली-

अगला प्रश्न है- आपको किसी ने मारा तो आप क्या करते हैं ?- पहले समूह के 81% बच्चे, दूसरे समूह के 47% बच्चे बड़ों से उसकी शिकायत करते हैं । पहले समूह के 13% व दूसरे समूह के 30% बच्चे खुद भी उसे मारते हैं ।

दसवां प्रश्न है- किसी भी जानवर को दूसरों द्वारा मारने या छेड़ने पर आप क्या करते हैं ? पहले समूह के 72% बच्चे और दूसरे समूह के 68% बच्चे उसे ऐसा करने से मना करते हैं ।

अगला प्रश्न है- कभी शाला में शिक्षक द्वारा पीटने पर क्या करते हैं- योग करने वाले 22% बच्चों को तथा न करने वाले 12% बच्चों को पीटने पर बुरा लगता है । बारहवां प्रश्न है- अपने मित्र को किसी की वस्तु चुराता देखकर आप क्या करते हैं- पहले समूह के 56% बच्चे तथा दूसरे समूह के 51% बच्चे उसे ऐसा करने से मना करते हैं ।

अगला प्रश्न है- अपने साथियों की अच्छी डिजाइन की पेंसिल, रबर, टिफिन बाक्स, कम्पास देखकर कैसा लगता है- पहले समूह के 45% और दूसरे समूह के 40% बच्चे घर आकर माता-पिता से वैसी ही वस्तु लेने की जिद करते हैं । पहले समूह के 8% बच्चे तथा दूसरे समूह के 17% बच्चे इन वस्तुओं को चुपचाप उठाकर घर ले जाते हैं । पहले समूह के 47% बच्चे तथा दूसरे समूह के 43% बच्चे अपने पास वैसी चीजें नहीं है यह सोचकर दुखी हो जाते हैं ।

बाल सुलभ प्रतिक्रिया स्वरूप हर बच्चा जैसी चीजें दूसरों के पास देखता है उसकी जिद वह अपने अभिभावकों से करता है ।

चौदहवां प्रश्न है- परीक्षा देने जाने से पहले- 31% बच्चे पहले समूह के तथा दूसरे समूह के 28% बच्चे पूरी तैयारी से संतुष्ट होते हैं जबकि 58% बच्चे प्रथम समूह के तथा 62% बच्चे द्वितीय समूह के पूरी तैयारी होने पर भी घबराहट अनुभव करते हैं ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अगला प्रश्न है- रास्ते में किसी का पर्स मिलने पर- 19% बच्चे प्रथम समूह के तथा दूसरे समूह के 20% बच्चे, पर्स सही पते पर पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं। प्रथम समूह के 68% व द्वितीय समूह के 71% बच्चे घर में बताते हैं जबकि प्रथम समूह के 13% व द्वितीय समूह के 9% बच्चे पैसा खर्च कर देते हैं।

प्रश्न क्रमांक 9 से 15 यम-नियमादि से संबंधित प्रश्न हैं। यम के अन्तर्गत- सत्य, अस्तेय (धन द्रव्य या अधिकार का अन्यायपूर्वक हरण करना) अहिंसा नियम के अन्तर्गत शौच, संतोष संबंधी प्रश्न के अवलोकन से एक बात स्पष्ट रूप से सामने आयी कि योग करने वाले बच्चे मानवीय संवेदनाओं के प्रति अधिक समझदार हैं।

3.44 शारीरिक विकास से संबंधित प्रश्नावली-

सोलहवां प्रश्न है- आप का स्वास्थ्य कैसा रहता है ? योग करने वाले 52% बच्चे तथा योग न करने वाले 46% बच्चों की तबियत प्रायः ठीक रहती है।

अगला प्रश्न है- आपकी उँचाई कैसी है ? पहले समूह के 54% बच्चे तथा दूसरे समूह के 49% बच्चों को उँचाई अधिक होने के कारण पीछे बैठना पड़ता है।

अठारहवां प्रश्न है- आपके दांत कैसे हैं- 55% बच्चे पहले समूह के तथा 51% बच्चे दूसरे समूह के दांत एक समान मोतियों जैसे हैं।

अगला प्रश्न है- आपको भूख कैसी लगती है ? योग करने वाले 46% बच्चे तथा योग न करने वाले 41% बच्चों को हर समय कुछ न कुछ खाते रहने का मन करता है।

बीसवां प्रश्न है- जब आप अपने साथियों के साथ खेलते हैं- प्रथम समूह के 54% बच्चे तथा दूसरे समूह के 46% बच्चे अंत तक खेलते रहते हैं। योग करने वाले 26% बच्चे तथा योग न करने वाले 29% बच्चे जल्दी थक जाते हैं।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्रश्न 16 से 20 शारीरिक विकास से संबंधित है आंकड़ों के अवलोकन से यह बात उभर कर सामने आयी कि योग करने वाले बच्चे ज्यादा स्वस्थ रहते हैं ।

3.45 सामाजिक विकास से संबंधित प्रश्नावली-

इक्कीसवां प्रश्न है- जब आप घर में रहते हैं- 57% बच्चे जो योग करते हैं तथा 55% बच्चे जो योग नहीं करते घर के आस-पास के मित्रों के साथ खेलते हैं ।

अगला प्रश्न है- अपने मित्रों के साथ लड़ाई होने पर- 60% बच्चे पहले समूह के और 53% बच्चे दूसरे समूह के, लड़ाई को खत्म करने का प्रयास करते हैं ।

तेइसवां प्रश्न है- खेल के मैदान में खेलते समय- योग करने वाले 77% तथा योग न करने वाले 65% बच्चे खेल नियमानुसार खेलते हैं ।

अगला प्रश्न है- खेलते समय आपके मित्र को चोट लगने पर- प्रथम समूह के 52% बच्चे तथा द्वितीय समूह के 57% बच्चे खुद उसकी सहायता करते हैं ।

पच्चीसवां प्रश्न है- किसी प्रतियोगिता में भाग लेकर उसमें पुरस्कार नहीं मिलने पर- प्रथम समूह के 24% बच्चे तथा दूसरे समूह के 20% बच्चे अगली बार और अच्छी तैयारी से जाने की सोचते हैं ।

21 से 25 तक किए गए प्रश्न सामाजिक विकास से संबंधित हैं । अंक तालिका से यह ज्ञात हो रहा है कि योग करने वाले बच्चों में सामाजिकता की समझ अधिक है ।

3.46 मानसिक विकास से संबंधित प्रश्नावली-

छब्बीसवां प्रश्न है- पढ़ाई करते समय- 72% बच्चे प्रथम समूह के तथा दूसरे समूह के 67% बच्चों को अपना पाठ जल्दी याद हो जाता है ।



... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रम्

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रम्

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अगला प्रश्न है- कक्षा में शिक्षिका द्वारा समझाये जाने पर- 79% बच्चे पहले समूह के तथा दूसरे समूह के 57% बच्चे एक बार में ही समझ जाते हैं ।

अट्टाइसवां प्रश्न है- घर में पढ़ते समय- योग करने वाले 62% बच्चे तथा योग न करने वाले 51% बच्चे पढ़ाई करते समय टी.व्ही. या टेप चालू रहने पर भी उनको कोई फर्क नहीं पड़ता, 15% बच्चे प्रथम समूह के तथा 28% बच्चे दूसरे समूह के शांत कमरे में पढ़ते हैं ।

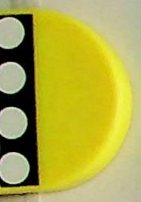
अगला प्रश्न है- कक्षा में कोई कहानी सुनाये जाने पर- 65% बच्चे प्रथम समूह के तथा दूसरे समूह के 60% बच्चे उसे तुरन्त दुहरा सकते हैं ।

तीसवां प्रश्न है- गणित में पहाड़े (Tables) याद करने पर- 49% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 34% बच्चे बीच से पूछने पर तुरन्त बता सकते हैं । 8% बच्चे प्रथम समूह के, सिर्फ गुणा करके ही बता पाते हैं जबकि 43% बच्चे प्रथम समूह के तथा 55% बच्चे दूसरे समूह के कुछ पूछने पर मन में शुरू से पहाड़ा बोलते हैं तभी बता पाते हैं ।

अगला प्रश्न है चित्रकारी (ड्राइंग) करना आपको कैसा लगता है ? प्रथम समूह के 65% बच्चे तथा दूसरे समूह के 59% बच्चे अपने आप सोचकर चित्र बनाते हैं तो 9% बच्चे प्रथम समूह के तथा 12% बच्चे द्वितीय समूह को ड्राइंग अच्छी नहीं बनती इसलिए ड्राइंग करना अच्छा नहीं लगता ।

बत्तीसवां प्रश्न है- आप अपना होमवर्क कैसे करते हैं- 61% बच्चे प्रथम समूह के तथा 68% बच्चे दूसरे समूह के, होमवर्क अपने आप करते हैं ।

पूछे गये प्रश्नों में 26 से लेकर 32 तक के प्रश्न मानसिक विकास संबंधी हैं । आंकड़ों से यह बात सामने आयी कि योग करने वाले बच्चों का मानसिक विकास अधिक अच्छा पाया गया, उनमें एकाग्रता, स्मरण शक्ति व कल्पना शक्ति अधिक विकसित होती है ।



...
...
...

...
...
...

...
...
...

...
...
...

...
...
...

...
...
...

...
...
...

3.47 संवेगात्मक विकास संबंधी प्रश्नावली-

तैंतीसवां प्रश्न है- आपके द्वारा कांच का सामान टूट जाने पर- 44% बच्चे प्रथम समूह के तथा 33% बच्चे द्वितीय समूह के आगे से ध्यान देकर काम करने के लिए कहते हैं ।

अगला प्रश्न है- थोड़ी देर के लिए आप घर पर अकेले हों तो- योग करने वाले 35% बच्चे तथा योग न करने वाले 38% बच्चे निश्चित होकर टी.व्ही. देखते हैं ।

पैंतीसवां प्रश्न है- आपके घर मेहमान आने पर - 79% बच्चे प्रथम समूह के तथा दूसरे समूह के 68% बच्चे हाथ जोड़कर नमस्ते करते हैं ।

अगला प्रश्न है- आपके बीमार पड़ने पर आपकी देखभाल सबसे ज्यादा कौन करता है- 78% बच्चे प्रथम समूह के तथा 49% बच्चे द्वितीय समूह के अनुसार माता-पिता उनकी देखभाल करते हैं जबकि 20% बच्चे प्रथम समूह के तथा 43% दूसरे समूह के बच्चों की देखभाल उनकी आया करती हैं ।

अगला प्रश्न है - कक्षा में अच्छे नम्बर लाने पर - 54% बच्चे प्रथम समूह के तथा दूसरे समूह के 51% बच्चों को और अच्छे नम्बर लाने के लिए उत्साहित माता-पिता द्वारा किया जाता है ।

अड़तीसवां प्रश्न है आप अपनी किसी समस्या को किसे बताते हैं- 57 % बच्चे प्रथम समूह के तथा 43% बच्चे द्वितीय समूह के अपने माता-पिता या परिवार के किसी खास सदस्य को बताते हैं जबकि 17% प्रथम समूह के तथा 11% बच्चे द्वितीय समूह के, अपने किसी खास मित्र को बताते हैं ।

अगला प्रश्न है आप सबसे अधिक विश्वास करते हैं - 78% बच्चे प्रथम समूह के तथा 64% बच्चे द्वितीय समूह के अपने माता-पिता पर विश्वास करते हैं । 18% बच्चे प्रथम समूह के तथा 29% बच्चे दूसरे समूह के अपने मित्र पर अधिक विश्वास करते हैं ।

विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

चालीसवां प्रश्न है- आपके द्वारा शाला में कोई वस्तु गुमने पर 56% बच्चे पहले समूह के तथा दूसरे समूह के 49% बच्चों को अपनी चीजें सम्हालकर रखने को कहकर खोई वस्तु खरीद देते हैं ।

33 से 40 तक के पूछे गये प्रश्न संवेगात्मक विकास से संबंधित है । इन प्रश्नों से यह बात सामने आयी कि जिन परिवारों में योग का वातावरण है वहाँ बच्चे न सिर्फ माता-पिता पर निर्भर हैं बल्कि माता-पिता उनकी ओर अधिक ध्यान देते हैं और उनकी अच्छाइयों को प्रोत्साहित करते हैं ।

3.48 यौगिक क्रियाओं से संबंधित प्रश्नावली-

41 से 45 तक के प्रश्न सिर्फ योग करने वाले बच्चों से ही भरवाये गये ।

इकतालिसवां प्रश्न है- शाला में आने के बाद ध्यान करते हैं तो 72% बच्चे ध्यान करने के लिए उत्सुक होते हैं ।

अगला प्रश्न- ध्यान के दौरान कैसा लगता है ? 70% बच्चों को मन शांत लगता है, 21% बच्चों के मन में अनेक विचार आते हैं ।

तितालिसवां प्रश्न है- ध्यान करने के बाद कैसा लगता है ? 57% बच्चों को शरीर में हल्कापन लगता है । 23% बच्चों को चिड़चिड़ाहट होती है व 20% बच्चों का सिर दुखता है ।

अगला प्रश्न है - प्राणायाम करते हैं क्या ? क्या 89% बच्चे रोज प्राणायाम करते हैं । अंतिम प्रश्न है - प्राणायाम करने पर कैसा लगता है ? 76% बच्चों को प्रसन्नता व ताजगी लगती है ।

3.5 प्राप्त सांख्यिकीय आंकड़ों का सामान्य-विश्लेषण -

(आ) नियमित रूप से यौगिक क्रियायें करने व यौगिक क्रियायें न करने वाले विद्यार्थियों से संबंधित सांख्यिकीय आंकड़ों का स्वरूप-विश्लेषण- (द्वितीय प्रतिदर्श 11 से 16 वर्ष) समूह 11 से 16 वर्ष के किशोर छात्र-छात्राओं से प्राप्त आंकड़ों का सामान्य विश्लेषण निम्नानुसार है -

योग करने वाले बच्चे

योग न करने वाले बच्चे

A -	सकारात्मक उत्तर	(+ ve)
B -	नकारात्मक उत्तर	(- ve)
C -	उदासीन उत्तर	(न्यूट्रल)



3.51 दिनचर्या से संबंधित प्रश्न -

पहला प्रश्न है - आप सुबह कितने बजे उठते हैं ? योग करने वाले 72% बच्चे सूर्योदय से पहले उठते हैं जबकि योग न करने वाले बच्चों का प्रतिशत 56 है ।

दूसरा प्रश्न है - उठने के पश्चात् आप सर्वप्रथम क्या करते हैं ? 86% बच्चे पहले समूह के शारीरिक नित्य कर्म पर ध्यान देते हैं जबकि 79% बच्चे जो योग नहीं करते हैं नित्य कर्म पर ध्यान देते हैं ।

तीसरा प्रश्न है - आप सुबह कब नहाते हैं - 64% बच्चे योग करने वाले तथा 58% बच्चे जो योग नहीं करते हैं - नित्य कर्म से निवृत्त होकर नहाते हैं ।

चौथा प्रश्न है-स्नान के बाद क्या करते हैं ? 85% बच्चे योग करने वाले व 65% बच्चे जो योग नहीं करते हैं - स्नान के बाद ध्यान, पूजा आदि करते हैं ।

पांचवा प्रश्न है - स्कूल से आने के बाद आप क्या करते हैं ? 82% बच्चे पहले समूह के और 54% बच्चे दूसरे समूह के फ्रेश होकर खेलने चले जाते हैं ।

छठवां प्रश्न है - रात को आप कब सोते हैं ? 86% बच्चे योग करने वाले तथा 74% योग न करने वाले बच्चे अपना होमवर्क और पढ़ाई पूरी होने पर ही सोते हैं ।

प्रश्न 1 से 6 दिनचर्या संबंधी प्रश्न हैं. आंकड़ों के अवलोकन से यह बात सामने आ रही है कि दिनचर्या का बालक के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहता है । योग करने वाले बच्चों की दिनचर्या अधिक नियमित रहती है । सुबह जल्दी उठना, उठकर जल्दी स्नान आदि करने से पूरे दिन ताजगी रहती है, पढ़ने के लिए समय भी अधिक मिल पाता है ।

— एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् —

एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः एतद् भाष्यं हि विज्ञेयम् — इति शब्दः

3.52 खान-पान संबंधी प्रश्न-

सातवां प्रश्न है - आप किस तरह का भोजन पसंद करते हैं ? योग करने वाले 74% तथा योग न करने वाले 64% बच्चे, सात्विक, शाकाहारी भोजन (जिससे जीवन सत्व अधिक हो) पसंद करते हैं । 2% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 15% बच्चे मांसाहार व अंडे से बने पदार्थ पसंद करते हैं ।

आठवां प्रश्न है आप टिफिन स्कूल क्या ले जाना पसंद करते हैं ? 48% बच्चे योग करने वाले तथा 40% बच्चे योग न करने वाले, रोटी सब्जी पसंद करते हैं ।

नौवा प्रश्न है - आपको भूख लगने पर आप क्या खाते हैं ? 65% बच्चे योग करने वाले तथा 67% बच्चे योग न करने वाले बच्चों के उत्तर हैं कि उन्हें जो मिल जाता है वही खा लेते हैं ।

प्रश्न क्रमांक 7,8,9 आहार संबंधी प्रश्न हैं । योग करने वाले बच्चों का शाकाहार की ओर झुकाव अधिक है । शाकाहार से बालक का व्यवहार सतोगुण की ओर प्रेरित होता है । योग न करने वाले बच्चों का मांसाहार व तले-भूने चटपटे भोजन की ओर रुझान अधिक है । इस प्रकार का भोजन अधिक उत्तेजना उत्पन्न करता है जिससे बच्चों की चंचलता बढ़ती है ।

3.53 मानसिक विकास से संबंधित प्रश्न -

प्रश्न दसवां है - जब आप स्कूल में रहते हैं तो क्या करते हैं ? 91% बच्चों योग करने वाले तथा योग न करने वाले 87% बच्चे सारा ध्यान पढ़ाई पर लगाते हैं ।

ग्यारहवां प्रश्न है - कक्षा में अध्ययन-अध्यापन के समय योग करने वाले 87% बच्चे तथा 78% योग न करने वाले बच्चे विषय वस्तु को जल्दी ही समझ जाते हैं ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अगला प्रश्न है - घर पर आप कैसे पढ़ाई करते हैं ? 69% बच्चे योग करने वाले तथा 58% योग न करने वाले बच्चे, शोर में भी डिस्टर्ब नहीं होते हैं जबकि 15% बच्चे योग करने वाले 20% योग न करने वाले बच्चे एकान्त व शांत वातावरण में पढ़ते हैं ।

तेरहवा प्रश्न है - परीक्षा देते समय 89% बच्चे पहले समूह के व 76% बच्चे दूसरे समूह के पूरी तैयारी से जाते हैं और पूरी ईमानदारी से लिखते हैं ।

प्रश्न चौदहवां है- परीक्षा परिणाम देखकर आपकी क्या प्रतिक्रिया होती है ? 82% बच्चे प्रथम समूह के तथा 79% बच्चे दूसरे समूह के, अपना परीक्षा परिणाम देखकर संतुष्ट होते हैं ।

उपरोक्त 10 से 14 प्रश्न मानसिक विकास संबंधी हैं । आंकड़ों से यह स्पष्ट हो रहा है कि योग करने वाले बच्चों का मानसिक स्वास्थ्य अपेक्षाकृत अधिक अच्छा है उनमें एकाग्रता, मनोबल और ग्रहणशीलता अधिक पायी गयी ।

3.54 सामाजिक विकास से संबंधित प्रश्न -

पन्द्रहवा प्रश्न है - स्कूल की सांस्कृतिक गतिविधियों में 89% प्रथम समूह के तथा 74% बच्चे द्वितीय समूह के बड़ चढ़ कर हिस्सा लेते हैं ।

अगला प्रश्न है- आप किसी से दोस्ती करते हैं तो 54% बच्चे प्रथम समूह के तथा 36% बच्चे द्वितीय समूह के दोस्त की सब बातें मानते हैं ।

सत्रहवां प्रश्न है - खेल के मैदान में खेलते समय 73% बच्चे योग करने वाले तथा 70% योग न करने वाले बच्चे पूरी लगन व ईमानदारी से खेलना पसंद करते हैं ।

अठारहवां प्रश्न है- आप अपने अवकाश के समय में क्या करना पसंद करते हैं 33% बच्चे योग करने वाले व 23% बच्चे योग न करने वाले अपने अवकाश के समय में समाज-सेवा करना चाहते हैं जबकि 39% बच्चे प्रथम समूह के व 55% बच्चे द्वितीय समूह के सिनेमा, सर्कस या अन्य मनोरंजन में अपना समय व्यतीत करते हैं ।



... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...
... ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ...

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्रश्न 15 से 18 सामाजिक विकास संबंधी प्रश्न हैं। सांस्कृतिक गतिविधियों में हिस्सा लेना, अधिक से अधिक मित्र बनाना, खेल को खेल भावना से खेलना इत्यादि बातों में योग करने वाले बच्चे अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय दिखाई दे रहे हैं। इससे यह स्पष्ट हो रहा है कि योग से बालक का सामाजिक विकास प्रभावित होता है।

3.55 संवेगात्मक विकास से संबंधित प्रश्न

अगला प्रश्न है - आपका कोई मित्र बड़ों से अभद्र व्यवहार करता है तो 91% बच्चे योग करने वाले तथा 89% बच्चे योग न करने वाले, उसे समझाते हैं कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए।

बीसवां प्रश्न है- किसी प्रतियोगिता में पुरस्कार आपकी जगह आपके मित्र को प्राप्त होने पर 84% बच्चे प्रथम समूह के 76% दूसरे समूह के बच्चों को अधिक खुशी होती है।

अगला प्रश्न है - यदि आपका कोई मित्र संकट में फस जाय- प्रथम समूह के 93% बच्चे व दूसरे समूह के 81% बच्चे उसकी सहायता करेंगे।

बाइसवां प्रश्न है - यदि अचानक आपको किसी समस्या का सामना करना पड़े तो 84% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 66% बच्चे उस समस्या का हल ढूंढने के लिए उस पर शांति से मनन करते हैं।

तेइसवां प्रश्न है - कोई अनुचित कार्य करने के प्रति आपकी क्या सोच है ? 21% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 24% बच्चों का मन इस बात के लिए उनका साथ नहीं देता।

अगला प्रश्न है - आप सबसे अधिक किस पर विश्वास करते हैं ? 37% योग करने वाले तथा 24% बच्चे योग न करने वाले अपने आप पर विश्वास करते हैं।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

पच्चीसवां प्रश्न है - अध्ययन करते समय क्या आप अपनी पुस्तकें अपने मित्र को देना पसंद करेंगे ? 84% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 65% बच्चे अपनी पुस्तकें मित्रों को देना पसंद करेंगे ।

प्रश्न 19 से 25 संवेगात्मक विकास संबंधी प्रश्न हैं । दूसरे बच्चों से ईर्ष्या न करना, गलत कार्य न के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, संकट में फंसे मित्र की मदद के लिए तत्पर रहना आदि इन सभी बातों में योग करने वाले बच्चों का प्रतिशत ज्यादा होना इस बात की ओर इंगित करता है कि योग करने से भावात्मक विकास में सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं ।

3.56 यम नियमादि से संबंधित प्रश्न -

छब्बीसवां प्रश्न है - यदि आप किसी पर अन्याय होता देखते हैं तो 88% बच्चे योग करने वाले तथा 76% योग न करने वाले बच्चे उस पर हुए अन्याय के खिलाफ आवाज उठाते हैं या लड़ते हैं ।

अगला प्रश्न अपने मित्र को किसी की वस्तु चुराता देखकर आप क्या करते हैं ? 93% बच्चे प्रथम समूह के तथा 85% दूसरे समूह के बच्चे उसे ऐसा करने से मना करते हैं ।

अठ्ठाइसवां प्रश्न है - रास्ते में किसी का पर्स मिलने पर 46% बच्चे प्रथम समूह के तथा 39% बच्चे दूसरे समूह के उसे सही व्यक्ति तक (जिसकी पर्स है तक) पहुंचाने का प्रयास करेंगे ।

अगला प्रश्न है - स्कूल में आप शिक्षक द्वारा दंडित किये जाने पर 86% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 75% बच्चे अपने आपको अपमानित महसूस करते हैं ।

प्रश्न 26 से 29 यम नियम से संबंधित प्रश्न हैं । इसके अन्तर्गत सत्य बोलना, चोरी न करना, हिंसा न करना इत्यादि आता है. तुलनात्मक अध्ययन करने से यह बात सामने आयी कि योग करने वाले बच्चे यम नियमों को अधिक अच्छे से पालन करते हैं ।

3.57 संस्कार तथा आत्म सम्मान संबंधी प्रश्न-

तीसवां प्रश्न है - सुबह घर के वयस्क सदस्यों को प्रणाम करने के प्रति क्या सोचते हैं - 88% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 80% बच्चों का कहना है कि प्रणाम करने से मानसिक शांति मिलती है ।

अगला प्रश्न है- यूनिफार्म के प्रति आप क्या सोचते हैं - 76% पहले समूह के बच्चे तथा 74% बच्चे दूसरे समूह के यह मानते हैं कि यह मानसिक एकता के लिए जरूरी है ।

बत्तीसवां प्रश्न है स्कूल जाते समय तैयार होने के लिए 82% बच्चे योग करने वाले तथा 71% योग न करने वाले बच्चे अपना सभी सामान खुद निकालकर तैयार हो जाते हैं ।

अगला प्रश्न- लाइब्रेरी की पुस्तकें उपयोग में लाते समय- 34% बच्चे प्रथम समूह के तथा 42% दूसरे समूह के बच्चे उपयोगी जानकारी को लिख लेते हैं ।

चौत्तीसवां प्रश्न है - आपके विचार से खूब मेहनत करके पढ़ना कब सफल होता है - 77% बच्चे प्रथम समूह के तथा द्वितीय समूह के 61% बच्चों का यह मानना है कि जब नये तथ्यों की खोज करने की क्षमता बढ़ती है ।

अगला प्रश्न है- सुखी जीवन के लिए आप किस बात को महत्व देते हैं 72% बच्चे योग करने वाले तथा योग न करने वाले 74% बच्चे मन की शांति चाहते हैं । जबकि 23% बच्चे प्रथम समूह के तथा 17% दूसरे समूह के बच्चे, शारीरिक स्वास्थ्य को महत्व देते हैं ।

छत्तीसवां प्रश्न है - आप किस श्रेणी के व्यक्तियों को पसंद करते हैं - 64% बच्चे योग करने वाले तथा 52% योग न करने वाले बच्चे, विद्वान और नवीन खोजों से ज्ञान बढ़ाने वाले व्यक्तियों को पसंद करते हैं ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अगला प्रश्न है - आप अपने मित्र के जन्म दिन के अवसर पर 68% बच्चे प्रथम समूह के तथा 63% द्वितीय समूह के बच्चे अपने मित्र को कोई ज्ञानवर्धक पुस्तकें देना पसंद करते हैं ।

प्रश्न 30 से 37 अन्य प्रश्नों के अन्तर्गत आते हैं । जो बच्चों की सोच की दिशा को दर्शाते हैं । हमारी भारतीय परम्परा में बड़ों को प्रणाम करना अच्छे संस्कारों के रूप में देखा जाता है किन्तु आज की युवा पीढ़ी इसे दकियानूसी परम्परा मानती है चूंकि गुरु-शिष्य परम्परा पर आधारित होने के कारण योग शिक्षा की प्रथम सीढ़ी गुरुजनों को प्रणाम करना ही है । यूनिफार्म को मानसिक एकता के लिए आवश्यक बताया है दोनों समूह के बच्चों ने, जो सकारात्मक सोच प्रदर्शित करता है । बत्तीसवां प्रश्न स्कूल के लिए तैयार होने के लिए आत्मनिर्भरता को इंगित करता है जिसमें योग करने वाले बच्चे अधिक आत्मनिर्भरता की ओर प्रेरित होते हैं ।

3.58 योग से संबंधित प्रश्न -

प्रश्न 38 से 45 तक के प्रश्न योग करने वाले बच्चों से ही भरवाये गये ।

अड़तीसवां प्रश्न है - स्कूल में ध्यान व योग की शिक्षा के बारे में क्या सोचते हैं - 97% बच्चों का यह मानना है कि इससे दिन भर मस्तिष्क तरो-ताजा और स्वस्थ रहता है, साथ ही शारीरिक चुस्ती भी बनी रहती है ।

अगला प्रश्न- आप स्कूल में ध्यान करने के लिए उत्सुक होते हैं ? इसमें 77% बच्चे ध्यान के लिए उत्सुक होते हैं. रोज उनकी दिनचर्या में शामिल होने के कारण ध्यान करने के बाद ही वे स्वयं को स्वस्थ महसूस करते हैं ।

चालीसवां प्रश्न है - ध्यान के दौरान कैसा लगता है - 85% बच्चों को अत्यधिक शांति का अनुभव होता है । 10% बच्चों के मन में अनेक विचार आते हैं जबकि 5% बच्चों को नींद आती है । बच्चे मूलतः चंचल प्रवृत्ति के होते हैं एकाग्र करने की कोशिश करने के कारण उनके मन में अनेक विचार आते हैं ।

अगला प्रश्न है ध्यान करने के बाद कैसा लगता है ? 89% बच्चों ने बताया कि उन्हें दिनभर अत्यधिक तरोताजा लगता है । 6% बच्चों को ध्यान में मन न लगने के कारण चिड़चिड़ाहट होती है । 5% बच्चों का सिर दुखने लगता है ।

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

बयालीसवां प्रश्न है - छुट्टी के दिन या स्कूल न जाने पर क्या ध्यान करते हैं ? इस प्रश्न क्रं. उत्तर में 84% बच्चे घर में ध्यान करते हैं । 4% बच्चे ध्यान न करने के कारण आलस, बेचैनी तथा अस्वस्थता अनुभव करते हैं ।

अगला प्रश्न है - क्या आप प्राणायाम करते हैं ? 77% बच्चे रोज प्राणायाम करते हैं तथा 18% बच्चे नहीं करते । 5% बच्चे कभी-कभी करते हैं ।

अगला प्रश्न है - प्राणायाम करने पर कैसा अनुभव होता है - 96% बच्चों को प्राणायाम के उपयोग से अच्छा लगता है ।

अगला प्रश्न है प्राणायाम से आपके शिक्षण पर क्या असर पड़ता है ? 84% बच्चों ने बताया कि इससे उनके शिक्षण पर सकारात्मक परिणाम मिल रहे हैं ।

उपर्युक्त योग संबंधी आंकड़ों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो रहा है कि योग का बालक के सर्वांगीण विकास पर सकारात्मक प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है । यद्यपि दैनिक जीवन की गतिविधियों के संचालन में योग करने वाले तथा यौगिक अभ्यास न करने वाले बच्चों के प्रतिशत में अंतर बहुत अधिक नहीं है, पर उनकी हर गतिविधि के संचालन में अवश्य अंतर है. इन अंतरों के मूल स्रोत वंशानुक्रम तथा वातावरण में निहित हैं और उन अंतरों में प्रमुख है- योग की विभिन्न विधियों का नियमित अभ्यास.

3.6 सह-संबंधन

सह-संबंधन (कोरिलेशन) के माध्यम से भी प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय अध्ययन किया गया. प्राप्त परिणाम इस प्रकार हैं -



...

...

...

...

...

... ..

... ..

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

सह-सम्बन्ध तालिका क्रमांक - 1

(Corelation table - 1)

आयु वर्ग 6 -10 वर्ष

क्र.	विवरण	प्र.क्र.	A-A	B-B	C-C
1.	दिनचर्या संबंधी	1-6	0.917258	0.730439	0.888849
2.	आहार संबंधी	7-8	1		1
3.	यम नियम संबंधी	9-15	0.46329	0.771024	0.919792
4.	शारीरिक विकास	16-20	0.917098	0.149931	0.201737
5.	सामाजिक विकास	21-25	0.948587	0.649717	0.977141
6.	मानसिक विकास	26-32	0.635056	0.927998	0.912433
7.	संवेगात्मक विकास	33-40	0.4733375	0.6633038	0.050129
8.	योग संबंधी	41-45			

सह-सम्बन्ध तालिका क्रमांक - 2

(Corelation table-2)

आयु वर्ग 11-16 वर्ष

क्र.	विवरण	प्र.क्र.	A-A	B-B	C-C
1.	दिनचर्या संबंधी	1-6	0.633972	0.893859	0.731403
2.	आहार संबंधी	7-9	0.900742	0.872391	0.940478
3.	मानसिक विकास	10-14	0.917813	0.804236	0.972974
4.	सामाजिक विकास	15-18	0.965442	0.903686	0.938786
5.	संवेगात्मक विकास	19-25	0.961398	0.384795	0.673539
6.	यम-नियम	26-29	0.995687	0.620752	0.990152
7.	अन्य प्रश्न	30-37	0.882554	0.875533	0.951199
8.	योग संबंधी	38-45			



Table with 5 columns (likely representing different categories or measurements) and multiple rows of data. The text is faint and appears to be a continuation from the previous page.

Table with 5 columns (likely representing different categories or measurements) and multiple rows of data. This table appears to be a separate section or a continuation of the data from the first table.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

विश्लेषण तालिका क्रमांक - 3
6-10 वर्ष की आयु वर्ग का

प्र.क्र.	AA	BB	CC
1.	अतिउच्च	उच्च	अति उच्च
2.	पूर्णसह-संबंधी	-	पूर्णसह-संबंधी
3.	साधारण	उच्च	अति उच्च
4.	अति उच्च	नगण्य	नगण्य
5.	अति उच्च	उच्च	अति उच्च
6.	उच्च	अति उच्च	अति उच्च
7.	साधारण	उच्च	नगण्य

विश्लेषण तालिका क्रमांक - 4
11-16 वर्ष की आयु वर्ग का

प्र.क्र.	AA	BB	CC
1.	उच्च	अति उच्च	साधारण
2.	अति उच्च	अति उच्च	अति उच्च
3.	अति उच्च	उच्च	अति उच्च
4.	अति उच्च	अति उच्च	अति उच्च
5.	अति उच्च	निम्न	उच्च
6.	अति उच्च	उच्च	अति उच्च
7.	अति उच्च	अति उच्च	अति उच्च

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

3.7 वार्षिक परीक्षा-परिणामों के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

जिन विद्यार्थियों से प्रादर्श भरवाये गये थे, उन्हीं के वार्षिक परीक्षा (2002-03) में प्राप्त अंकों के आधार पर भी तुलनात्मक अध्ययन किया गया. प्राप्त आंकड़े इस प्रकार हैं-

तालिका क्रमांक - 5

योग करने वाले विद्यार्थियों के प्राप्तांक सत्र 2002-03		योग न करने वाले विद्यार्थियों के प्राप्तांक सत्र 2002-03	
कक्षा आयु वर्ग 6 से 10 वर्ष तक			
पहली	100%	80%	
दूसरी	100%	64.5%	
तीसरी	100%	69.8%	
चौथी	100%	57.74%	

कक्षा आयु वर्ग 11 से 16 वर्ष तक		
पाँचवीं	98.5%	91.83%
छटवीं	92.8%	54%
सातवीं	97.8%	81.44%
आठवीं	98.3%	53%
नवमीं	90%	65.9%
दसवीं	68%	54.8%

परीक्षाफल संबंधी उक्त तालिका को एक दृष्टि से देखने पर ही पता चल जाता है कि योग करने वाले विद्यार्थियों के प्राप्तांक प्रतिशत योग न करने वाले विद्यार्थियों की तुलना में श्रेष्ठ हैं; जो इस बात की साक्षी देते हैं कि विद्यार्थियों के जीवन पर योग की विभिन्न क्रियाओं का प्रभाव निस्संदेह रूप में पड़ता है.

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

तुलनात्मक अध्ययन एवं सहसंबंध से स्पष्ट है कि योग करने वाले एवं योग न करने वाले 6 से 10 वर्ष के बच्चों के शारीरिक तथा मानसिक विकास में कोई विशेष अंतर परिलक्षित नहीं होता पर उनके दैनिक कार्य-कलापों और परीक्षा के प्राप्तांकों में निश्चित रूप से यह अंतर स्पष्ट दिखाई देता है। योग करने वाले बालकों में आत्मसम्मान, साहस, दृढ़ता, जोखिम उठाने की क्षमता, चुनौतियों का सामना करने का इरादा, एकाग्रता तथा विषयों का सामान्य ज्ञान अपेक्षाकृत अधिक पाया गया; कार्य में फुर्ती और चेहरे पर चमक भी उन्हें एक अलग श्रेणी प्रदान करती है।

किशोर बालक-बालिकाओं में अर्थात् 11 वर्ष से लेकर 16 वर्ष के विद्यार्थियों में यह अंतर तो एक विभाजक रेखा के रूप में हमारे समक्ष आता है और ऐसा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि यदि योग न करने वाले विद्यार्थियों को नियमित रूप से योग की कुछ क्रियायें कराई जातीं तो उनका व्यक्तित्व-निर्माण नये ढंग से होता, उसमें एक समन्विति होती। आत्मनिष्ठा के साथ शिक्षा के अन्य गुणों का विकास सुसंगठित ढंग से होता; उनके दैनिक जीवन के कार्य-कलापों में जो थोड़ी बहुत अस्त-व्यस्तता दिखाई देती है, वह या तो कम होती या पूरी तरह समाप्त हो जाती; व्यक्तित्व का परिमाणन केवल परीक्षा में प्राप्तांकों से नहीं देखा जाना चाहिए; व्यक्तित्व, उठने-बैठने, बोलने, चलने, कार्य करने, खेलने-कूदने, विभिन्न पाठ्येतर गतिविधियों में भाग लेने, रचनात्मक कार्यों आदि के द्वारा भी व्यक्त होता है; योग की क्रिया करने वाले विद्यार्थियों में ये सभी कार्य संयत हैं और जीवन की आंतरिक ऊर्जा को प्रगट करते हैं, पर योग की क्रियाओं की जानकारी से रहित विद्यार्थियों में ये सारे कार्य विश्रृंखलित होते हैं, विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों में ऐसा कुछ नहीं होता जिसके माध्यम से विद्यार्थियों की इस प्रकार की गतिविधियों पर नियंत्रण किया जा सके या उन्हें एक समुचित दिशा-निर्देश दिया जा सके अतः बालकों के पाठ्यक्रम में योग-शिक्षा का समावेश आवश्यक है।

तुलनात्मक अध्ययन और सांख्यिकीय सह-संबंध का यही परिणाम है कि बालकों एवं किशोरों के जीवन-चक्र को संयमित ढंग से विकासशील करने के मूल में योग की निस्संदेह महत्वपूर्ण भूमिका है। योग को विज्ञानों का विज्ञान कहा जाता है, उसे कौशलपूर्वक कार्य करने की विद्या और सम्यक् जीवन जीने की शैली भी कहा गया है जो उसकी सही व्याख्यायें हैं। योग का महत्व इसी तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि आज विश्व के सभी उन्नत देशों की शिक्षा-व्यवस्था में योग को समुचित महत्व दिया जा रहा है।

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योग करने वाले एवं योग न करने वाले बालकों तथा किशोरों से प्राप्त आंकड़ों के तुलनात्मक आरेख परिशिष्ट में प्रस्तुत किए गये हैं. उनके अध्ययन से भी स्पष्ट है कि सांस्कृतिक, बालकों तथा किशोरों के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक व्यवहारों आदि पर यौगिक क्रियाओं का प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है. ग्राफों के तुलनात्मक आरेख इस तथ्य की स्पष्ट साक्षी दे रहे हैं. आरेखों में योग करने वाले और योग न करने वाले बालकों के सकारात्मक निशिधात्मक और कठस्त उत्तरों का एक साथ प्रमापन दिखाया गया है.

□

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अध्याय : 4

बाल-विकास और यौगिक शिक्षा का स्वरूप

1. शिक्षा का वास्तविक स्वरूप
2. योग को वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में शामिल करने की आवश्यकता.
 1. बालमन को कुसंस्कारों से मुक्त करना.
 2. पीनियल ग्रंथि की क्रियाशीलता को बढ़ाना.
 3. बच्चों को मानसिक रूप से तैयार करना.
 4. हार्मोन्स के अवरोध को दूर करना.
3. बच्चों की प्रमुख समस्यायें.
 1. एकाग्रता की कमी.
 2. स्थूलता.
 3. भूख न लगाना.
 4. अनियंत्रित संवेग.
4. योग का चिकित्सात्मक रूप.
 1. बाल अपराध.
 2. विकलांगता-शारीरिक, मानसिक
 3. बाल मधुमेह.
5. रोगों का यौगिक निदान एवं चिकित्सा.
6. भावातीत ध्यान.
7. अन्य चिकित्सा पद्धतियां.
8. योग : नये युग की नयी संस्कृति.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अध्याय 4

बाल-विकास और यौगिक शिक्षा का स्वरूप

4.1 वास्तविक शिक्षा का स्वरूप -

हम कह चुके हैं कि बाल विकास पर योग का प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है। बालक गीली मिट्टी के सदृश्य है, उसे हम जिस आकृति के रूप में ढालना चाहते हैं, वैसा ढाल सकते हैं।

बहुत सी ऐसी प्रक्रियायें हैं जिनके माध्यम से मानव मस्तिष्क में ज्ञान का आरोपण किया जा सकता है। बालक के न जानते हुए भी उसे शिक्षित किया जा सकता है। उसके मस्तिष्क की संरचना को भी प्रभावित किया जा सकता है।

वास्तविक शिक्षा वह है जो उसके मन और मस्तिष्क के व्यवहार को शिक्षित करे, बालक की अन्तर्निहित प्रतिभा को आलोकित करे तथा उसकी विकास प्रक्रिया में सहायक बने। यौगिक शिक्षा का प्रादुर्भाव मनुष्य के अन्तःकरण से होता है इसलिए इसका प्रभाव स्थायी होता है। उसमें व्यक्ति के मन और मस्तिष्क को नियंत्रित तथा रूपान्तरित करने के अमोघ साधन हैं, इसीलिए उसे शिक्षा की आधार-शिला कहा जा जाता है।

4.2 योग को वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में शामिल करने की आवश्यकता-

1। बाल मन को कुसंस्कारों को मुक्त करना-

बच्चों की स्वतंत्रता पर माता-पिता, अभिभावक एवं उनके गुरुजन भी प्रतिबंध लगा देते हैं, उन्हें दबाया जाता है तथा अनावश्यक नियंत्रण में रखा जाता है। उन पर ऐसा आचरण, व्यवहार करने के लिए दबाव डाला जाता है जो उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं होता। इस प्रकार हम उनके व्यक्तित्व को अपने सांचे में ढालने की असफल कोशिश करते हैं। हमारे मन में अपनी एक

कल्पना होती है जबकि बच्चों की कल्पना इससे सर्वथा भिन्न होती है। जब बच्चे छोटे होते हैं तब वे असहाय रहते हैं, उनके सामने बड़ों के अनुसार चलने के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं रहता परन्तु जैसे ही वे बड़े होते हैं वे विद्रोही हो जाते हैं।

वास्तव में ये बच्चे अपने माता-पिता का विरोध नहीं करते। वह तो उस ढांचे को ही तहस-नहस कर डालना चाहते हैं जो उनके बाल मन पर बड़ों ने थोप रखा है।

ऐसी स्थिति में अन्तर्मौन के द्वारा बच्चों के मन की गहराई में छिपे संस्कारों को बाहर निकाला जा सकता है। बच्चों को पूर्ण स्वतंत्रता के बीच सोचने, कल्पना करने तथा अन्तर्दर्शन की छूट देनी चाहिए जिससे वे अपने मन से उन कुसंस्कारों को दूर कर सकें जिन्हें वे पसंद नहीं करते। योग ऐसा करने में विशेष सहायक है।

2. पीनियल ग्रंथि की क्रियाशीलता को बढ़ाना -

मानव शरीर में पीनियल नामक एक छोटी किन्तु अत्यधिक महत्वपूर्ण ग्रंथि होती है जिसका शारीरिक सह-संबंध योग के अनुसार आज्ञा चक्र से है रहस्यवादियों तथा तान्त्रिकों ने इसे तृतीय नेत्र माना है। यह ग्रंथि बच्चों में बहुत क्रियाशील होती है जो मस्तिष्क की क्रियाशीलता पर प्रभाव डालती है। यह मस्तिष्क को सदा ग्रहणशील स्थिति में रखती है। इस प्रकार हम इस ग्रंथि को मानव मस्तिष्क का नियंत्रक, निर्देशक और व्यवस्थापक केन्द्र कह सकते हैं।

यह ग्रंथि आठ से दस वर्ष की अवस्था प्राप्त होते-होते क्रमशः निष्क्रिय होने लगती है, प्रौढ़ या वयस्क लोगों में तो यह अत्यल्प ही शेष रह जाती है। इस ग्रंथि के क्षय के साथ ही पीड्यूटरी ग्रंथि सक्रिय हो जाती है जिसे यौन परिपक्वता का प्रारंभ कह सकते हैं। अनेक बच्चे यौन परिपक्वता के विकास के इस संक्रमण काल में तालमेल ही स्थापित नहीं कर पाते।

आठ वर्ष की आयु से बच्चों को सूर्य नमस्कार, गायत्री मंत्र और प्राणायाम का अभ्यास कराया जाय तो उसका यौन विकास 2-3 वर्ष विलम्ब से होगा जिसके लिए वह मानसिक व शारीरिक रूप से तैयार रहेगा।

3. बच्चों को मानसिक रूप से तैयार करना -

मस्तिष्क ज्ञान का अति समर्थ केन्द्र है किन्तु फिर भी कुछ बच्चे मंद बुद्धि होते हैं, कुछ बच्चे तीक्ष्ण बुद्धि वाले होते हैं.

मानव की विकास-प्रक्रिया में उसके मस्तिष्क में स्थित भूरा द्रव पदार्थ निरन्तर स्रवित होता रहता है और वह बौद्धिक विकास एवं उसके संवेदनाओं के केन्द्रों को उत्तेजित करता रहता है.

योग के सरल अभ्यासों द्वारा सुस्त मस्तिष्क को व्यवस्थित और क्रियाशील किया जा सकता है. वहीं अति सक्रिय मस्तिष्क को शांत कर सही रास्ते पर अग्रसर किया जा सकता है.

हमारा मस्तिष्क दो गोलाद्धों में विभक्त है. दाहिने, गोलाद्ध का संबंध हमारी प्रज्ञा से है, जबकि बायें गोलाद्ध का संबंध हमारी विश्लेषात्मक क्षमता से होता है. शिक्षा के क्षेत्र में शोधकर्त्ता विविध शर्मन चेतावनी देते हुए कहते हैं कि बुद्धि और प्रज्ञा (मस्तिष्क के दोनों गोलाद्ध) के संयोग के मार्गों में अनेक बाधाएँ हैं. इन बाधाओं को दूर करने के लिए शिक्षा जगत के शोधकर्त्ता आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण, ध्यान आदि के प्रभावों का अध्ययन व विश्लेषण कर रहे हैं. इसके कुछ आश्चर्यजनक परिणाम सामने आ रहे हैं, प्राणायाम के अभ्यास से मस्तिष्क के दोनों गोलाद्धों में एकत्व आता है तथा वे एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं. अभ्यासकर्त्ता स्वयं को ऊर्जा से भरा हुआ अनुभव करते हैं.

हमारे मेरुदंड में प्रमुखतः दो नाड़ियाँ स्थित हैं जिन्हें योग की भाषा में इडा और पिंगला कहा जाता है. इनमें से एक हमारे मस्तिष्क तथा उसके क्रियाकलापों का नियंत्रण करती है जबकि दूसरी हमारी प्राणशक्ति पर पड़ने वाले प्रभावों को नियंत्रित करती है. इसलिए इन दोनों प्रवाहों का समुचित नियमन आवश्यक है जिससे बच्चों का स्वस्थ विकास संभव हो सके. प्राणायाम के अभ्यास द्वारा प्राणशक्ति मस्तिष्क के प्रत्येक अंग तक पहुँचती है तथा उसकी कार्यक्षमता को पुनः सक्रिय करती है. न केवल शारीरिक अपितु मानसिक क्रियाकलापों के लिए प्राण का संचार तथा वितरण जरूरी है.

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

जिस प्रकार किसी भी पौधे को लगाने से पहले भूमि को तैयार करना होता है, उसी प्रकार बच्चे के सर्वांगीण विकास के लिए उसको मानसिक रूप से तैयार करना होगा क्योंकि स्वस्थ मन ही बालक को सभी क्षेत्रों में सफलता दिलाने में सहायक होता है और यह सर्वविदित ही है कि मानव मन के विकास में योग सर्वाधिक भूमिका निभाता है।

4। हार्मोन्स के अवरोध को दूर करने में -

कभी-कभी यह देखा जाता है कि बालक की चुल्लिका ग्रंथि ठीक से कार्य नहीं करती है जिससे बालक में सुस्ती और मंदता आ जाती है, यौन ग्रंथि में सामंजस्य की कमी से भी मंदता आ सकती है। कुछ बच्चे 12, 13 वर्ष तक कुशाग्र बुद्धि होते हैं किन्तु बाद में एकाएक उनमें पिछड़ापन आ जाता है, ऐसा जनन ग्रंथियों के असामंजस्य के कारण होता है।

योगासनों के अभ्यास से इन सभी नलिका विहीन ग्रंथियों की सूक्ष्म रूप से मालिश होती है एवं उनके स्रोत नियंत्रित होते हैं जिससे बालक को भावात्मक उथलपुथल के दुष्प्रभावों से बचाया जा सकता है।

4.3 बच्चों की समस्यायें -

बच्चों की ऐसी अनेक समस्यायें होती हैं जिन्हें वे अभिव्यक्त नहीं कर पाते और न ही हम समझ पाते हैं। इस समय उनकी अभिव्यक्ति और खुद की मानसिक अवस्थाओं का ज्ञान अपरिपक्व होता है; वे अपनी समस्यायें बड़ों के सामने अच्छी तरह से नहीं रख पाते। इसलिए उनकी समस्याओं की अभिव्यक्ति उनके व्यवहार के माध्यम से होती है। अधिकतर माता-पिता मनोविश्लेषक नहीं होते, वे बच्चों की समस्याओं को सीमित दायरे में देखते हैं, जिससे समस्याओं का समाधान न होकर वे और अधिक विकराल रूप धारण कर लेती हैं।

हमें इन समस्याओं की तह में जाकर मूल कारण ढूँढना होगा। बच्चों की समस्याओं का मूल कारण सात से बाहर वर्ष की आयु के बीच एक प्रकार का असंतुलन पाया जाता है; उनका शारीरिक व मानसिक विकास एक साथ परिपक्व

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

नहीं हो पाता. कभी शारीरिक विकास की गति तीव्र होती है तो कभी मानसिक विकास की. इन्हीं दोनों विकासों के बीच तालमेल का अभाव ही बच्चों की विभिन्न समस्याओं का मूल कारण है. बच्चों की कुछ सामान्य समस्याएँ व उनका यौगिक निदान निम्नानुसार है-

अ. एकाग्रता की कमी-

यह बच्चों की एक बहुत ही आम व जटिल समस्या है. यदि हम उनकी इस समस्या का समाधान उन्हें बता दें तो उनकी शिक्षा-संबंधी समस्त समस्याएँ स्वयं ही हल हो सकती हैं. एकाग्रता की कमी के अनेक कारण हो सकते हैं जैसे- बालक का वंशानुक्रम, मानसिक विकास, विद्यालय का वातावरण इत्यादि. एकाग्रता को निश्चित रुझान और विशेष प्रकार की चेतना के विकास द्वारा बढ़ाया जा सकता है. प्रत्येक व्यक्ति के भीतर क्रोध तथा कुशलता के हारमोन पाये जाते हैं. इसी प्रकार निश्चित न्यूरो ट्रांसमीटर भी होते हैं जो हमारे रक्त में उस समय पहुँचते हैं जब हम कुछ खास प्रकार की एकाग्रता का विकास करते हैं. योग में इस प्रकार की समस्याओं के निराकरण के लिए कुछ प्रमुख उपाय इस प्रकार हैं -

(1) मंत्र-

एकाग्रता के विकास में मंत्रोच्चारण की भूमिका महत्वपूर्ण स्थान रखती है. मंत्र का प्रभाव बच्चे के अवचेतन व अचेतन तलों पर तत्काल पड़ता है. जब हम मंत्र का अभ्यास नहीं कर रहे होते हैं, मन उत्प्रेरणा और मनोरंजन की खोज में एक से दूसरे बिंदू पर तीसरे से चौथे पर भटकता रहता है इस प्रकार मानसिक शक्तियाँ व क्षमताएँ बिखरी हुई अवस्था में रहती हैं. मंत्र का जाप इस बिखराव को रोकता है. बिखराव के समाप्त होते ही एकाग्रता की स्थिति प्राप्त होती है. इससे इन्द्रियों में अनुभव करने एवं ग्रहण करने की क्षमता बढ़ती है. मंत्र-जाप से मस्तिष्क के तनाव भी दूर होते हैं.

(2) योगनिद्रा -

एकाग्रता के विकास में योगनिद्रा का अभ्यास मील का पत्थर साबित हो रहा है. यह यौगिक शिक्षा की एक सूक्ष्म किन्तु महत्वपूर्ण प्रणाली है. योगनिद्रा

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

के दो पक्ष होते हैं- पहला, चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों पर तेजी से घुमाना, इसे अंगन्यास कहते हैं तथा दूसरा रचनात्मक मनोदर्शन, इससे वास्तविक तथा गहरी निद्रा की प्राप्ति होती है। योग निद्रा के द्वारा मन की गहराई में छिपी मनोवैज्ञानिक कुण्ठाओं, क्षोभ, अवरोध इत्यादि का निराकरण होता है। यह मनोचिकित्सा की उन्नत तकनीक है, इससे आत्मचेतना को जाग्रत किया जाता है। इससे मन की शक्तियों का विकास होता है तथा बच्चे के अचेतन मन में छिपे तनाव और दबाव दूर होते हैं और उसे एक नया आत्मविश्वास और मनचाहा संकल्प प्राप्त होता है।

योगनिद्रा शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोत्तम साधन सिद्ध हुई है। संसार के अनेक भागों में इसके परीक्षण द्वारा आशातीत परिणाम प्राप्त हुए हैं। योगनिद्रा द्वारा ग्रहणशीलता तथा स्मरण शक्ति में आश्चर्यजनक रूप से प्रगति होती है। बाह्य ज्ञान प्राप्त करने, उसे स्मरण रखने तथा आन्तरिक ज्ञान को जाग्रत करने के लिए यह एक महत्वपूर्ण विधि है इससे बुद्धि कुशाग्र होती है। आधुनिक तनावपूर्ण जगत के लिए यह वरदान साबित हो रही है। इसीलिए अब इसे समस्त उन्नत एवं विकासशील देशों में शिक्षा की एक महत्वपूर्ण तकनीक के रूप में ग्रहण किया जा रहा है।

(3) अन्तर्मौन -

एकाग्रता के विकास में अन्तर्मौन योग की एक अन्य तकनीक है। मन को शांत और ग्रहणशील बनाने में इस तकनीक का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। इस अभ्यास में अभ्यासी को समस्त बाहरी अनुभवों के प्रति सजग होने को कहा जाता है। इसमें बच्चों से कहा जाता है कि सुनो पक्षी कैसे चहक रहे हैं, सड़क पर बस जा रही है, वह किस दिशा में जा रही है इत्यादि। इस विधि से आसानी से एकाग्रता की प्राप्ति होती है और एकाग्रता स्मरण-शक्ति को बढ़ाने में सहायक है। इस विधि से पुराने संस्कारों से निवृत्ति मिलती है और नये संस्कारों का बीजारोपण होता है।

आ. स्थूलता-

आज की आम समस्या है स्थूलता। अभी हाल ही में हुए सर्वेक्षण का निष्कर्ष यह है कि हमारे देश में हर छठवां बच्चा मोटापे का शिकार है। मोटापा

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

जहां खुद एक गंभीर समस्या है, वहीं अनेक समस्याओं की जड़ भी है। इसके अनेक कारण हैं। आज के इस प्रतिस्पर्धी जीवन में बच्चों के पास समय का अभाव है जिसके कारण बच्चे खेल नहीं पाते हैं। पढ़ाई के कारण अधिकतम समय बच्चा बैठ कर व्यतीत करता है। बचे समय में वह टेलीविजन, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि पर बैठता है जिससे शारीरिक शक्ति का क्षय कम होता है। टेलीविजन के सामने बैठकर खाने की आदत ने भी मोटापे को बढ़ाया है क्योंकि बच्चे का ध्यान खाने पर न होने के कारण वह खाता ही जाता है। इसके अतिरिक्त मोटापे के लिए कुछ मात्रा में वंशानुक्रम भी जिम्मेदार है।

उपचार-

सूर्य नमस्कार जब श्वास के तालमेल के साथ किया जाता है तो समस्त मांसपेशियों, जोड़ों, शरीर के अंतरंग अवयवों पर इसका लाभकारी प्रभाव पड़ता है। इसी कारण सूर्य नमस्कार की गिनती अत्यंत लाभदायक आसनों में की जाती है। आधुनिक युग में इसे हम यौगिक टॉनिक कह सकते हैं। यह मोटापे की समस्या को जड़ से समाप्त कर देता है। इसकी 12 स्थितियां होती हैं। स्थिति एक और बारह शरीर में एकाग्रता, शांति और चेतना को बढ़ाती हैं। स्थिति दो और ग्यारह में पेट और आंतों की पेशियों को पूरी तरह ताना जाता है तथा भुजाओं और रीढ़ को पुष्ट किया जाता है। स्थिति तीन और दस पेट की बीमारियों को रोकती तथा ठीक करती है। कूल्हों तथा पेट की अतिरिक्त चरबी घटाती है, पाचन सुधरती है, कोष्ठबद्धता दूर करती है तथा मेरुदंड लचीला करती है।

स्थिति चार और नौ पेट की मांसपेशियों को पुष्ट करती हैं और जांघों की मांसपेशियां को मजबूत बनाती हैं, मेरुदंड को व्यायाम देती है तथा उसकी तंत्रिकाओं को शुद्ध रक्त की आपूर्ति करती है।

स्थिति पांच और आठ भुजाओं और टांगों की मांसपेशियों को मजबूत करती, मेरुदंड का व्यायाम कर उसे पर्याप्त शुद्ध रक्त पहुंचाती तथा लचीला रखती है। स्थिति छः और सात कंधों और भुजाओं की मांसपेशियों को शक्ति देती तथा छाती को विकसित करती है। सातवीं स्थिति में पेट भीतर की ओर खींचा जाता है इससे पेट के अवयवों में रुका हुआ रक्त निचुड़ता है और उसकी जगह शुद्ध नये रक्त की आपूर्ति होती है। पीठ को धनुषाकार स्थिति में

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

लाने से मेरुदंड तथा पीठ की मांसपेशियों का व्यायाम होता है। बहुत से अंतःस्रावों को भी यह संतुलित करता है।

इस प्रकार अकेले सूर्यनमस्कार का नियमित अभ्यास ही बच्चों को मोटापे की इस समस्या से छुटकारा दिला सकता है।

इसके अतिरिक्त पवन मुक्तासन, धनुरासन, शलभासन, पश्चिमोत्तासन, जानुशिरासन इत्यादि का अभ्यास भी मोटापे को कम करने के लिए कारगर सिद्ध होते हैं।

इ. भूख न लगना -

आज के बच्चों की एक आम समस्या है भूख न लगना। अक्सर माता-पिता यह कहते पाये जाते हैं कि हमारे बच्चे को भूख ही नहीं लगती। इसका सबसे मुख्य कारण है बच्चों की शारीरिक गतियों का कम होना। आज की शिक्षा में जहां बच्चों पर पढ़ाई का बोझ अत्यधिक है, वहीं पढ़ाई के लिए अधिक समय देना उनकी मजबूरी है, जिसका परिणाम है कि उसके पास खेलने के लिए समय की अत्यंत कमी हो जाती है, साथ ही टेलीविजन के कार्यक्रमों ने बच्चों को आकृष्ट किया है जिसके सामने, खेलना बच्चों की दूसरी प्राथमिकता बन गई है।

दूसरा मुख्य कारण है आर्थिक सम्पन्नता ने भोज्य पदार्थों के अनेक विकल्प सामने रख दिये हैं जिसके कारण बच्चों की पसंद का भोजन होने पर ही वे खाना खाते हैं अन्यथा नहीं। रासायनिक पदार्थों के प्रयोगों के कारण भोजन की पौष्टिकता भी कम हो गई है। साथ ही अनियमित दिनचर्या भी इस समस्या का एक प्रमुख कारण है यथा देर से सोना, देर से उठना, पेट साफ न होना, जिससे पाचन गड़बड़ाता है और भूख न लगने की समस्या उत्पन्न होती है।

उपचार -

इस समस्या का मुख्य उपचार है बच्चे को उसका बचपन लौटा दें। उसे उन्मुक्त रूप से खेलने दें। उसे अधिक से अधिक खेलने, दौड़ने, साइकिल चलानों, रस्सी कूदनों, तैरने आदि के लिए प्रेरित करना। उपर्युक्त क्रियाओं से

बच्चों के शरीर में रक्त संचार तेज होगा, सभी ग्रंथियों के स्राव आवश्यक मात्रा में निकलेंगे जिससे पाचन सही ढंग से होने पर भूख भी अच्छी लगेगी।

इस समस्या के निदान में सूर्यनमस्कार, भुजंगासन, शलभासन, व्याघ्रासन, धनुरासन इत्यादि का अभ्यास भी आशाजनक सफलता देता है।

ई. अनियंत्रित संवेग -

आजकल के बच्चों में धैर्य की अत्यंत कमी है। इसलिए शीघ्र ही छोटी-छोटी बातों पर उन्हें क्रोध आ जाता है, वे अधीर हो उठते हैं या फिर अत्यधिक भयभीत रहते हैं।

इसका कारण है आज बच्चे समय के हाथों की कठपुतली बन कर रह गये हैं उनमें वर्तमान दशा के प्रति घोर असंतोष है वे स्वेच्छा से जो करना चाहते हैं उसकी जगह उन्हें हर कार्य मजबूरी में करना पड़ता है। आज के बच्चों का कोई निश्चित लक्ष्य भी नहीं है। वे स्वयं को परिस्थितियों का मारा हुआ अनुभव करते हैं। अनिश्चितता ने उन्हें बेचैन कर रखा है। हर क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए उन्हें कदम-कदम पर अत्यधिक निराशा, कुण्ठा, असफलता का भय घेरे रहता है जिसके कारण वे अत्यधिक चिन्ताग्रस्त पाये जाते हैं।

ऐसी परिस्थितियों में संवेगों का विस्फोट स्वाभाविक ही कहा जा सकता है। आवश्यकता है एक ऐसे मल्हम की जो उन्हें आन्तरिक शांति प्रदान करे।

उपचार -

इस विकट समस्या का समाधान है योग। प्राणायाम और मुद्राओं के अभ्यास से मस्तिष्क के उत्तेजित केन्द्र शांत होते हैं। नलिकाविहीन ग्रंथियों के स्राव पुनर्व्यवस्थित होते हैं। इन अभ्यासों से स्वभाव में स्थिरता आती है, गंभीरता आती है। चरित्र और गंभीरता, आंतरिक पवित्रता की अभिव्यक्ति कही जाती है। प्राणायाम के दैनिक अभ्यास से बेचैन मन को शांति मिलती है, योगाभ्यास तंत्रिकाओं, ग्रंथियों तथा शरीर की अन्य कार्य प्रणालियों को उत्प्रेरित करता है, इससे त्रुटियुक्त व्यवहार सुधरता है। आसन व



...
...
...

...
...
...

- ...

...
...
...

...
...
...
...
...
...
...
...
...
...
...

...
...
...

- ...

...
...
...
...
...
...
...
...
...
...
...

प्राणायाम मनुष्य को शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य देते हैं जो पूर्ण रूप से चिरस्थायी आनन्द को प्राप्त करने का आधार हो सकता है।

आनन्द प्राप्ति ही मनुष्य के जीवन का वास्तविक लक्ष्य है। सीखने, समझने, आगे बढ़ने की आकांक्षा, कुछ उपलब्धियां प्राप्त करने की इच्छा प्रत्येक बच्चे के मन में होती है। अब यदि यह इच्छा तनावों के नीचे दबी हो, हम उस पर ध्यान न दें तो बच्चा किसी भी कार्य में मन को एकाग्र नहीं कर सकेगा। नियमित योगाभ्यास से बच्चों को इन कठिनाइयों से बाहर निकाला जा सकता है।

लंबे समय तक एक प्रकार के कार्य को यांत्रिक ढंग से करते रहने से बच्चे उब जाते हैं, वे सुस्ती का अनुभव करते हैं। बच्चों को बदलाव और मनोरंजन चाहिए। इस बदलाव के लिए योग एक अहम् भूमिका निभा सकता है क्योंकि उसके पास शिक्षण व्यवस्था की इन त्रुटियों का निदान है। योग विज्ञान हमें यह बताता है कि शरीर के साथ ही साथ मन व मस्तिष्क को भी संस्कारित करना चाहिए क्योंकि मस्तिष्क मात्र बुद्धि का सूक्ष्म उपकरण नहीं है, वह भौतिक शरीर का एक ठोस अंग होता है उसे हर क्षण आक्सीजन युक्त ताजे रक्त से सींचते रहना अत्यंत आवश्यक है। यह एक विज्ञान सम्मत तथ्य है कि शरीर के किसी अन्य अंग की अपेक्षा मस्तिष्क को आक्सीजन की कहीं अधिक आवश्यकता होती है।

नाड़ी शोधन प्राणायाम के द्वारा सहज ही हम आक्सीजन के रूप में शरीर को अधिक शक्ति प्रदान कर सकते हैं जिससे मन शांत और प्रसन्न रहता है। इडा व पिंगला नाड़ियों में प्राण का प्रवाह समान होता है तथा रक्त के विषाक्त तत्व अलग होते हैं। भ्रामरी प्राणायाम की क्रोध के परिणामस्वरूप उत्पन्न मानसिक तनाव को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका है। स्नायुविक तनाव, दुश्चिंतार्ये मानसिक उद्वेलन भी इस प्राणायाम से दूर होते हैं।

क्रोध को दूर करने के लिए शशांक आसन रामबाण की तरह है। शांभवी मुद्रा व योगनिद्रा, शवासन इत्यादि सांवेगिक उथल-पुथल को दूर करने में अत्यंत सहायक हैं।

4.4 योग का चिकित्सात्मक रूप -

1। बाल अपराध-

कोई भी बच्चा बचपन से अपराधी नहीं होता. असामान्य परिस्थितियां अपराध की ओर ढकेलती हैं. अनेक अध्ययनों का यह निष्कर्ष है कि माता-पिता के स्नेह से वंचित बच्चे सर्वप्रथम अपराध की राह पकड़ते हैं. माता-पिता के उपेक्षापूर्ण व्यवहार का बालमन पर अत्यन्त बुरा प्रभाव पड़ता है. उनके सामाजिक व्यवहार से यह झलकता है कि उनमें विवेक की कमी है, उन्हें प्यार की आवश्यकता है. बच्चों पर दबावपूर्वक थोपा गया अनुशासन व्यर्थ होता है.

बाल अपराधी बच्चों में सुधार व अनुशासन के लिए उसके आसपास के वातावरण में कुछ परिवर्तन किये जा सकते हैं. माता-पिता बच्चों में रुचि लेकर, उन्हें लाड़-प्यार देकर व समुचित देखभाल करके कुछ हद तक उन्हें सुधार सकते हैं.

हम बच्चों को यौगिक तकनीकों द्वारा बहुत कुछ सिखाकर उनकी व्यक्तिगत उलझनों को दूर कर सकते हैं. अनेक अपराधी बच्चों में क्रोध और आक्रामकता की भावना अधिक बलवती होती है, उन्हें हम कर्मयोग में लगाये रखकर उनकी शक्ति को रचनात्मक दिशा की ओर मोड़ सकते हैं. इन बच्चों को शशांक आसन सिखाकर लाभान्वित किया जा सकता है. इस आसन से एड्रिनलीन नामक हारमोन का स्राव नियंत्रित होता है. इस हारमोन का अधिक स्राव गुस्से का कारण होता है.

नाड़ी शोधन प्राणायाम व योगनिद्रा उन्हें शारीरिक व भावनात्मक विश्राम प्रदान करती हैं जिससे प्राण और मनः शक्ति के बीच स्वस्थ संतुलन स्थापित होता है. नाड़ी शोधन प्राणायाम तंत्रिका तंत्र में संतुलन लाता है जिससे बच्चे का मन शांत रहता है.

जो बच्चे भावनात्मक रूप से उद्वेलित होते हैं तथा जिन्हें खाली बैठना अच्छा नहीं लगता, यदि उन्हें शिथिलीकरण का क्रमिक अभ्यास कराया जाय

तो अनुकूल परिणाम प्राप्त होते हैं। शवासन के लिए लिटाकर उन्हें उन्हीं के शरीर के विभिन्न अंगों का मनोदर्शन कराया जाय, कुछ वस्तुओं का स्मरण कराकर मानस पटल पर उनकी आकृति उभारी जाय तो हम उसे गहरी विश्राम की अवस्था में पहुंचा सकते हैं।

2. विकलांगता -

(अ) शारीरिक विकलांगता -

शारीरिक रूप से विकलांगों के लिए योग अत्यंत लाभकारी है क्योंकि योग व्यक्ति के शारीरिक, भौतिक व आध्यात्मिक तीनों पक्षों को प्रभावित करता है। यौगिक तकनीकों का अभ्यास मुख्य रूप से योगाभ्यासी की विकलांगता के स्वरूप पर निर्भर करता है। यदि शरीर का कोई अंग पूरी तरह बेकार और विकृत हो गया हो तो सर्वप्रथम यह जरूरी है कि उसका डाक्टरों इलाज हो। यदि यह संभव न हो तो बच्चों की इस तरह से मदद की जाय कि उक्त विकृत अंग सामान्य ढंग से हरकत करने लगे। सामान्यतः आसन-प्राणायाम के अभ्यास से ऐसे अंगों में अवरुद्ध रक्त प्रवाह पुनः सुचारु हो जाता है। तंत्रिकाओं में सुचारु रक्त प्रवाह से शरीर के अंगों तथा मांसपेशियों की कार्यक्षमता बढ़ती है और उन पर पुनः चेतन नियंत्रण प्राप्त होता है।

पोलियो एक जटिल व्याधि मानी जाती है परन्तु यह भी नियमित किन्तु दीर्घकालीन योगाभ्यास से दूर किया जा सकता है। पोलियो ग्रस्त व्यक्ति को उसके विश्वास, निष्ठा तथा नियमितता के अनुपात में ही परिणाम प्राप्त होते हैं। यह बीमारी की तीव्रता पर निर्भर करता है, साथ ही व्यक्ति के लगन का भी इस चिकित्सा में महत्वपूर्ण योगदान होता है।

उदाहरण के लिए श्रीमती इव्हारिच पाल बचपन से ही पोलियो ग्रस्त थीं। उन्होंने योग को चिकित्सा के रूप में अपनाया। आज वह समूचे यूरोप में विख्यात हैं। वह कहती हैं कि कुछ आसनों को बार-बार कई दिनों तक दुहराने से वह अच्छी ही नहीं हुई बल्कि उन आसनों के साथ बरती गई पूर्ण सजगता ही उनके स्वस्थ होने का प्रमुख कारण बनीं। उनके अनुसार आसनों की दस आवृत्तियों का प्रभाव उतना नहीं होता जितना पूरी चेतना के साथ की गई एक आवृत्ति से हो सकता है।

(आ) मानसिक विकलांगता -

मानसिक विकलांगता के लिए कीर्तन की बड़ी उपयोगिता है. नाम संकीर्तन वह युक्ति है जिसके द्वारा ध्वनि पर मन एकाग्र होता है तथा श्रवण शक्ति विकसित होती है. चूंकि कीर्तन का महत्व हृदय की भावनाओं तथा व्यक्तिगत अभिव्यक्ति से होता है, भले ही गाने वाला कुशल न हो, विकलांग बच्चों के लिए उसका बड़ा महत्व है. विशेष रूप से चिकित्सा की दृष्टि से तो उसे वरदान ही माना जाता है.

यदि कोई बच्चा शरीर से अपंग हो तो उसका प्रभाव उसके मन पर भी पड़ता है योग ऐसे बच्चों की मानसिक क्षमता को पूरी तरह विकसित करने में बड़ा सहायक हो सकता है. यह देखा जाता है कि अनेक विकलांग बच्चे बड़े होशियार होते हैं, उनमें अधिकतम मानसिक विकास की क्षमता पाई जाती है. योग उन्हें अपनी समग्र संभावना को विकसित कर सृजनात्मक जीवन-यापन में सहायता करता है.

विकलांगों के लिए योग स्वमुक्ति की राह बताता है. इस प्रकार वे अनुभव करते हैं कि अपनी विकलांगता की सीमाओं के बावजूद वे बहुत कुछ हासिल कर सकते हैं.

आज के तकनीकी युग में चिकित्सा विज्ञान ने अकल्पनीय ऊंचाइयों को छुआ है इसकी उपयोगिता भी बढ़ी है इसलिए यह आवश्यक है योग और चिकित्सा के बीच सामंजस्य स्थापित किया जाय. इससे विकलांग अधिक लाभान्वित हो सकेंगे.

इ.बाल मधुमेह -

मधुमेह के प्रमुख कारण हैं - भागदौड़ वाला शहरी जीवन, रासायनिक, द्रव्यों की सहायता से तैयार डिब्बा बंद भोजन, प्रसार माध्यमों की भरमार से शारीरिक श्रम कम करना, यकृत और क्लोम ग्रंथि कमजोर होना, माताओं द्वारा गर्भावस्था में अत्यधिक दवाओं का सेवन, प्रदूषित हवा, पानी तथा बच्चों को अधिक मांस, मछली, अंडा, दूध के रूप में जरूरत से अधिक प्रोटीन, शर्करा

आदि देना जो उनके पाचन संस्थान पर अधिक भार डालते हैं जिसके परिणाम स्वरूप समय से पूर्व ही उनकी कार्यक्षमता का समाप्त होना, माताओं का बच्चों को स्तनपान न कराना इत्यादि. इन कारणों से अब बच्चे भी मधुमेह के शिकार होते देखे जा रहे हैं.

अधिक उम्र में होने वाले मधुमेह को आहार संयम द्वारा नियंत्रण में रखा जा सकता है किन्तु मधुमेह का आज का रूप कहीं अधिक खतरनाक है और वह कठिनाई से वश में आने वाला है.

बाल मधुमेह पर योग का सार्थक प्रभाव पड़ता है. षट्कर्म, प्राणायाम व योगनिद्रा के अभ्यास से आशातीत सुधार होता है. रक्त शर्करा को मान्य स्तर तक लाने तथा क्लोम ग्रंथि को पुनः सक्रिय करने में धैर्य व लगनपूर्वक योग चिकित्सा की आवश्यकता होती है. षट्कर्म के प्रयोग से पाचन संस्थान प्रेरित होता है, उसकी कमियां दूर होती हैं तथा ग्रंथियों से पाचक द्रव्यों का समुचित स्राव होता है किन्तु इसके साथ ही साथ आहार संयम भी आवश्यक है. बच्चों को अत्यधिक मात्रों में शर्करा व श्वेतसार युक्त भोजन नहीं देना चाहिए.

ई.मनोव्याधि ग्रस्त बच्चे -

जीवन के प्रारंभिक वर्ष वयस्क अवस्था की बुनियाद कहे जाते हैं. भावनात्मक रूप से अशांत बच्चे सनकी वयस्क होते हैं. अनेक शारीरिक, सांस्कृतिक, सामाजिक कारणों से बच्चे भावनात्मक व्याधियों से पीड़ित होते हैं. योग असामान्य भावनात्मक विकास के निराकरण के लिए व्यावहारिक उपचार की व्यवस्था प्रदान करता है ताकि बच्चा व्यक्तित्व की त्रुटियों से मुक्त वयस्क अवस्था में पहुंचे.

हमें इस बात का ख्याल रखना होगा कि पाठशालायें केवल सूचनाओं के कारखाने न हों. उन्हें रचनात्मक शिक्षण में भागीदार बनाया जाय. रचनात्मक शिक्षा में बच्चे जिज्ञासापूर्वक पूछताछ करते हैं, इस शिक्षा से ऊबते नहीं, निराश नहीं होते और उन पर किसी तरह का दबाव नहीं पड़ता. यदि बच्चों को प्रेरक और उनकी क्षमता को चुनौती देने वाले कार्यों में लगाया जाय तो उनके ऊबने और थकने का प्रश्न ही नहीं उठता.

फिर भी कुछ बच्चों में मानसिक और मनोवैज्ञानिक व्याधियां प्रगट होती हैं, इसलिए हम पाठशाला के पर्यावरण को अनदेखा नहीं कर सकते. क्योंकि वहां निर्धारित स्तर तक पहुंचने के लिए बच्चों पर एक प्रकार का दबाव डाला जाता है. असाधारण प्रतिभा सम्पन्न बच्चा कई वर्षों तक पाठशाला के उबाऊ पाठों का बोझ और दबाव झेलने के लिए मजबूर होता है, वहां उसे रचनात्मक अभिव्यक्ति का कोई अवसर नहीं मिलता इसलिए वह या तो कल्पनालोक में उड़ने लगता है अथवा असामान्य व्यवहार करता है.

बच्चों में मनोव्याधियों का कारण समय से पहले यौन परिपक्वता होती है तथा उनका तंत्रिका तंत्र और हार्मोनो का स्राव असंतुलित रहता है. इस व्याधि का संबंध माता-पिता से भी होता है जो बच्चों की उपेक्षा करते हैं. इसका संबंध पारिवारिक दबाव व जीर्ण शारीरिक व्याधियों से भी होता है. व्याधिग्रस्त बच्चों की चिंता, परेशानी और अपराध-बोध को कम करना आवश्यक है जिससे बच्चों के व्यक्तित्व का सामान्य ढंग से विकास जारी रहे.

शिथिलीकरण के अभ्यास जैसे शवासन, योगनिद्रा आदि सिखाकर हम उनके अचेतन मन में छिपे तनाव और दबाव दूर कर सकते हैं. बच्चे अपनी चिकित्सा के लिए एक विश्वसनीय वयस्क व्यक्ति को पसंद करते हैं जिनके सान्निध्य में वह स्वयं को सुरक्षित समझे और अपनी परेशानियां उसे बता सके.

योगाभ्यास एक ऐसी व्यवस्था है जो हर व्यक्ति पर लागू होती है भले ही उसकी समझ तथा अभिरुचि का स्तर चाहे जैसा भी हो. परन्तु यह एकदम सत्य है कि यदि नियमित योगाभ्यास किया जाय तो विकास की संभावनाएं बहुत बढ़ जाती हैं. बिना किसी भेदभाव के योगाभ्यास में भाग लेकर मानसिक रूप से अक्षम विद्यार्थी भी आसन, प्राणायाम, कीर्तन तथा कर्म योग में सम्मिलित होकर पूरा लाभ प्राप्त कर सकते हैं.

4.5 यौगिक निदान एवं चिकित्सा विज्ञान -

आज चिकित्सा विज्ञान अपनी उन्नति के चरम शिखर पर है किन्तु नित नये रोगों का जन्म सम्पूर्ण मानव जाति पर खतरे के रूप में मंडरा रहा है. इनके कारणों की व्याख्या के लिए आधुनिक चिकित्सा प्रणालियां भी अनुत्तरित

हैं। ऐसी परिस्थिति में हमारे मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या कारण है आधुनिक युग में चिकित्सा की आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गई है, सम्पूर्ण परिस्थितियों पर दृष्टिपात करने से यही बात सामने आयी कि दिनोदिन हम प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं। आधुनिक युग में हमारा जीवन पूर्णतः मशीनों पर निर्भर है। हमारा भोजन कृत्रिम रसायनों का मिश्रण रह गया है जो धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूप से हमारे स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव डाल रहे हैं।

शारीरिक आराम व इन्द्रिय सुख के लिए आज मनुष्य के पास अनेक सुविधायें हैं। आधुनिक जीवन के नकारात्मक प्रभावों पर काबू पाने के लिए मनुष्य शांति और विश्राम की खोज में नींद की गोलियां व अन्य दवाइयां लेता है किन्तु शांति, विश्राम व सुख के बजाय उसे अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक तनावों का सामना करना पड़ता है।

इन समस्त व्याधियों के भार से मुक्त होने का उपाय केवल यौगिक उपचार ही है। आरोग्य प्राप्ति और स्वास्थ्य रक्षा में योगासनों का अभ्यास एक महत्वपूर्ण घटक है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन स्थित होता है।

समत्व योग का और समस्त सृष्टि व्यवस्था का मूल आधार है। विषमता से ही विकारों की उत्पत्ति होती है। प्रत्येक व्यक्ति में सुख, शांति और सामंजस्य प्राप्त करने की लालसा रहती है। योग के द्वारा हम अपने व्यक्तित्व तथा अभिव्यक्ति में शांति और समत्व स्थापित कर सकते हैं। यह कार्य चिकित्सा-विज्ञान की दवाइयों से संभव नहीं है। यहां हम यौगिक विधियों से होने वाले कुछ प्रमुख लाभों पर प्रकाश डाल रहे हैं।

1. शारीरिक लाभ -

आसन का अभ्यास शरीर से जड़ता, आलस्य एवं चंचलता को दूर करके सम्पूर्ण स्नायु संस्थान एवं प्रत्येक अंग को पुष्ट बनाने के लिए होता है। इसके अभ्यास से शरीर के अंगों के सभी भागों एवं सूक्ष्मातिसूक्ष्म नाड़ियों में रक्त पहुंचता है। शरीर का स्वास्थ्य मस्तिष्क, मेरुदंड, स्नायुसंस्थान, हृदय फेफड़े तथा उदर के बलवान होने पर निर्भर है। आसनों से शरीर की सबसे महत्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रंथि प्रणाली नियंत्रित एवं सुव्यवस्थित होती है। परिणामतः

समस्त ग्रंथियों से उचित मात्रा में रस का स्राव होने लगता इसका प्रभाव हमारे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ जीवन के प्रति हमारे दृष्टिकोण पर भी पड़ता है. आसनों के द्वारा पीड़ित अंगों को पुनर्जीवित कर सामान्य कार्य के योग्य बनाया जा सकता है. आसन शरीर को लोचदार तथा परिवर्तित वातावरण के अनुकूल ढालने के योग्य भी बनाता है.

2. मानसिक लाभ -

आसनों के नियमित अभ्यास से मस्तिष्क शक्तिशाली एवं संतुलित बना रहता है. आसन मन को शक्तिशाली बनाते हैं एवं दुख दर्द सहन करने की शक्ति प्रदान करते हैं इससे दृढ़ता एवं एकाग्रता की शक्ति विकसित होती है. आसनों का अभ्यास व्यक्ति की सुप्त शक्तियों को जागृत करता है, उसमें आत्मविश्वास पैदा करता है.

3. आध्यात्मिक लाभ -

रोगों को दूर करने में ध्यान अथवा चिन्तन का महत्वपूर्ण स्थान है. ध्यान के उपयोगी पद्यासन आदि को सर्वरोग नाशक इसलिए कहा जाता है कि इन आसनों से ध्यान या जप में बैठने पर शरीर में साम्यभाव, निश्चलता, शांति आदि गुण आ जाते हैं जो भौतिक स्तर पर सत्वगुण की वृद्धि करने में सहायक होते हैं. ध्यान से शरीर प्राण, मन, हृदय एवं बुद्धि में शांति, पवित्रता एवं निर्मलता आती है. सदा प्राणी मात्र के कल्याण का विचार करने से एवं सभी सुखी हों, निरोग हों, शांत हों इस प्रकार की भावनाओं की तरंगों को सभी दिशाओं में प्रसारित करने से स्वयं को सुख एवं शांति की प्राप्ति होती है. प्रबल संकल्प शक्ति के द्वारा अपने या दूसरों के रोगों को भी दूर किया जा सकता है.

प्राणायाम का अभ्यास शरीरस्थ सभी दोषों का निराकरण कर प्राणमय एवं सूक्ष्म शरीर को निरोग एवं पुष्ट बनाता है. योग के आध्यात्मिक पक्ष को विकसित करने का केवल तरीका बताया जा सकता है, उपलब्धि नहीं. राजयोग, कुण्डलिनी योग, भक्तियोग आदि के अभ्यास के द्वारा हम अपनी अतीन्द्रिय शक्तियों को जागृत करते हुए एक ऐसी अवस्था को प्राप्त करते हैं जहां सीधा

सम्पर्क जुड़ता है ईश्वर से; इसे दूसरे शब्दों में आत्म साक्षात्कार भी कहा जाता है. इसे ही कुछ लोग आध्यात्मिक लाभ भी कहते हैं.

योग का प्रयोजन केवल रोग चिकित्सा नहीं है. योगाभ्यास द्वारा हम अपने शारीरिक अंगों व मानसिक संरचना को संतुलित कर लेते हैं. योग का प्रयोग एक ऐसा माध्यम है जो हमारी सजगता को बढ़ाता है ताकि हम अपनी सम्पूर्ण शारीरिक व मानसिक प्रक्रियाओं पर नियंत्रण प्राप्त कर सकें. योग का सार ही है शिथिलीकरण. सभी प्रकार की योग साधना, चाहे वह आसन हो, प्राणायाम हो अथवा ध्यान की क्रियायें हों, उनका अभिप्राय व्यक्ति को समस्त शारीरिक, मानसिक व भावात्मक तनावों से मुक्त कर प्रशान्ति और संतोष प्रदान करना है.

योग के क्षेत्र में विश्व स्तर पर अनेक वैज्ञानिक शोध हो चुके हैं; उनके परिणामों से हमें ज्ञात है कि यौगिक तकनीकों द्वारा हम किसी भी परिस्थिति या अवस्था में शिथिल होने की क्षमता विकसित कर सकते हैं. हम एकाग्र होने तथा अपनी बिखरी हुई ऊर्जा को एकत्रित करके उसे एक बिन्दु पर केन्द्रित करने की क्षमता भी विकसित कर सकते हैं. इस तरह मानसिक शक्ति और प्राणशक्ति का संयोजन मानव व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों को खोलने का एक अति शक्तिशाली उपकरण बन जाता है.

विश्व के सभी वैज्ञानिकों ने भी अब स्वीकार किया है कि भावनात्मक संतुलन, मानसिक शांति व स्वस्थ शरीर के लिए योग ही सर्वोत्तम प्रणाली है. यह प्रणाली प्राकृतिक शक्तियों के साथ मन व शरीर को सुचारु रूप से कार्य करने को प्रोत्साहित करती है. योग शरीर की प्रवृत्ति के साथ कार्य करता है, विरोध में नहीं. आसन मांशपेशियों की मालिश करते हैं व रक्त प्रवाह को सुचारु करते हैं. प्राणायाम चयापचय को कार्यरत रखता है साथ ही मस्तिष्क की कार्यविधि को शक्ति प्रदान करता है.

आज प्रत्येक समाज तनाव एवं परेशानियों से ग्रस्त है. व्यक्तिवादी दृष्टिकोण, भौतिक उपलब्धि एवं पद-प्रतिष्ठा के लिए अंधी दौड़, समय पर काम पूरा करने का दबाव आदि आधुनिक समय की कुछ महत्वपूर्ण स्थितियां हैं जो दबाव, तनाव, मनोकायिक एवं मनोवैज्ञानिक परेशानियां पैदा करती हैं. इनके निदान के लिए योग की एक और नवीनतम विधि है- भावातीत ध्यान.

4.6 भावातीत ध्यान -

भावातीत ध्यान की वैज्ञानिक तकनीक को परम पूज्य महर्षि महेश योगी जी ने 1957 में विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया था. भावातीत ध्यान एक सरल, स्वाभाविक और प्रयासहीन प्रक्रिया है जो पूर्णतः क्रमबद्ध और वैज्ञानिक शोधों द्वारा प्रमाणित है. भावातीत ध्यान की तकनीक उतनी ही प्राचीन है जितना कि ऋग्वेद है जो मानवीय अनुभवों का प्राचीनतम अभिलेख है. भावातीत का अर्थ है भावों के परे जाना. मन जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति की चेतना के परे भावातीत चेतना में (जो चेतना की चतुर्थ अवस्था है) पहुँचता है जहाँ हमारे मन का सीधा सम्पर्क विचारों के स्रोत से होता है और यही शुद्ध बुद्धि का क्षेत्र है. इस अवस्था में हमारा मन किसी विचार से परेशान नहीं होता और वह पूर्ण शांति और विश्राम के क्षेत्र में स्थापित हो जाता है.

भावातीत ध्यान के समय व्यक्ति एक ऐसी सीधी परन्तु शिथिल ध्यान-आसन की अवस्था में बैठा होता है जिसमें संबंधित व्यक्ति के मन (अथवा मस्तिष्क के चिन्तन संबंधी केन्द्रों) पर न तो किसी प्रकार का भार रहता है और न तनावशील नियंत्रण वस्तुतः यह ध्यान की ऐसी शारीरिक व मानसिक स्थिति होती है जिसमें व्यक्ति का तंत्रिका तंत्र शिथिल तथा एक प्रकार से निष्क्रिय ही बना रहता है परन्तु इस प्रक्रम में साधक प्रायः एक मंत्र का जाप अवश्य करता रहता है. इस अवस्था की विशेषता यह है कि इसमें हम मानसिक रूप से पूर्ण सजग और शारीरिक रूप से गहन विश्राम की अवस्था में रहते हैं. इसलिए इस अवस्था को विश्रामपूर्ण जागृति की संज्ञा दी गई है.

भावातीत ध्यान के सुबह व शाम के नियमित अभ्यास से तनाव ग्रस्त व्यक्ति कुछ ही दिनों में अपने मानसिक तनावों से मुक्त हो जाता है तथा चेतना की सजगता से एक नया जीवन प्राप्त करता है.

भावातीत ध्यान की स्थिति में व्यक्ति की विचार श्वास और नाड़ी की गति एकदम शिथिल पड़ जाती है. इस स्थिति में व्यक्ति में पसीने के आने का आधार भी कम हो जाता है, जो प्रायः शारीरिक दृष्टि से इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि व्यक्ति इस स्थिति में पूर्णतः विश्रामदायक व शान्तिदायक

मुद्रा में ही बना हुआ है. अतः ऐसी स्थिति के निरन्तर अभ्यास से व्यक्ति अपनी उत्तेजनशीलता, आक्रामकता विरोध, अवसाद व उन्माद आदि के भावों से कुछ ही समय में पूर्णतः मुक्त हो जाता है.

भावतीत ध्यान के प्रतिदिन 15-20 मिनिट प्रातः एवं संध्या अभ्यास करने से हम मानसिक रूप से उन्नत होते हैं. इस प्रक्रिया से मन का विकास होता है. इस पद्धति से होने वाले प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं -

(1) मानसिक लाभ-

1. शैक्षणिक योग्यता में सुधार
2. सीखने की क्षमता में वृद्धि
3. उत्पादकता में वृद्धि
4. कार्यक्षमता में वृद्धि
5. स्मरण-शक्ति में वृद्धि
6. भावनात्मक संतुलन बढ़ता है.
7. मानसिक चिड़चिड़ापन दूर होता है.
8. कार्य संतुष्टि में वृद्धि
9. आपसी संबंधों में सुधार
10. समस्या सुलझाने की गति में तेजी

(2) शारीरिक लाभ-

1. शारीरिक अनुकूलता में वृद्धि
2. सुन्दर स्वास्थ्य की आधारशिला का निर्माण
3. बीमारियों से लड़ने की क्षमता में वृद्धि
4. उद्वेगों में कमी
5. अनिद्रा से मुक्ति
6. सृजनात्मकता में वृद्धि

महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है। यह किताब किताबों में से है।
 यह किताब किताबों में से है। यह किताब किताबों में से है।

महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है। यह किताब किताबों में से है।
 यह किताब किताबों में से है। यह किताब किताबों में से है।

-महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है (१)

१. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
२. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
३. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
४. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
५. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
६. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
७. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
८. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
९. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
१०. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है

-महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है (२)

१. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
२. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
३. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
४. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
५. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
६. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
७. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
८. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
९. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है
१०. महर्षि जी के द्वारा लिखी गई है

7. नशीली दवाओं की लत धीरे-धीरे छूट जाती है.
8. मन व शरीर का सहसंबंध दूर होता है.
9. तनाव दूर होकर स्नायुमंडल की शुद्धि होती है.
10. हृदय व श्वास की गति और शारीरिक परिवर्तनशीलता में कमी हो जाती है जिससे रक्तचाप और हृदयरोगी को बहुत लाभ पहुँचता है।

भारत के उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायधीश श्री वी.आर. कृष्णअय्यर ने अपराधी अपील संख्या 1977 के 256 के न्याय के दौरान कहा था- अपराधी को, डॉक्टरों की देखरेख में भावातीत ध्यान की शिक्षा दी जाय जो उसके आचरण में मौलिक परिवर्तन लायेगा. फिर वे अपराध के संसार से हटकर एक कर्तव्यपरायण नागरिक का जीवन सहजता से जियेंगे.

वर्तमान समय में यह पद्धति न केवल भारतवर्ष में बल्कि विदेशों में भी अपनायी जा रही है. महर्षि महेश योगी द्वारा संचालित हजारों विद्यालयों में भी बालकों को इसका नियमित रूप से अभ्यास कराया जाता है.

भावातीत ध्यान संबंधी विश्व स्तर पर जो वैज्ञानिक प्रयोग किये गये हैं उससे संबंधित कुछ प्रमुख चार्टों को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है.

Levels of Rest

Change In Metabolic Rate

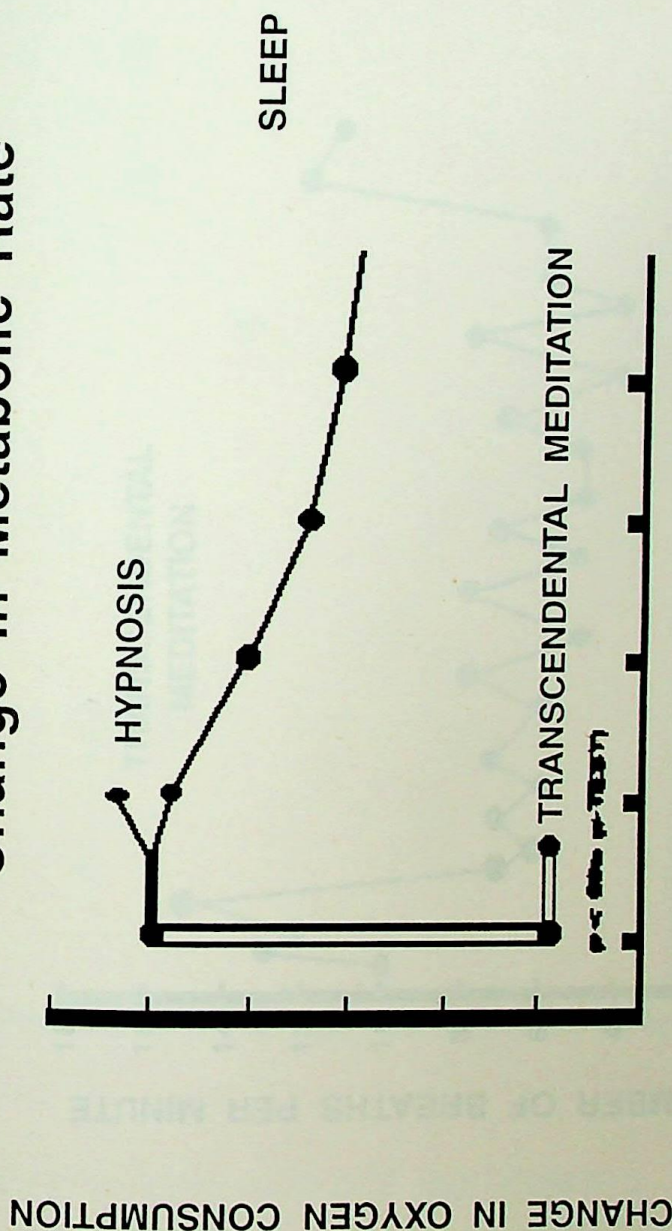
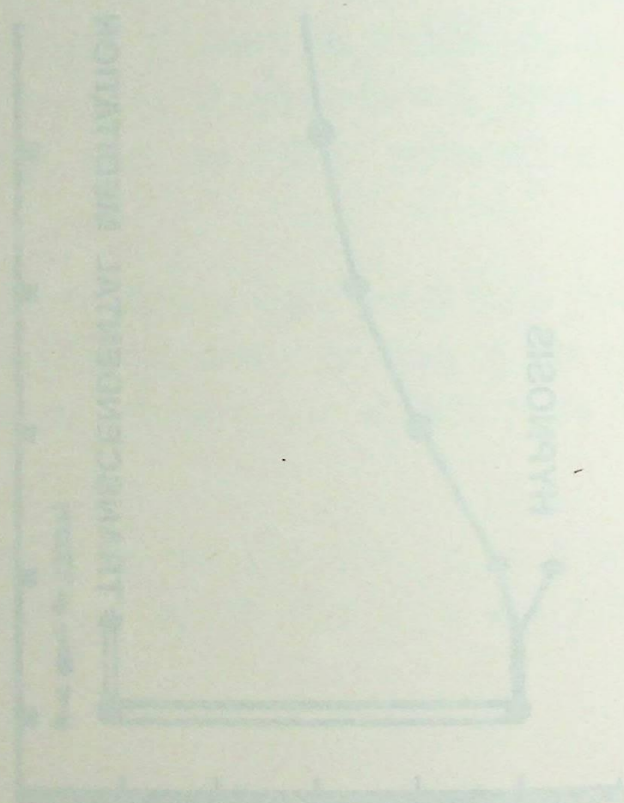


Chart- 1 - भावातीत ध्यान के दौरान ऑक्सीजन की खपत एवं चयापचय दर में स्पष्ट रूप से कमी आती है जो गहन आराम की अवस्था को दर्शाती है। अन्य अध्ययन से पता चलता है कि खून में ऑक्सीजन और कार्बन डायऑक्साइड का आंशिक दबाव स्थिर रहता है। इस तरह भावातीत ध्यान में आक्सीजन की खपत में कमी, सांस लेने में ऑक्सीजन और कार्बन डायऑक्साइड का आंशिक दबाव स्थिर रहता है। इस तरह भावातीत ध्यान आक्सीजन की खपत में कमी, सांस लेने में बदलाव या प्रयासपूर्ण ढंग से आक्सीजन न लेना नहीं है बल्कि यह प्राकृतिक रूप से शारीरिक परिवर्तन होता है। इसमें रक्त कोशिकाओं को आपूर्ति की कम आवश्यकता महसूस होती है।



CHANGE IN OXYGEN CONSUMPTION

Natural Change in Breath Rate

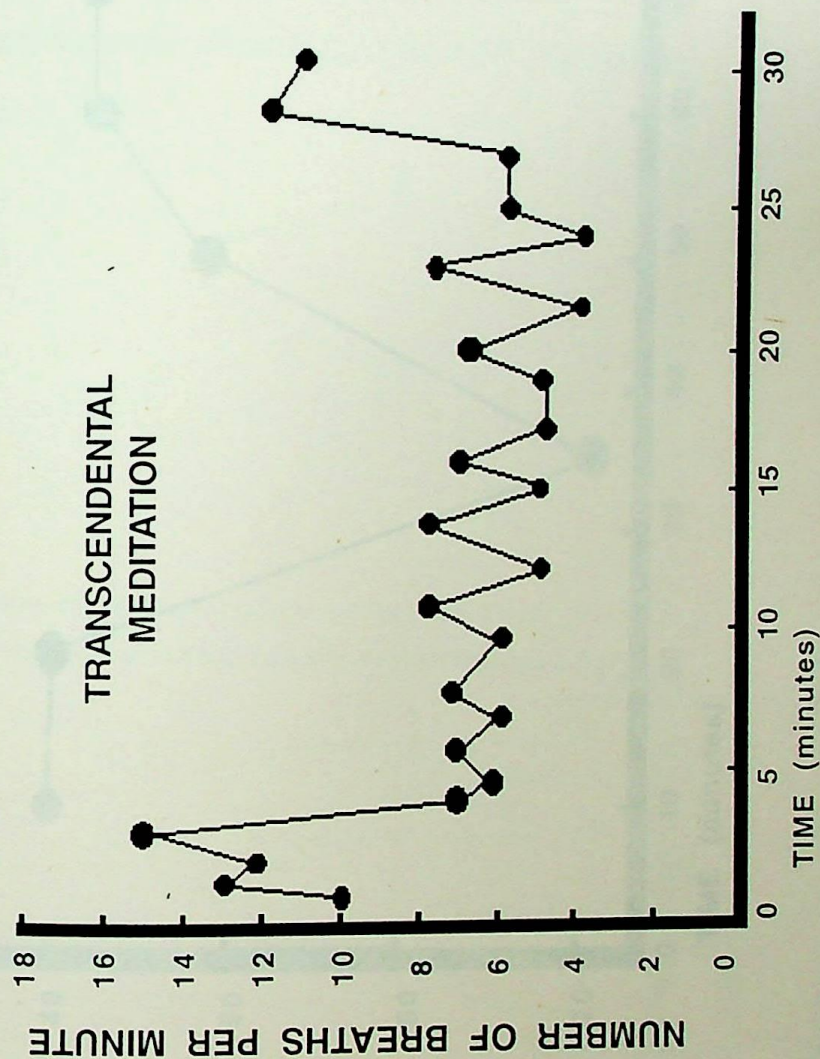
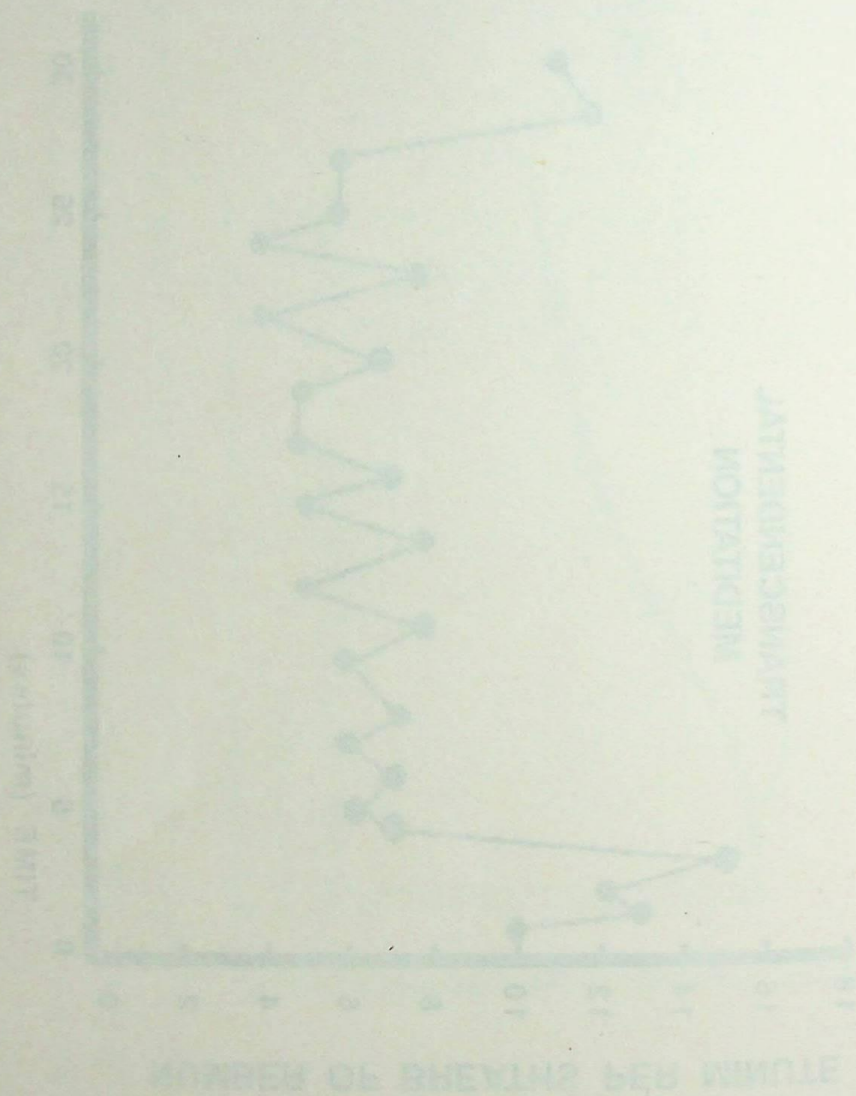


Chart- 2 - भावातीत ध्यान के दौरान, श्वास लेने की दर में काफी कमी आती है जो तंत्रिका तंत्र के तनावरहित एवं आरामदायक स्थिति को दर्शाती है.



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

Change in Cardiac Output

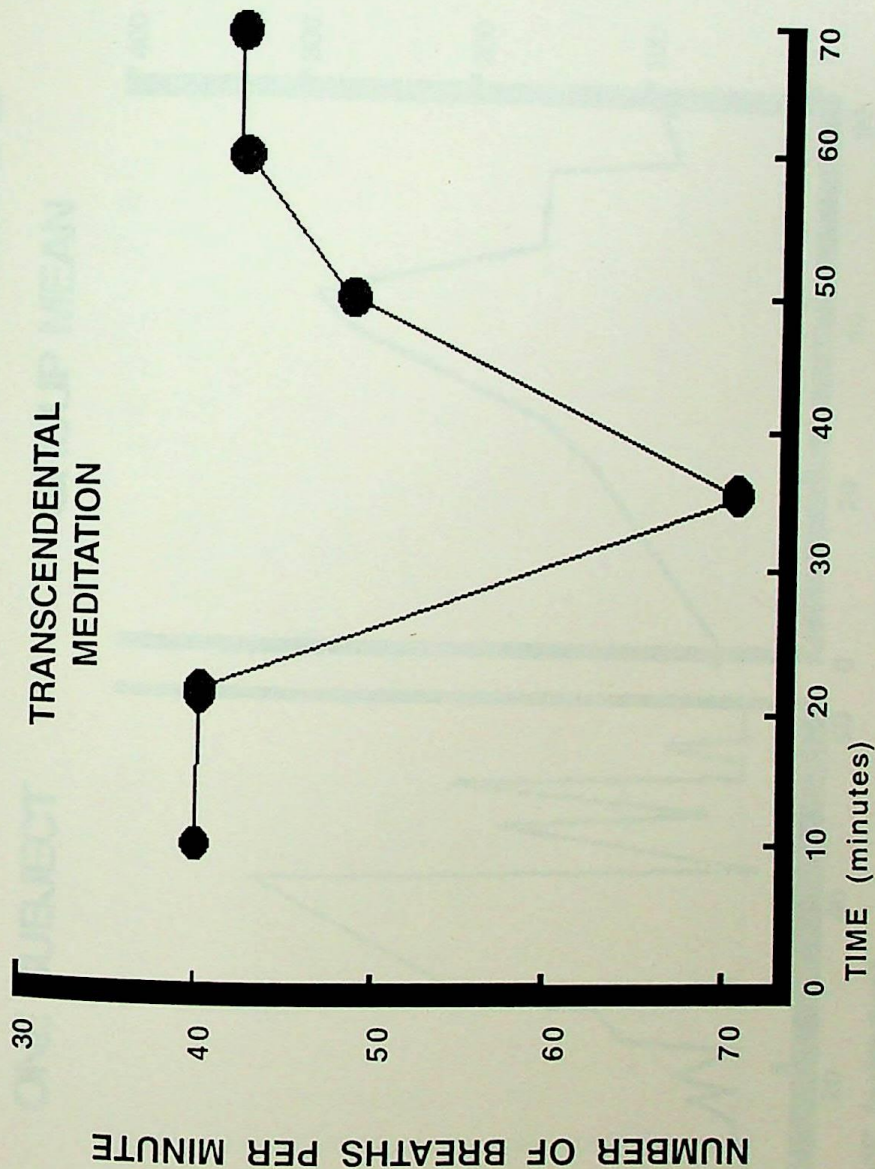
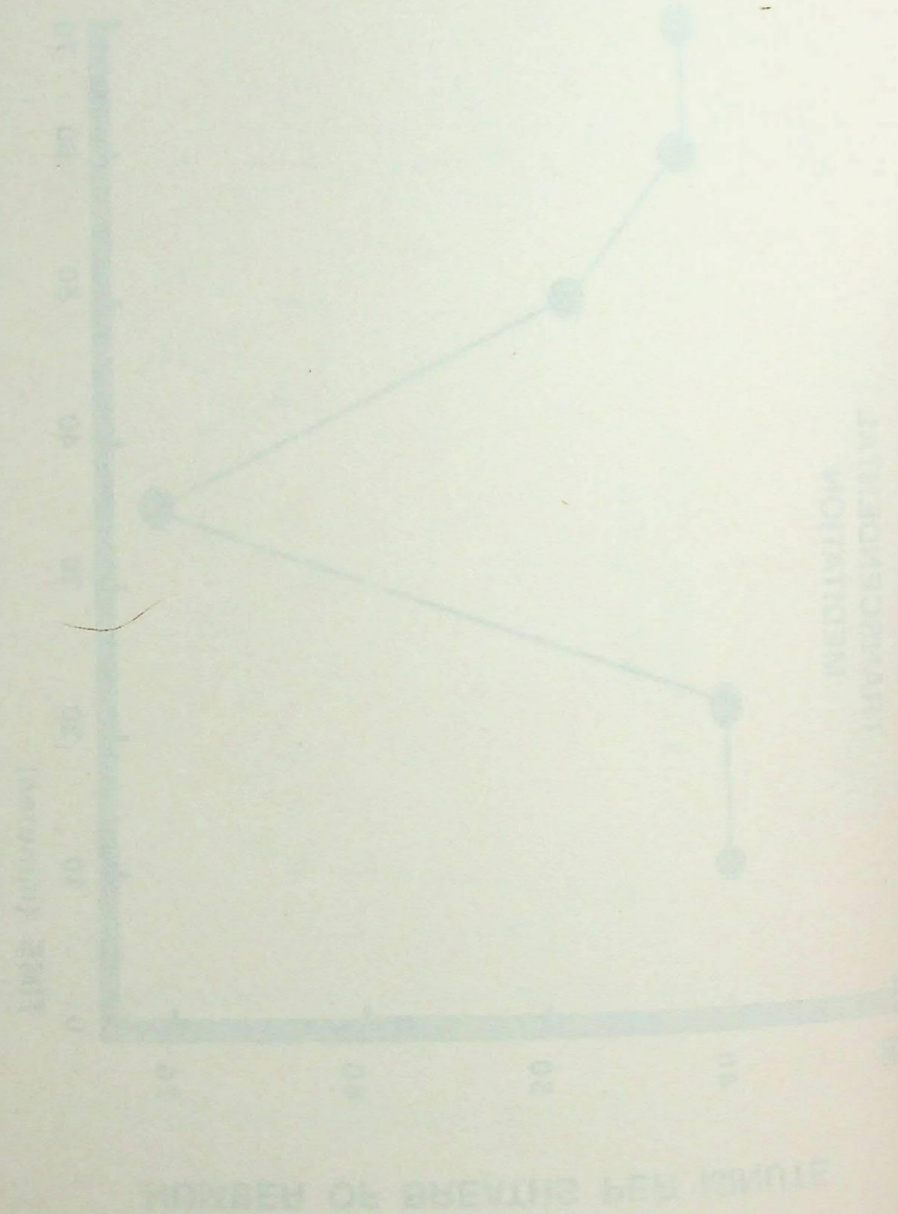


Chart- 3 - भावातीत ध्यान के दौरान हृदय की धड़कनों में कमी आती है जो हृदय के ऊपर पड़ने वाले कार्य भार में कमी का सूचक है.



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

Change in Skin Resistance

ONE SUBJECT

GROUP MEAN

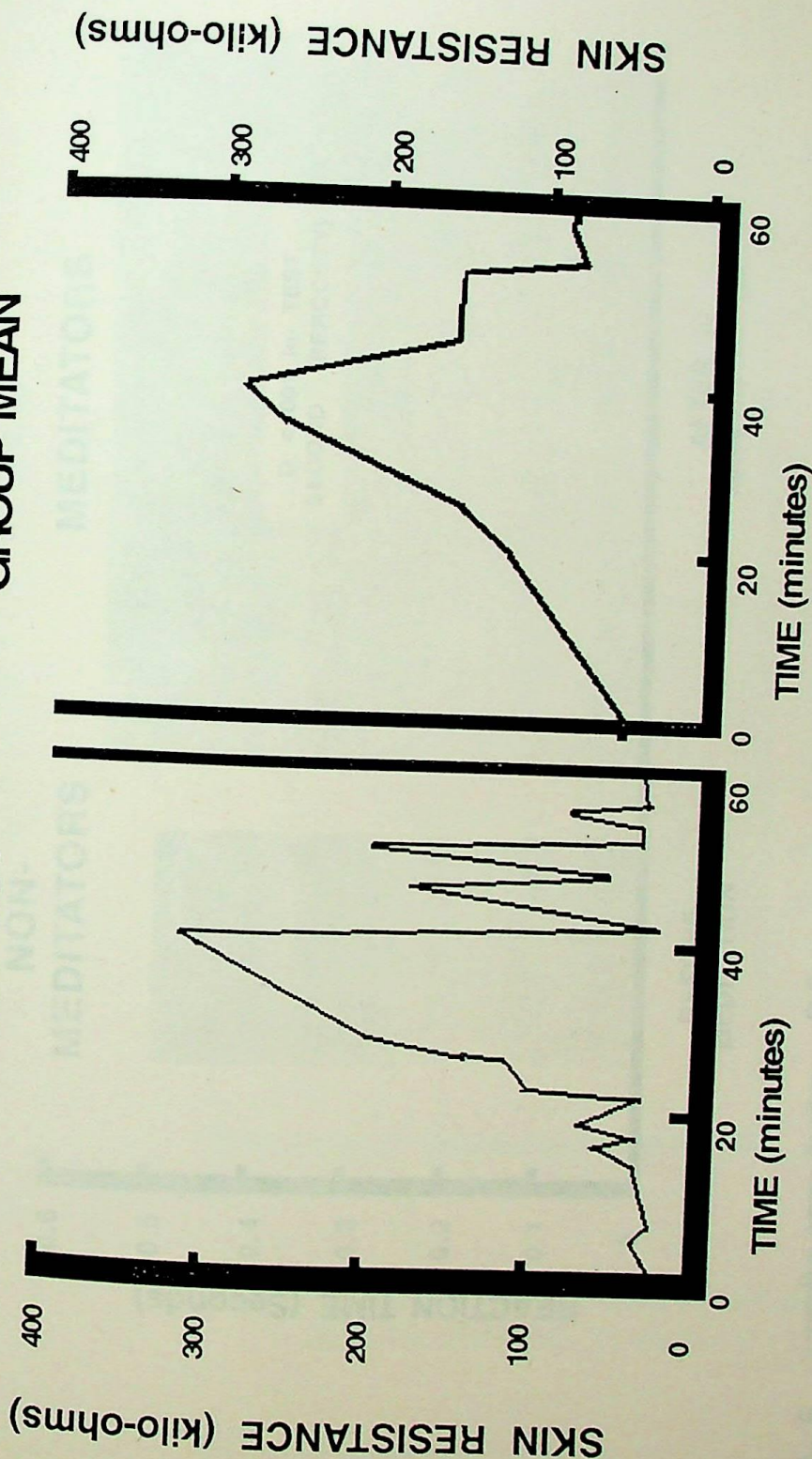
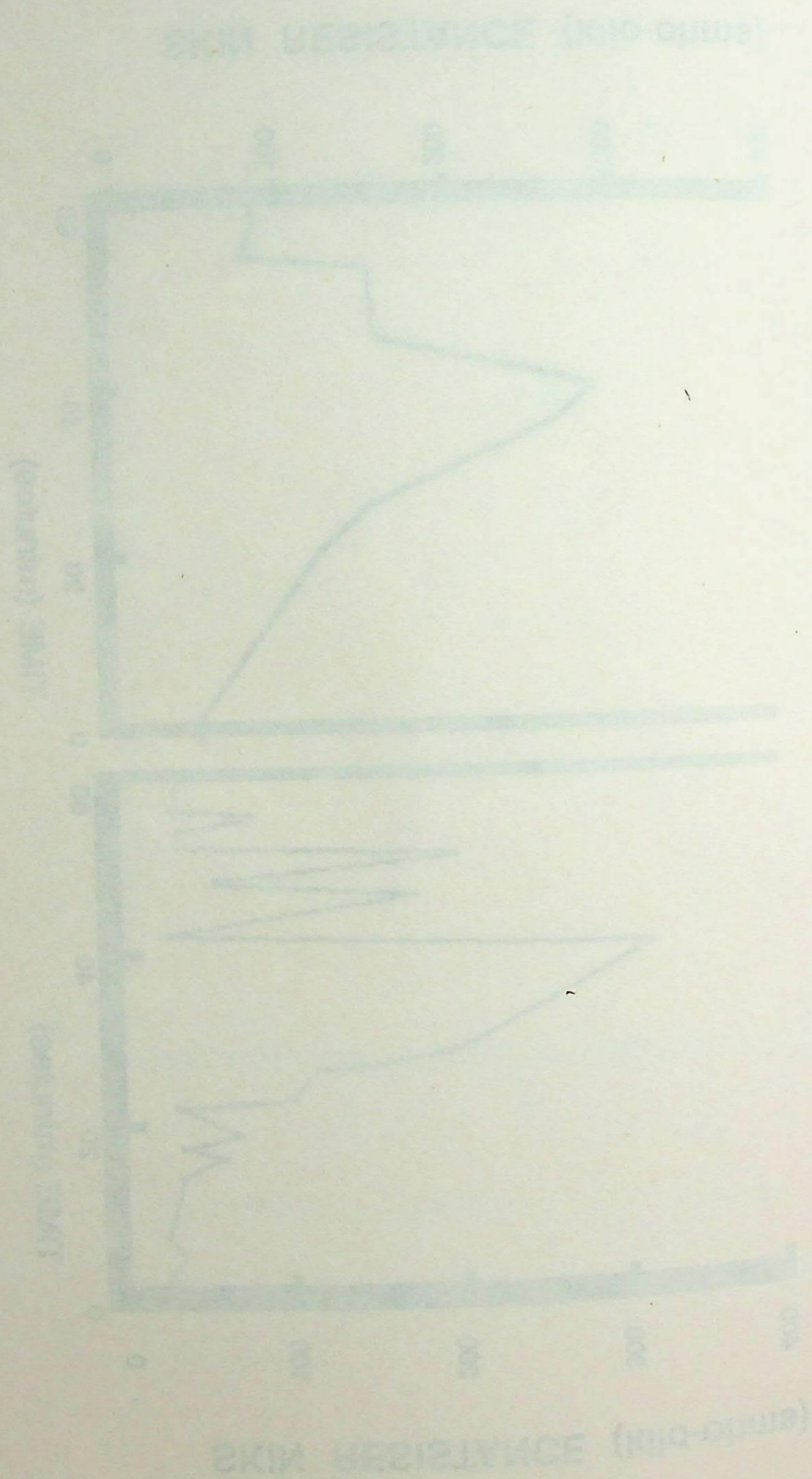


Chart- 4 - तनाव एवं दुश्चिन्ता के दौरान त्वचा की प्रतिरोधक क्षमता घटती है. भावातीत ध्यान करने से त्वचा की प्रतिरोधक क्षमता में काफी बढ़ोत्तरी होती है, जो गहन विश्राम की अवस्था, दुश्चिन्ताओं में कमी और भावनात्मक गड़बड़ी में कमी को दर्शाती है.



Faster Reaction

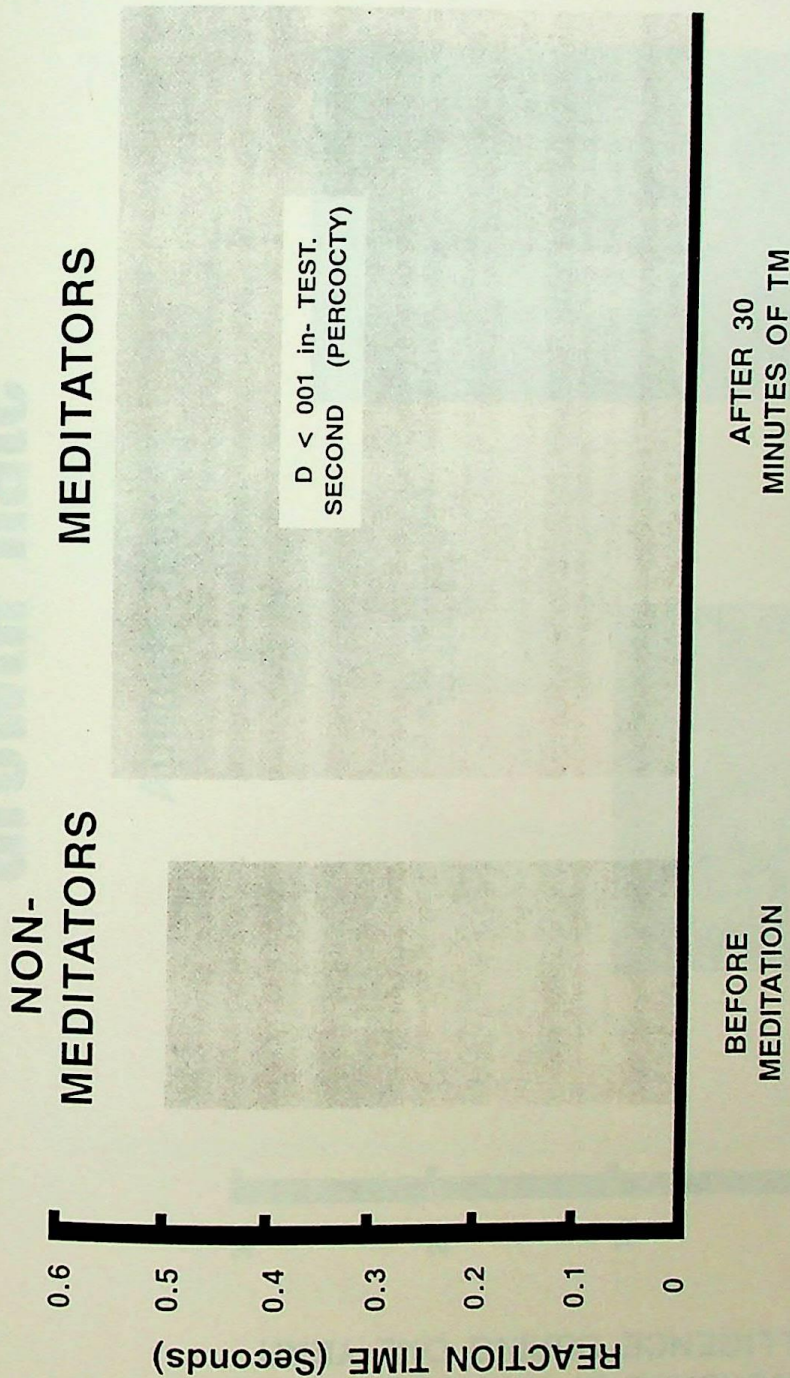
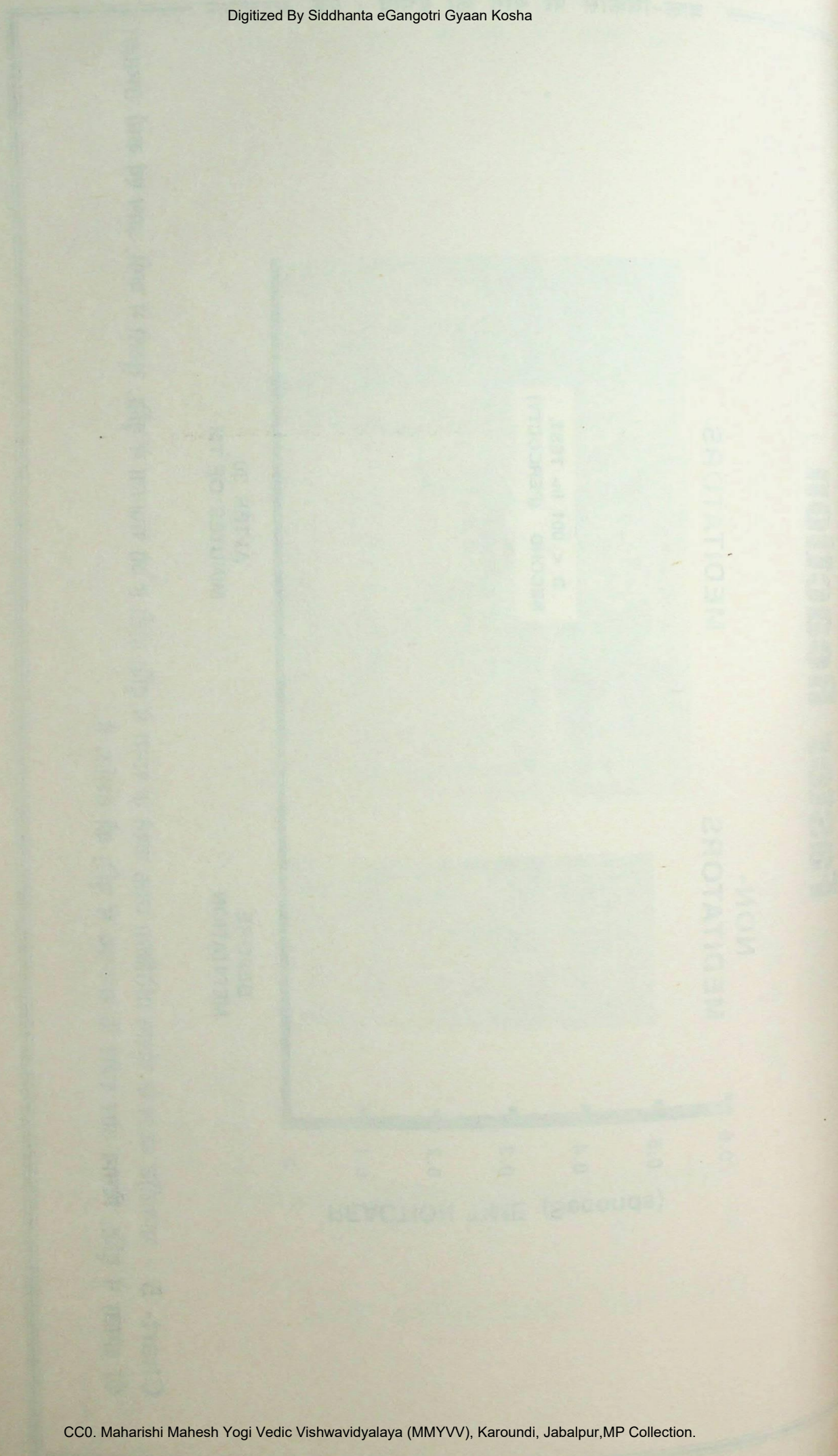


Chart- 5 - भावातीत ध्यान के दौरान प्रतिक्रिया व्यक्त करने के समय में वृद्धि होती है जो सजगता में वृद्धि, सुस्ती में कमी, ज्ञान एवं कार्य सम्पादन की क्षमता में वृद्धि, दिमाग और शरीर के समन्वय में वृद्धि को दर्शाता है.



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

Increased Intelligence Growth Rate

Aptitude Test:

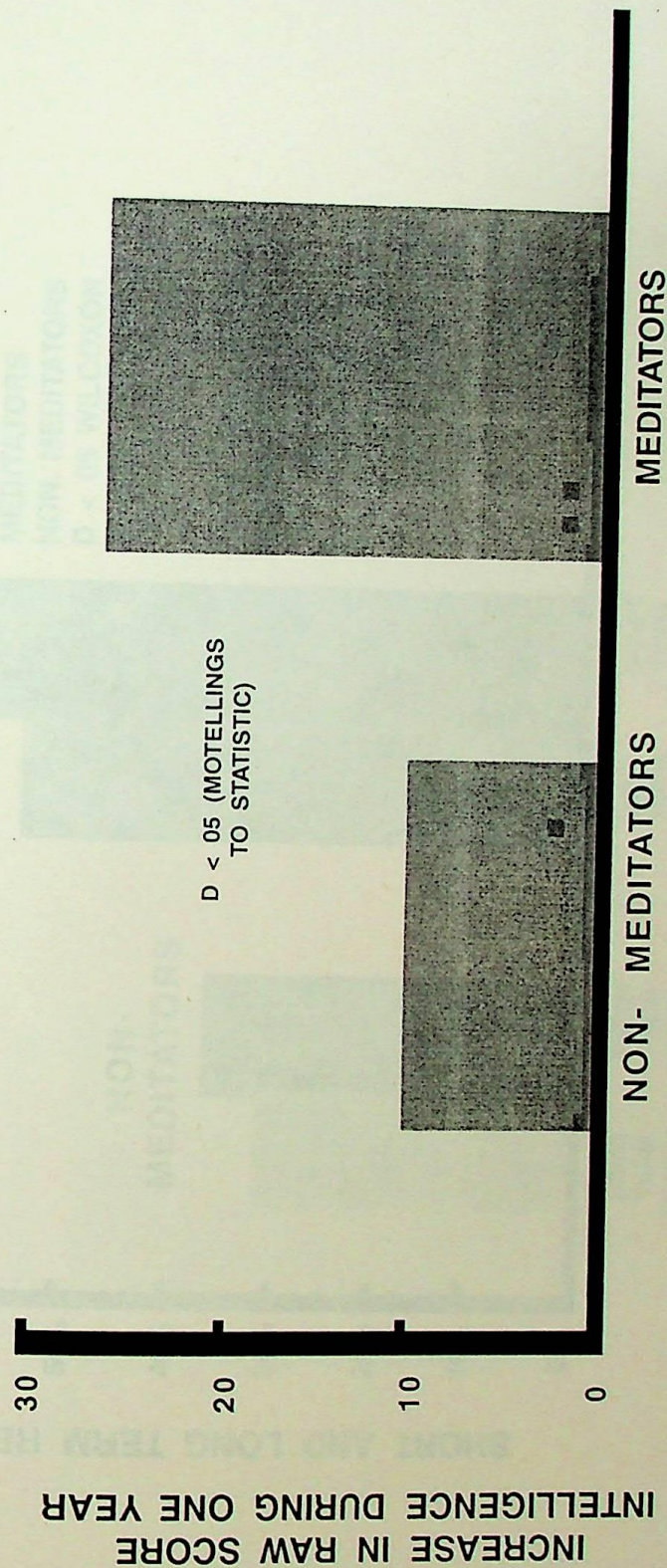
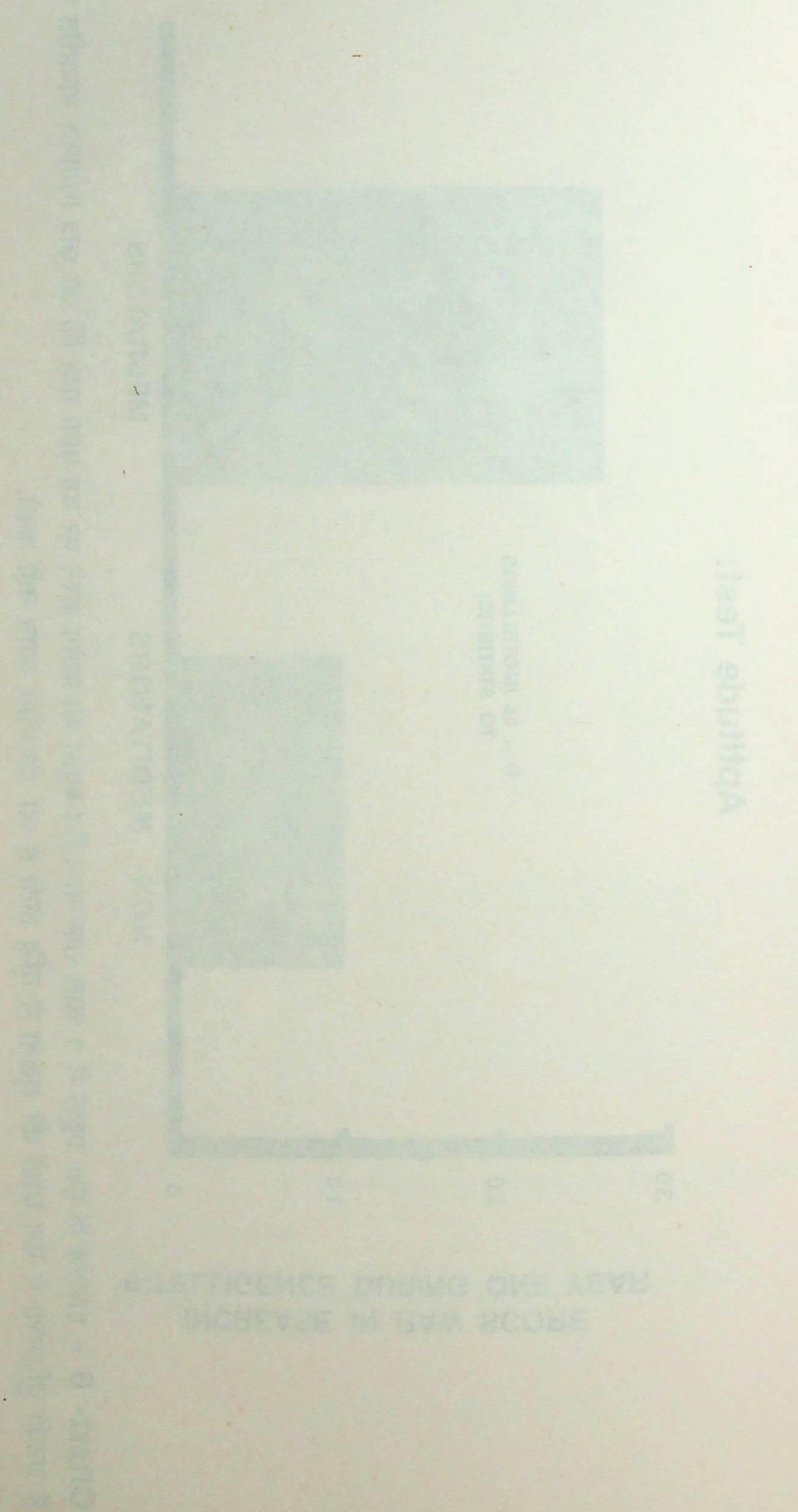


Chart- 6 - हालैण्ड के एक स्कूल में 1 साल तक भावातीत ध्यान का प्रयोग करने पर यह पाया गया कि जो छात्र नियमित भावातीत ध्यान करते हैं उनकी बुद्धिमत्ता में उन छात्रों की तुलना में वृद्धि होती है जो भावातीत ध्यान नहीं करते.



Increased Learning Ability

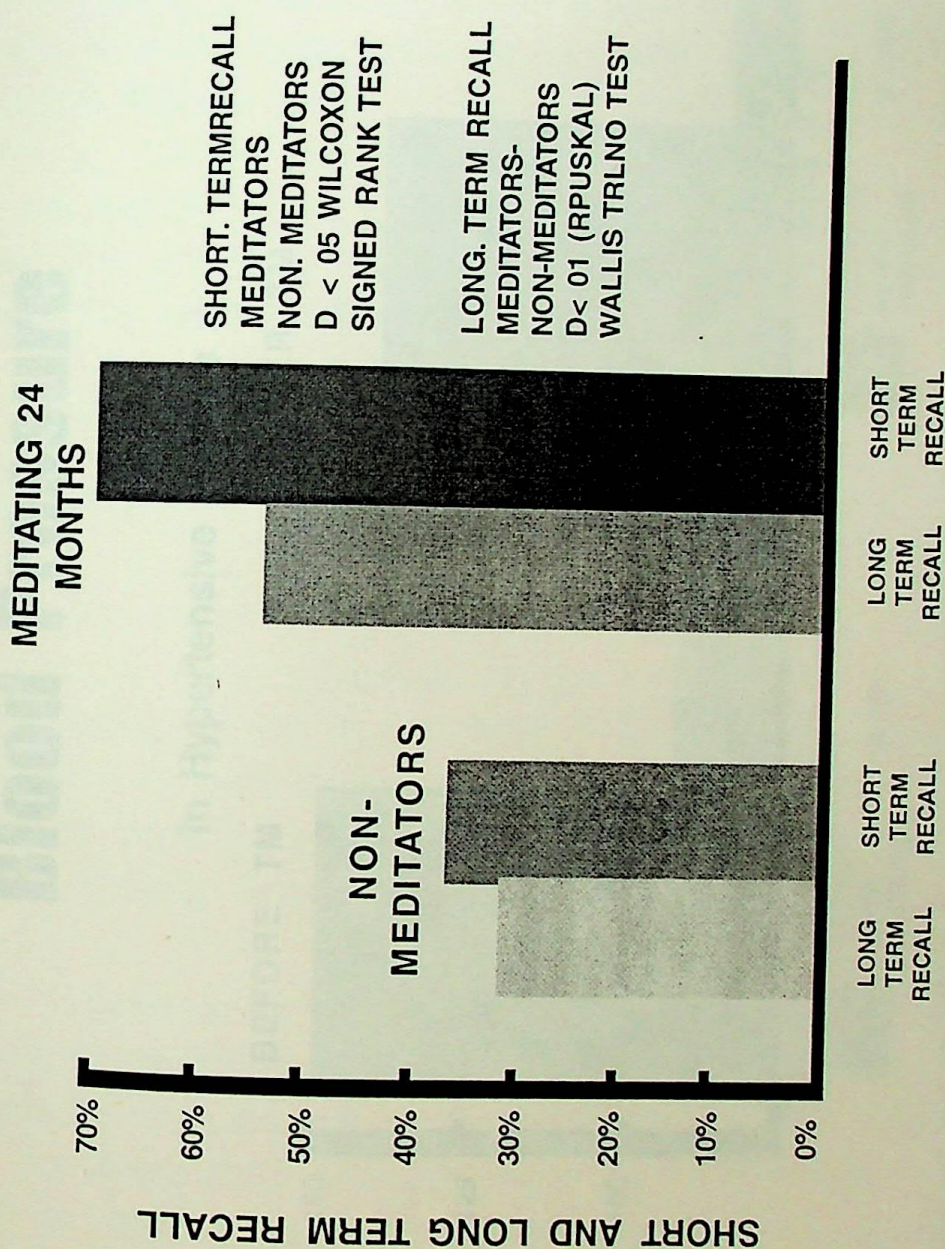
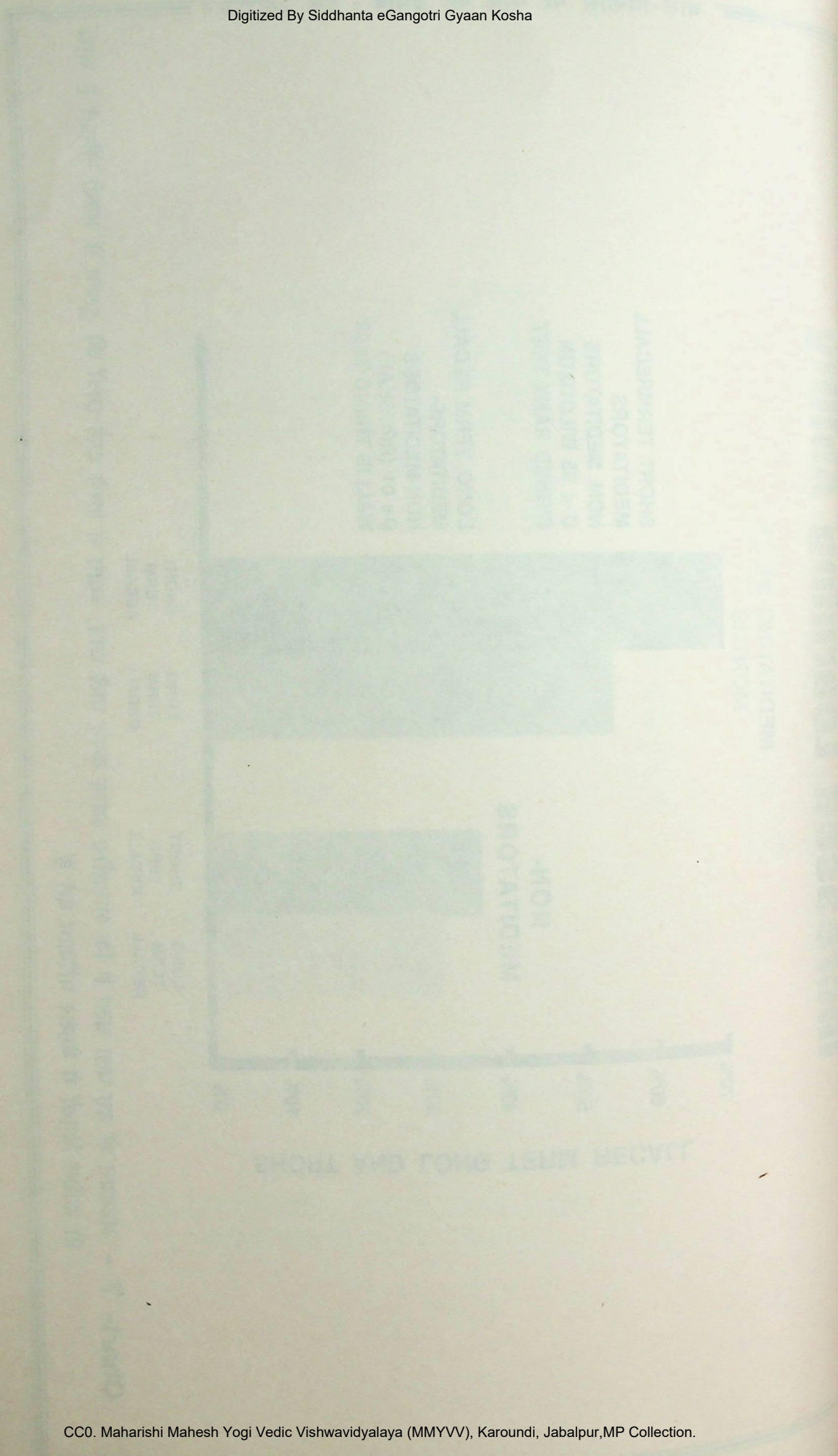


Chart- 7 - अध्ययन से यह पता चला है कि भावातीत ध्यान करने वाले छात्र, ध्यान न करने वाले छात्रों की तुलना में जल्दी सीखते हैं साथ ही कठिन विषयों में बेहतर परिणाम देते हैं.



Decreased Blood Pressure

In Hypertensive Patients

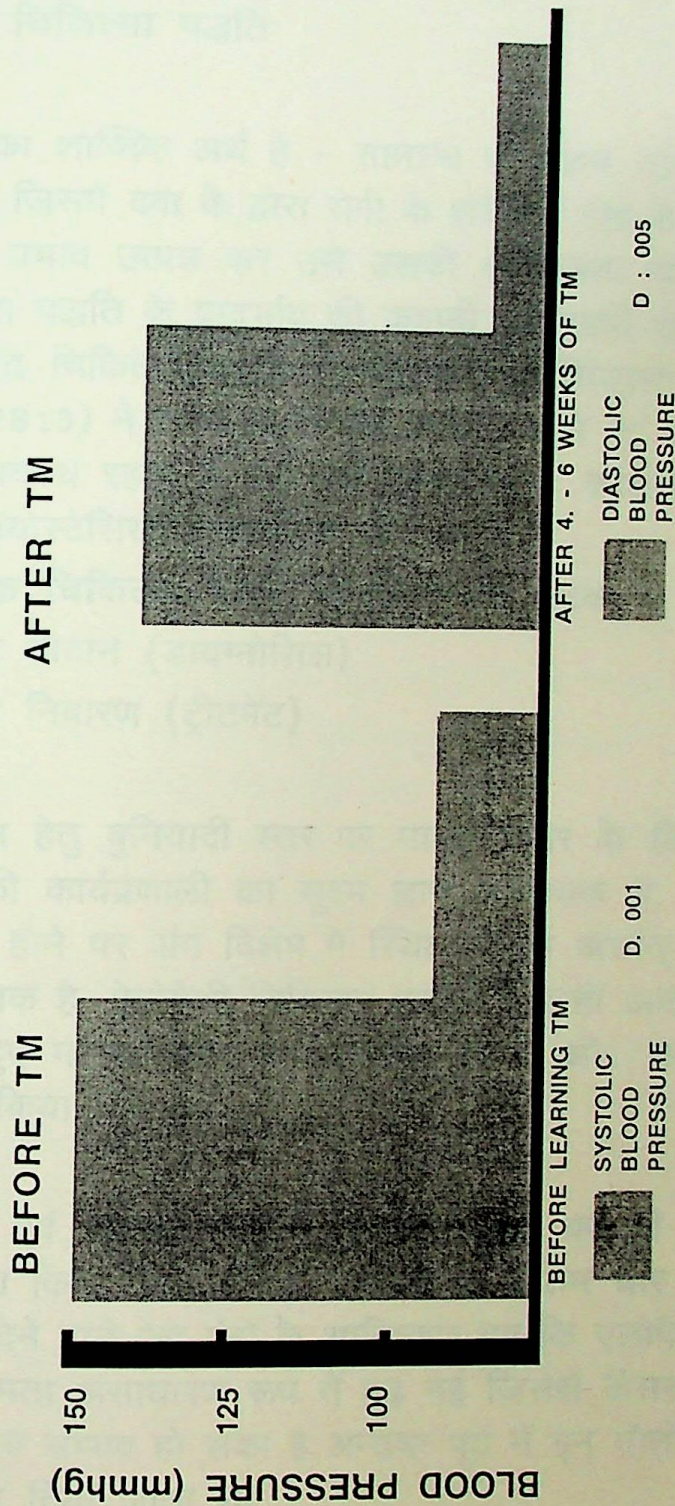
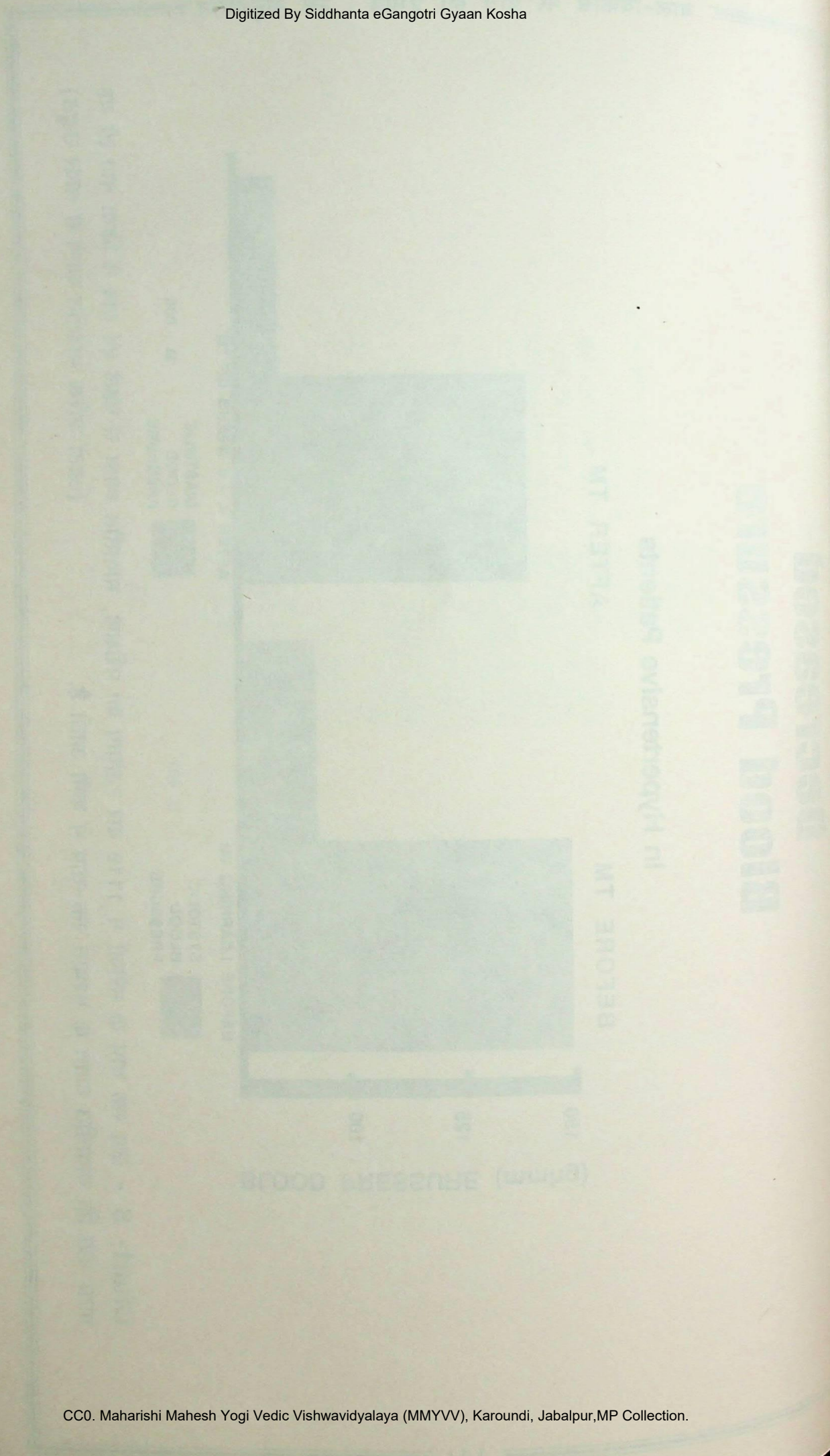


Chart- 8 - उच्च रक्त चाप के मरीजों में 1119 बार रक्तचाप का परीक्षण, भावातीत ध्यान से पहले एवं बाद में किया गया तो यह पाया गया कि भावातीत ध्यान के पश्चात रक्त-चाप में कमी आती है.
(आठों आरेख भावातीत ध्यान से सादर उद्धृत)



बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अन्य चिकित्सा पद्धतियां

(1) एलोपैथी चिकित्सा पद्धति

‘एलो’ का शाब्दिक अर्थ है - सामान्य से अलग. एलोपैथी चिकित्सा की वह पद्धति है जिसमें दवा के द्वारा रोगी के शरीर में रोग से उत्पन्न असहज प्रभाव से अलग प्रभाव उत्पन्न कर उसे उसकी असहजता से मुक्त करते हैं. एलोपैथी चिकित्सा पद्धति के प्रादुर्भाव की कहानी अठारहवीं शताब्दी से प्रारंभ होती है. आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के पंच-महाभूत सिद्धान्त के समानान्तर ‘क्लाड बर्नाड’ (1813) ने स्वस्थ शरीर का रहस्य बताते हुए कहा था कि एक कोश तभी तक स्वस्थ रहता है जब तक उसके अन्तः कोशीय तत्व के मध्य समस्थापन (होमियोस्टेसिस) बना रहता है

प्रत्येक चिकित्सा पद्धति के दो मुख्य घटक हैं :-

- (1) रोग निदान (डायग्नोसिस)
- (2) रोग निवारण (ट्रीटमेंट)

रोग निदान हेतु बुनियादी स्तर पर मानव शरीर के विभिन्न अंगों की संरचना एवं उनकी कार्यप्रणाली का सूक्ष्म ज्ञान आवश्यक है. फिर शारीरिक असहजता उत्पन्न होने पर अंग विशेष में स्थित विकृत अर्थात् पैथोलाजी का ज्ञान होना आवश्यक है. एलोपैथी चिकित्सा पद्धति ने इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए मानव शरीर का उच्छेदन किया और समस्त ज्ञान को क्रमशः लिपिबद्ध किया.

रासायनिक एवं भौतिक विज्ञान की उपलब्धियों को भी मानव के रोग निदान हेतु उपयोग किया गया. बीसवीं शताब्दी के अंतिम चार दशकों में रोग निदान हेतु चौंका देने वाले ऐसे यंत्रों के आविष्कार हुए कि एलोपैथी चिकित्सकों की रोग निदान क्षमता असाधारण रूप से बढ़ गई जिससे कैंसर व एड्स जैसे रोगों का निदान अब सम्भव हो सका है अन्यथा पूर्व में इन मौतों को प्राकृतिक आपदाओं का नाम दिया जाता था.

इस चिकित्सा-पद्धति के रोग-निवारण घटक में दो विधियां प्रमुख हैं.

- (क) काय चिकित्सा (मेडिसीन)
- (ख) शल्य चिकित्सा (सर्जरी)

काय चिकित्सा तो समस्त पद्धतियों में उपलब्ध है किन्तु शल्य चिकित्सा एलोपैथी चिकित्सा पद्धति की उपलब्धि है. शल्य चिकित्सा कुछ विशिष्ट रोगों के निवारण में पूर्णतया सक्षम है अतः मानव समाज इससे पूर्णतया लाभान्वित हो रहा है.

यही कारण है कि इस पद्धति का प्रभाव आज विश्व व्यापी हो गया है. त्वरित लाभ होता देख अधिक महंगी होने पर भी लोगों में इसके प्रति अत्यधिक आकर्षण देखा जा रहा है. एलोपैथी चिकित्सा विज्ञान के स्थापित सिद्धान्तों पर आधारित है. इसमें नित्य नये प्रयोग होते जा रहे हैं जो इस पद्धति को और अधिक विकसित करते जा रहे हैं.

मनुष्य यह चाहता है कि उसे कष्टों से शीघ्र राहत मिल सके. एलोपैथी चिकित्सा इसमें सफल हो रही है. इस पद्धति ने शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में वास्तव में आशातीत सफलता प्राप्त की है. पहले तो परम्परागत औजारों द्वारा चिकित्सा होती थी, परन्तु विज्ञान की नयी तकनीकों तथा अणु तकनीक ने भी इस चिकित्सा पद्धति को बहुत सहायता प्रदान की है.

इस पद्धति के जो लाभ हैं वे तो प्रत्यक्ष हैं ही किन्तु इस पद्धति का सबसे बड़ा दोष है दवाइयों का प्रतिकूल प्रभाव (साइडइफेक्ट). एक तो दवाइयां रोग को दबा देती हैं जिससे रोग निर्मूल नहीं हो पाता, साथ ही वह अन्य किसी रोग को भी जन्म दे देता है. इस पद्धति में मरीज को 'एन्टीबायोटिक' दवाई देते हैं जो लाभ कम और हानि अधिक करती है. इन दवाइयों का उदर पर सीधा दुष्प्रभाव पड़ता है. यह पद्धति शल्य क्रिया पर अधिक आधारित होती जा रही है. इसमें यह भी देखा जा रहा है कि ऐसे कई रोग हैं जिनका कारण डाक्टरों की समझ में नहीं आता अतः वे उसका नाम एलर्जी दे देते हैं. इसका उनके पास कोई इलाज भी नहीं होता है. शैशवावस्था से ही मानव को दवाओं का इतना अभ्यास करा दिया जाता है कि प्रौढ़ावस्था में वह स्वयं एक चलता फिरता रासायनिक केन्द्र बन बन जाता है. मानव के अंतः अंगों का खुला व्यापार और चिकित्सकों का व्यापारियों जैसा व्यवहार इस पद्धति पर से व्यक्ति का विश्वास हिलाने में सक्षम है.

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि एलोपैथी चिकित्सा से लाभ सीमित और हानियां अधिक हैं. आज संसार के जिन देशों में केवल इसी चिकित्सा का

संस्कृत भाषा में 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'। यह शब्द 'सं' (सं) और 'स्कृत' (स्कृत) से मिलकर बना है। 'सं' का अर्थ है 'सं' और 'स्कृत' का अर्थ है 'स्कृत'। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'।

यह शब्द 'सं' (सं) और 'स्कृत' (स्कृत) से मिलकर बना है। 'सं' का अर्थ है 'सं' और 'स्कृत' का अर्थ है 'स्कृत'। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'।

यह शब्द 'सं' (सं) और 'स्कृत' (स्कृत) से मिलकर बना है। 'सं' का अर्थ है 'सं' और 'स्कृत' का अर्थ है 'स्कृत'। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'।

यह शब्द 'सं' (सं) और 'स्कृत' (स्कृत) से मिलकर बना है। 'सं' का अर्थ है 'सं' और 'स्कृत' का अर्थ है 'स्कृत'। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'।

यह शब्द 'सं' (सं) और 'स्कृत' (स्कृत) से मिलकर बना है। 'सं' का अर्थ है 'सं' और 'स्कृत' का अर्थ है 'स्कृत'। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है 'संस्कृत'।

अनुसरण हो रहा है वे भी दूसरी चिकित्सा पद्धतियों की ओर आकर्षित हो रहे हैं. वहां इस विषय में तेजी से अनुसंधान हो रहे हैं, और वे सफलतापूर्वक प्रयोग में लायी जा रही हैं.

(2) होमियोपैथी चिकित्सा

जर्मन के एक ख्यातिप्राप्त एलोपैथिक चिकित्सक सेम्युअल हनीमैन द्वारा आविष्कृत होने के कारण इसका नाम होमियोपैथी पड़ा. यह प्रणाली इस सिद्धान्त पर कार्य करती है कि मानव का जो स्थूल शरीर हमें दिखता है, वह अति सूक्ष्म तत्वों का बना है. रोग का प्रारम्भ स्थूल शरीर में नहीं होता, पहले रोग सूक्ष्म शरीर में आता है. यदि सूक्ष्म शरीर (जीवनी शक्ति अर्थात् वाइटल फोर्स) स्वस्थ है, सबल है, उसमें रोग प्रतिरोधक शक्ति मजबूत है तो रोग का आक्रमण सूक्ष्म शरीर पर नहीं हो सकता और स्थूल शरीर स्वस्थ बना रहता है. किन्तु यदि हमारी जीवनी-शक्ति अस्वस्थ, निर्बल है तो रोग पहले भीतरी शक्ति पर आक्रमण कर उसे और निर्बल कर देता है, फिर स्थूल शरीर पर विभिन्न अंगों में रोगों के लक्षण प्रगट होने लगते हैं. यदि उपचार से सूक्ष्म शरीर को रोगमुक्त कर लिया जाय तो स्थूल शरीर अपने आप रोगमुक्त हो जाता है.

होमियोपैथी की शक्तिकृत दवा सूक्ष्म रूप में ही होती है अतः सूक्ष्म तत्व पर सूक्ष्म तत्व का ही स्थायी प्रभाव पड़ता है और व्यक्ति रोगमुक्त हो जाता है.

स्वस्थ शरीर में जो औषधि रोग के जिन लक्षणों को उत्पन्न करती है, यदि रोगी में वैसे ही लक्षण पाये जाते हैं तो वही औषधि होमियोपैथी के शक्तिकृत रूप में (सूक्ष्म रूप में) उन लक्षणों को ठीक कर देगी. बीमारी का नाम चाहे कुछ भी हो.

इसमें रोगी के लक्षणों को प्रधानता दी जाती है. असाध्य कहे जाने वाले रोगों के लिए केस हिस्ट्री लेते समय उनके लक्षणों को प्राथमिकता दी जाती है चूंकि होमियोपैथिक दवाओं के परीक्षण का आधार स्वस्थ मानव शरीर रहा है अतः जब तक मानव पृथ्वी पर है, होमियोपैथी की वे ही दवाइयां तब तक चलती रहेंगी.

इस चिकित्सा प्रणाली का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसका कोई साइड इफेक्ट नहीं होता. होमियोपैथिक दवाओं की कोई एक्सपायरी डेट नहीं होती. लक्षणों के आधार पर ही चिकित्सा की जाती है. इसी कारण साधारणतः रोगी से भारी भरकम खर्चीली जांचे नहीं करायी जाती हैं. यह चिकित्सा-पद्धति सरल है, सरस्ती है और पुराने रोगों में स्थायी लाभ देने का सामर्थ्य रखती है.

होमियोपैथिक चिकित्सा के बारे में आवश्यक जानकारी के अभाव में कुछ भ्रांतियां व गलत धारणायें फैली होने के कारण लोग इस चिकित्सा से हिचकिचाते हैं. इसमें रोग ठीक होने में समय भी अधिक लगता है; पहले रोगी के शरीर में रोग बढ़ता है, फिर धीरे-धीरे कम होता है; अतः व्यक्ति इस चिकित्सा-पद्धति से घबड़ा भी जाते हैं.

(3) बायोकेमिक चिकित्सा प्रणाली

डॉ. हनीमैन द्वारा होमियोपैथी के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा के बाद चिकित्सा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण योगदान जर्मन विद्वान डॉ. डब्ल्यू.एच. शुस्लर का रहा जिन्होंने बायोकेमिक (जैव रसायन प्रणाली) चिकित्सा प्रणाली का प्रतिपादन किया.

शारीरिक संरचना में बारह अकार्बनिक टिस्यु लवण महत्वपूर्ण हैं और वे शरीर-निर्माण के भौतिक आधार हैं. जब जीवित कोषों में इन लवणों के कणों की गतिविधियों से कोई अन्तर आता है और इनका संतुलन बिगड़ जाता है तब रोग पैदा होता है. आवश्यक लवण की कमी को औषधि रूप में देने से रोग दूर किया जा सकता है. सामान्य रूप से यही बायोकेमिक चिकित्सा का सिद्धान्त है.

बायोकेमिक औषधियां होम्योपैथिक औषधियां ही हैं. जो शुस्लर के जैव रसायन सिद्धान्त के पहले भी प्रयोग में की जाती थी. किन्तु यह चिकित्सा होम्योपैथी से भिन्न है. होम्योपैथी का तत्व है कांटे से कांटा निकालना अर्थात् जो दवा स्वस्थ आदमी में अधिक मात्रा में देने पर बुरे लक्षण उत्पन्न करती है वही दवा कम मात्रा में देने पर वैसे ही बुरे लक्षण वाले रोगों को दूर करती हैं. जब कि जैव रसायन चिकित्सकों में जिन लवणों की कमी से रोग उत्पन्न हुआ है उन्हें देने से रोग अच्छा हो जाता है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

इस प्रणाली में मात्र बारह दवाएँ प्रयोग की जाती हैं। ये बारह लवण होते हैं। रोगी को दिया जाने वाला लवण इतना सूक्ष्म होना चाहिए कि वह शीघ्र शरीर के कोशों में मिल जाय। इसलिए लवण का अंश घटाकर उसे अधिक शक्तिशाली बनाते हैं। ये दवाएँ आपोलाइजेशन के सिद्धान्त पर कार्य करती हैं।

इन दवाइयों का एक और खास गुण है कि दूसरी प्रणाली की दवाइयों के चलते इनका प्रयोग रोगी को कुछ भी हानि नहीं करता। ये दवायें पूर्णरूप से हानिरहित हैं। एक दिन के बच्चे या वृद्ध रोगी को भी बिना किसी डर के इन्हें दिया जा सकता है।

(4) एक्यूप्रेशर चिकित्सा प्रणाली

यह पद्धति प्राचीन भारतीय पद्धतियों में से एक है। इस पद्धति का उल्लेख सुश्रुत संहिता में भी मिलता है तथा हमारे प्राचीन आयुर्वेदाचार्य इसके जानकार थे। प्राचीन काल से महिलाओं का शरीर के भिन्न - भिन्न अंगों में आभूषण पहिनने, धार्मिक तथा सामाजिक रीति रीवाजों के पीछे भी इसी पद्धति का हाथ माना गया है।

'एक्यू' का अर्थ है बिन्दु और प्रेशर का अर्थ है दबाव अर्थात् दर्द वाले अंगों पर प्रेशर देना ही एक्यू प्रेशर है। स्त्रियों का हाथ में कड़ा पहिनना, पैरों में पायल पहिनना, गले में हार, ललाट पर चमकती बिंदिया झुककर वृद्ध जनों के चरण स्पर्श करना आदि भी एक्यूप्रेशर की परिधि में आते हैं। एक्यूप्रेशर पद्धति का आधार दबावयुक्त गहरी मालिश है। दबाव के साथ गहरी मालिश करने से रक्त संचार ठीक हो जाता है जिससे शरीर की शक्ति और स्फूर्ति बढ़ जाती है। शरीर की शक्ति बढ़ने से विभिन्न अंगों में जमा हुए अवांछनीय तथा विषपूर्ण पदार्थ पसीना, मूत्र एवं मल द्वारा शरीर से बाहर निकल जाते हैं और शरीर नीरोग हो जाता है।

वैज्ञानिक शोधों से यह स्पष्ट हो गया है कि शरीर की सतह (त्वचा) पर मौजूद कुछ निश्चित बिन्दुओं को दबाने से शरीर के भीतरी अंगों पर प्रभाव उत्पन्न कर संबंधित अंग का रोग दूर किया जा सकता है।

एक्यूप्रेशर प्राचीन भारतीय मालिश का ही परिष्कृत रूप है जिसमें हाथों, पैरों, चेहरे तथा शरीर के कुछ खास केन्द्रों पर दबाव डाला जाता है। इस

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

पद्धति का प्रमुख सिद्धान्त है कि सभी रक्त संचार नाड़ियों, स्नायु संस्थान एवं ग्रंथियों के अंतिम सिरे हथेली अथवा पदतल में स्थित होते हैं। इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य स्नायु संस्थान एवं रक्त-संचार को सुव्यवस्थित करना एवं मांस पेशियों को शक्तिशाली बनाना है।

भारतीय शास्त्रों, आयर्वेदिक एवं प्राकृतिक चिकित्सा सिद्धान्तों के अनुसार हमारा शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश से बना है। इन पांचों तत्वों का संचालन शरीर की अंदरूनी ऊर्जा करती है जिसे बायो एनर्जी कहते हैं। हाथ पैर या शरीर के अन्य भागों पर स्थित जो केन्द्र दबाने से पीड़ा करते हैं, वहां से संबंधित अंगों की बिजली लीक कर जाती है (अर्थात् शरीर के अंदर काम करने के स्थान पर शरीर से बाहर निकलने लगती है) जिससे संबंधित अंग में किसी न किसी कारण विकार आ जाता है। इन केन्द्रों पर दबाव देने से शरीर की एनर्जी (शक्ति का प्रवाह) सामान्य हो जाता है और प्रभावित अंग के विकार दूर होने लगते हैं।

इस चिकित्सा पद्धति द्वारा उपचार कभी भी, कहीं भी तथा किसी भी समय किया जा सकता है, परन्तु भोजन करने के एक घंटा पहले तथा एक घंटा बाद ही इस पद्धति को प्रयोग में लाना श्रेयस्कर होता है। इस पद्धति में न कोई दवा लेनी पड़ती है और न ही इसका कोई साइड इफेक्ट होता है।

(5) चुम्बक चिकित्सा

प्राचीन काल में भी चिकित्सकों को आकर्षण शक्ति एवं चुम्बकीय शक्ति का पूर्ण ज्ञान था। अथर्ववेद के प्रथम काण्ड सूक्त 17 मन्त्र 3-4 में स्त्री रोगों के उपचार में आकर्षण शक्ति के प्रयोग का उल्लेख है। मृत्यु के पूर्व मनुष्य का सिर उत्तर दिशा में एवं पैर दक्षिण दिशा की ओर करने की प्राचीन काल से चली आ रही परम्परा के पीछे भी यही विज्ञान काम करता है, ऐसा करने से धरती और शरीर में चुम्बकीय समता हो जाने के कारण मृत्यु के समय की पीड़ा कम हो जाती है।

चुम्बक चिकित्सा का सैद्धान्तिक आधार यह है कि हमारा शरीर मूल रूप से एक विद्युतीय संरचना है और प्रत्येक मानव के शरीर में कुछ चुम्बकीय तत्व जीवन के आरम्भ से लेकर अन्त तक रहते हैं। नाड़ियों और नसों के द्वारा खून

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

शरीर के हर भाग में पहुंचता है. चुम्बकीय शक्ति रक्त संचार प्रणाली के माध्यम से मानव शरीर को प्रभावित करती है.

चुम्बक रक्त कणों के हिमोग्लोबिन तथा साइटोकेम नामक अणुओं में निहित लौह तत्वों पर प्रभाव डालता है. इस तरह चुम्बकीय क्षेत्र के सम्पर्क में आकर खून के गुण और कार्य में लाभकारी परिवर्तन आ जाता है और इससे शरीर के अनेक रोग ठीक हो जाते हैं. इस चिकित्सा पद्धति में न तो कोई कष्ट है और न ही किसी प्रतिक्रिया की आशंका, अतः सभी रोगियों पर इसका प्रयोग सरलता एवं सफलतापूर्वक किया जा सकता है.

चुम्बकीय तरंगे शरीर के भीतर जमा हो जाने वाले हानिकारक तत्वों (कैल्शियम, कोलस्ट्रॉल) को साफ करके खून को पतला और साफ बनाती है इससे हृदय गति सहज हो जाती है, रक्तचाप नियमित रहता है और घबराहट दूर हो जाती है.

चुम्बक चिकित्सा के क्षेत्र में हुए अब तक के विकास, प्रयोगों और अनुभवों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि चुम्बक मनुष्यों और पशुओं के विभिन्न रोगों के उपचार का एक अच्छा माध्यम है, किन्तु यह प्रणाली भी समय-साध्य है और विशेष रूप से शारीरिक क्षति में इसका प्रयोग असरदार नहीं होता, यथा दुर्घटना से क्षतविक्षत शरीर में या शरीर के विभिन्न अंगों के जल जाने पर इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता.

(6) स्पर्श चिकित्सा

मानव इतिहास में सनातन काल से प्राण शक्ति पर आधारित चिकित्सा की विधि भी प्रचलित रही है. स्पर्श चिकित्सा ऋग्वेद में वर्णित है. यह चिकित्सा हमारे देश की अद्भुत देन है. धीरे-धीरे लोग इसे भूल गये और फिर जापान से इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ. यह चिकित्सा रेकी-चिकित्सा के नाम से प्रचलित है.

यह ऊर्जा सहस्रार-चक्र के माध्यम से प्रवेश करती है, वहां से आज्ञा चक्र से होते हुए नीचे की ओर विशुद्ध चक्र में आती है, फिर अनाहत चक्र यानी

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

हृदय तक पहुँचकर पूरे शरीर में फैल जाती है। तत्पश्चात् मनुष्य की हथेलियों द्वारा प्रवाहित होती है।

शुरु में रोगी को जब स्पर्श चिकित्सा दी जाती है तो भौतिक और भावनात्मक विकार शरीर से निकलने शुरु होते हैं। आधुनिक औषधियों के फलस्वरूप जो विषैले रासायनिक पदार्थ शरीर में घर कर लेते हैं वे निकलना प्रारंभ करते हैं और दो ही दिनों में रोगी को अपना शरीर हल्का प्रतीत होने लगता है शरीर के चौबीस निर्धारित अंगों पर हाथ से स्पर्श किया जाता है, रोगी के जिस अंग में ऊर्जा की जितनी जरूरत होती है, उतनी ही ऊर्जा रोगी चिकित्सक की हथेलियों से खींचता है। इस चिकित्सा की विशेषता यह है कि इसमें दूर से भी चिकित्सा की जा सकती है। रोगी को इस चिकित्सा व चिकित्सक पर दृढ़ विश्वास होना जरूरी है।

छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष, चिन्ता-क्रोध, लोभ-मोह, आलस्य-असंयम, अन्याय-असत्य, नकारात्मक दुष्प्रवृत्तियाँ, प्रदूषित वातावरण तथा जीवन की जटिलताएं शरीर की रस-स्रावी ग्रंथियों को असंतुलित कर मानसिक तनाव, घबराहट, चिन्ता, सिरदर्द, ब्लडप्रेसर, अनिद्रा, अपच, शारीरिक, दौर्बल्य, अपंगता आदि रोगों को जन्म देती हैं।

स्पर्श चिकित्सा में ऊर्जा स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर का सशक्त माध्यम है जो साधना-चक्र-प्रणाली और रस-चक्र-प्रणाली में तारतम्य बैठाकर (पुनः संतुलन स्थापित कर) शरीर को रोगमुक्त करती है। सूक्ष्म शरीर के चक्र स्थूल शरीर की रस स्रावी ग्रंथियों के समीप ही हैं जैसे सूक्ष्म शरीर में सहस्रार चक्र के समीप पीनियल ग्रंथि स्थित है, यही ज्ञाताज्ञेय का, आत्मा-परमात्मा का एकाकार होता है। आत्मज्ञान, विवेक-शक्ति के केन्द्र आज्ञा चक्र के समीप आत्म संचालित नाडी तंत्र, रस स्रावी पिट्यूटरी ग्रंथि स्थित है। इसी प्रकार थायराइड ग्रंथि, थायमस ग्रंथि, एड्रीनल आदि ग्रंथियों भी अनाहत चक्र, मणिपुर चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र के समीप स्थित हैं। इस उपचार पद्धति के द्वारा इन ऊर्जा केन्द्रों के संतुलन से शरीर की सभी प्रणालियों में संतुलन आ जाता है।

(7) प्राकृतिक चिकित्सा

शरीर में दूषित, विषाक्त एवं विजातीय पदार्थों के एकत्र होने से रोग उत्पन्न होते हैं। इन पदार्थों के एकत्र होने का मुख्य स्थान पेट है। इसलिए यदि

पेट स्वस्थ है तो हम स्वस्थ हैं. जो भोजन हम लेते हैं उसमें 75 प्रतिशत क्षारतत्व और 25 प्रतिशत अम्लतत्व होने चाहिए. यदि भोजन में 25 प्रतिशत अम्लीय आहार लिया जाता है तो रक्त में अधिक खटाई हो जाती है इस कारण वह दूषित हो जाता है. शरीर इस दूषित पदार्थ को पसीने एवं मूत्र द्वारा अंदर से बाहर निकालने की चेष्ट करता है. यदि वह बाहर नहीं निकलता है तो शरीर रोग ग्रस्त हो जाता है. प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा इन्हीं दूषित पदार्थों को हटाकर शरीर को स्वस्थ किया जाता है.

प्राकृतिक चिकित्सा में पंच महाभूत पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश द्वारा चिकित्सा की जाती है. बिना औषध के मिट्टी, पानी, हवा (एनिम), सूर्य-प्रकाश, उपवास एवं फलों, सब्जियों द्वारा चिकित्सा की जाती है. आहार, ऋतुचर्या पर विशेष ध्यान दिया जाता है तथा प्रकृति के निकट रहने का अधिकाधिक प्रयास किया जाता है.

शरीर अपनी स्वच्छता, पुनर्निर्माण और क्षतिपूर्ति जैसी कुछ प्रक्रियाओं द्वारा प्राकृतिक रूप में स्वास्थ्य प्राप्ति का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है. प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली कीटाणुओं के अस्तित्व को अस्वीकार नहीं करती; पर इसका कहना है कि वे रोग की उत्पत्ति के कारण ही नहीं होते. इस प्रणाली के अनुसार रोग के कीटाणु गंदगी और विषाक्त पदार्थ के मौजूद होने पर ही प्रकट होते हैं और बढ़ते हैं. शरीर तब तक किसी संक्रामक रोग से आक्रान्त नहीं हो सकता, जब तक उस विशेष रोग के कीटाणुओं के बढ़ने योग्य पहले से क्षेत्र तैयार न हो.

हमें यह समझकर कि नीरोग करने की शक्ति उपचार में है, कभी अपने को भुलावे में नहीं रखना चाहिए. आरोग्यता पर हमेशा प्रकृति का ही विशेषाधिकार है. प्रकृति ने इस शरीर को सबसे बड़ी प्रयोगशाला के रूप में तैयार किया है जिसमें रासायनिक प्रक्रियायें इतने ऊंचे शिखर पर पहुंची हुई हैं कि हमारी दृष्टि वहां पहुंचने में सर्वथा असमर्थ हो जाती है जिसमें रक्षात्मक क्षमता के साधन सर्वदा उचित नियंत्रण में रहते हो.

इस पंच महाभूतात्मक शरीर में मिट्टी (पृथ्वी तत्व) की प्रधानता है. मिट्टी हमारे शरीर के विषों, विकारों, विजातीय पदार्थों को निकाल बाहर करती है. यह प्रबल कीटाणुनाशक है. मिट्टी चिकित्सा के प्रकार के अन्तर्गत-मिट्टी युक्त

जमीन पर नंगे पांव चलना, मिट्टी के बिस्तर पर सोना, सर्वांगों में गीली मिट्टी का लेप इत्यादि है।

जल चिकित्सा के उपयोग - सामान्यतः हमारे शरीर में 55 प्रतिशत से 75 प्रतिशत तक जल होता है अतः जल का महत्व स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत अधिक है। इसके अंतर्गत गरम टंडा सेंक, धूप स्नान, कटि स्नान, वाष्प स्नान, इत्यादि आते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में सूर्य स्नान का विशेष महत्व है। इसके सेवन से विटामिन 'डी' की प्राप्ति होती है। पेट के रोगों में उपवास (आकाश) इस चिकित्सा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है। रोगी की अवस्था के अनुसार अर्ध उपवास, एकाहार रसोपवास, फल उपवास, दुग्ध उपवास, मट्ठा उपवास कराया जाता है।

प्राकृतिक चिकित्सा जीवन-यापन और आरोग्य लाभ के लिए जिस ढंग का प्रतिपादन करती है वह वैज्ञानिक होने के साथ ही विवेकपूर्ण एवं सरल भी है।

(8) आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति

प्राचीन काल से ही आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का अवदान सर्वोत्कृष्ट रहा है। संसार की समस्त मानव जाति को त्रिविध तापों से पीड़ित, अनेक शारीरिक और मानसिक रोगों से ग्रस्त देखकर प्राचीन काल में त्रिकालदर्शी महर्षियों ने अत्यन्त करुणावश होकर समग्र जीवन दर्शन के रूप में जिस आरोग्य शास्त्र का प्रतिपादन किया, वही अमृतत्व आयुर्वेद के नाम से जाना जाता है।

आयुर्वेद शास्त्र का प्रादुर्भाव प्राणिमात्र के कल्याण की पवित्र भावना से ही हुआ है। इसमें मनुष्य तथा मानवेतर प्राणियों की व्याधि दूर करने भी दिशा-निर्देश दिये गये हैं। भारत में वैदिक काल से ही औषधीय महत्व रखने वाले पौधों, लताओं और वृक्षों की पहचान की गई है। जड़ी बूटियों के चामत्कारिक औषधीय प्रभावों को वैज्ञानिक धरातल पर जांचा परखा जा चुका है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

आयुर्वेद मानव के समग्र जीवन का एक सर्वांगीण दर्शन और विज्ञान है जो प्राचीन काल से अद्यावधिपर्यन्त अक्षुण्ण रूप से मानव समाज के आरोग्य की रक्षा करता हुआ, अद्यतन चिकित्सा विज्ञान की चुनौतियों का मौनभाव से सामना करता हुआ देश, काल, सम्प्रदाय एवं जाति निरपेक्ष भाव से मानवमात्र के लिए उपादेय बना हुआ है। यह एक निर्विवाद तथ्य है कि आयुर्वेद ही विश्व में एकमात्र जीवन विज्ञान है जो ईसा से कई सहस्राब्दियों पूर्व अपने सर्वांगीण स्वरूप में विकसित हो चुका था।

आखिर आयुर्वेद में ऐसी कौन सी विशेषता है कि विश्व की अन्य समुन्नत (यथा-ग्रीक, रोमन तथा मिश्र देशीय) चिकित्सा प्रणालियां जहां इतिहास की कुक्षि में समा गयीं। वहीं यह आज भी विश्व क्षितिज पर अपने प्रकाश को बिखेर रहा है।

देवलोक से मर्त्यलोक में आयुर्वेद को अवतरित करने का श्रेय महर्षि भारद्वाज को है। वेदों को प्राचीनतम वाङ्मय माना जाता है जो समस्त ज्ञान के आदि स्रोत कहे जाते हैं आयुर्वेद की विषय वस्तु चतुर्विध वेदों में प्राप्त होती है। परन्तु सर्वाधिकता अथर्ववेद में होने के कारण आचार्य सुश्रुत ने आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपाङ्ग कहा है। काश्यप संहिता एवं ब्रह्मवैवर्तपुराण में आयुर्वेद को पंचम वेद कहा गया है।

आरोग्यावस्था बनाये रखना आयुर्वेद का मुख्य लक्ष्य है। इस हेतु इसके दो लक्षण बताये गये हैं -

“ स्वस्थस्य स्वास्थयरक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं ”

(च.सू. 30/26)

संहितोक्त आयुर्वेद को अष्टाङ्ग-आयुर्वेद कहा गया है क्योंकि इसके आठ अङ्ग हैं यथा -

- | | | |
|----|-------------|---|
| 1. | शल्य | [Surgery] |
| 2. | शालाक्य | [Ophthalmology, Dentisry, Rhinology etc.] |
| 3. | कायचिकित्सा | [Medicine] |
| 4. | अगदतंत्र | [Toxicology, Medical Jurisprudence] |
| 5. | भूतविद्या | [Psychiatry, Microbiology] |

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

- | | | |
|----|-------------|---------------------------------------|
| 6. | कौमार भृत्य | [Paadiatrics] |
| 7. | रसायन | [Science of Rejuvenation, Immunology] |
| 8. | वाजीकरण | [Science of Aphrodisiac] |

इस अष्टाङ्ग आयुर्वेद के जनक काशिराज दिवोदास धन्वन्तरि को माना जाता है। प्रारंभिक आयुर्वेद मुख्यतः काष्ठौषधियों पर निर्भर था, परन्तु कालान्तर में इसमें धातुओं का भी भस्मादि के रूप में प्रयोग होने लगा।

जिस प्रकार मूल के आधार पर ही सम्पूर्ण वृक्ष का कलेवर आश्रित रहता है उसी प्रकार समग्र आयुर्वेद वाङ्मय भी इसके मूल सिद्धान्तों पर ही आश्रित है। प्राचीन आयुर्वेदज्ञों ने किसी भी सिद्धान्त की स्थापना यों ही कल्पना शक्ति के आधार पर नहीं की है प्रत्युत् किसी तथ्य की अनेक परीक्षकों द्वारा अनेक प्रकार से परीक्षा करके तर्कसंगत निष्कर्ष के रूप में उसे निष्पादित किया है। यद्यपि इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्राचीन काल में आज की तरह सर्वसुविधा सम्पन्न प्रयोगशालायें नहीं थी और न आज के सूक्ष्मातिसूक्ष्म वस्तुओं के अवलोकनार्थ उपकरण थे तथापि प्राचीन आयुर्वेद के मनीषियों ने प्रकृति की विशाल प्रयोगशाला में अपने विविध कौशल तथा गहन चिन्तन से जो भी सिद्धान्त स्थापित किये वे आज भी सार्थक तथा उपादेय हैं।

आज अनवरत अभिनव अनुसंधान करने वाला पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान भी प्रकृति के महान रहस्य की गुत्थियों को सुलझाने में प्रकारान्तर से आयुर्वेद का ही अनुसरण कर रहा है। आयुर्वेद में प्रतिपादित अनेक सिद्धान्त पाश्चात्य विज्ञानवादियों को भी आकर्षित कर रहे हैं तथा उन्हें प्रकारान्तर से अपने विज्ञान सम्मत ज्ञान को मानने के लिए बाध्य कर रहे हैं।

जिन तत्वों से सृष्टि की रचना हुई है, उन्हीं तत्वों से हमारे शरीर की रचना हुई है आयुर्वेद के मूल स्तम्भ पंचमहाभूत ही हैं। शरीर में वात, पित्त और कफ के आधार पर प्रत्येक दोष के पांच-पांच भेद किये गये हैं और उनके आधार पर शरीर में स्थान, गुण और कार्य का वर्णन कर इनके प्राकृत कर्म बताये गये हैं। यही प्राकृत कर्म जब सम रहते हैं तो स्वस्थता रहती है और इनके विषम हो जाने पर अस्वस्थता हो जाती है। इस चिकित्सा सिद्धान्त में भी पंचमहाभूतों की प्रधानता होने से क्षीण हुए महाभूतों की वृद्धि करना और जो बढ़े हुए हैं उनका हास करना और सम का पालन किया जाता है।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

निष्कर्ष

उपर्युक्त सभी प्रचलित औपचारिक चिकित्सा पद्धतियों का अध्ययन करने के पश्चात् हम यौगिक उपचार विधियों के संबंध में निस्संकोच कह सकते हैं कि -

- (1) योग के पास ठोस सैद्धान्तिक आदर्श हैं जो सामयिक परीक्षण और वैज्ञानिक सत्यापन में खरे उतरे हैं। प्राचीन भारत के ऋषियों एवं संतों ने योग की वैज्ञानिक आधार-शिला को बहुत पहले खोज लिया था जिसे मनोविज्ञान बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में खोज सका है।
- (2) योग मनोविज्ञान, सकारात्मक एवं आदर्शवादी दोनों प्रकार का विज्ञान है। यह स्वस्थ तथा अस्वस्थ दोनों प्रकार के व्यक्तियों को अपने आत्मोत्थान के लिए विधियां प्रदान करता है।
- (3) आहार, निद्रा, भय एवं मैथुन के महत्व को योग मूलभूत आवश्यकताओं एवं प्रवृत्तियों के रूप में स्वीकार करता है, परन्तु इनकी अभिव्यक्ति एवं पूर्ति के लिए संयम की भूमिका को महत्व देता है। ये संयम अष्टांग योग के प्रथम दो सोपानों- यम और नियम में बतलाये गये हैं, जो मन को तैयार करने के पूर्ववर्ती अभ्यास माने जाते हैं।
- (4) यौगिक अभ्यास शरीर-मन-आत्मा की पारस्परिक क्रिया पर आधारित हैं। इस प्रकार ये अभ्यास किसी एक पहलू को कम या ज्यादा महत्व दिये बिना सम्पूर्ण व्यक्तित्व के तीनों पहलुओं का ख्याल रखते हैं।
- (5) साधारण से प्रतीत होने वाले योगाभ्यासों का अभ्यासियों पर गहरा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ये अभ्यास अभ्यासियों के बिना किसी सजग प्रयास एवं ज्ञान के उनकी अन्तःस्रावी ग्रंथियों, तंत्रिका तंत्रों के साथ-साथ मस्तिष्क तरंगों एवं रक्त के रसायनों को भी प्रभावित कर शरीर के संस्थानों एवं अंगों के कार्यों को शुद्ध एवं व्यवस्थित रखते हैं।
- (6) योग प्रबन्धन, किसी बाह्य रसायन या धात्विक पदार्थ का शरीर में प्रवेश कराये बिना ही स्व उपचार का एक तरीका है। यह शल्य क्रिया एवं दवाओं पर होने वाले खर्च की बचत कराता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

अथ अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

१. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

२. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

३. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

४. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

५. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

६. अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि । अष्टादश ब्रह्मसूत्राणि ।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योग : नये युग की नयी संस्कृति : -

आधुनिक युग के परम योगाचार्य, अवधूत एवं पंचाग्नि साधना से तपःपूत परमहंस सत्यानंद सरस्वती जी ने योग को नये युग की नयी संस्कृति के रूप में परिभाषित किया है और उसे विश्व के हर देश, हर शहर और डगर तक पहुँचा कर उसकी सर्वश्रेष्ठता सिद्ध कर दी है; उन्होंने उसे शिक्षा के प्राथमिक स्तर से लेकर उच्चतम स्तरों तक प्रतिष्ठित कर विज्ञान की कोटि में भी समाहित कर दिया है. उन्होंने योग-विद्या के संबंध में जो मुख्य-मुख्य बातें कहीं हैं, इस संदर्भ में उनकी जानकारी भी अपेक्षित है-

स्वामी सत्यानंद जी के अनुसार योग के अभ्यास मुख्य 4 भागों में विभाजित हैं - कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग और ज्ञानयोग. चंचल स्वभाव वालों के लिए कर्मयोग उपयुक्त है, भावुक प्रकृति वालों के लिए भक्तियोग ठीक है. बुद्धिजीवियों के लिए ज्ञानयोग तथा आत्मिक वृत्ति वालों के लिए राजयोग अनुकूल होता है. राजयोग की अनेक उपशाखायें भी हैं- हठयोग, लययोग, कुण्डलिनी योग तथा मंत्र योग. इन सबके अलावा एक अन्य पद्धति भी है जिसे तंत्रयोग कहते हैं. यह तंत्रयोग इन सब योगों का महायोग है.

योग सुख को, आनन्द को पूर्ण बनाने का पथ है योग का लक्ष्य है- समाधि. ध्यान का प्रभाव है शान्ति. धारणा का प्रभाव है एकाग्रता. प्राणायाम का परिणाम है उन्नत मस्तिष्क. आसनो का प्रभाव है स्फूर्तिवान् स्वस्थ शरीर. नियम का परिणाम है जीवन का तरीका अथवा विज्ञान और यम का प्रभाव है जीवन की गुत्थियों को तोड़ना अथवा सुलझाना.

योग का लक्ष्य है- सजगता के सतत् प्रवाह का अनुभव करना. जीवन में सरलता का मतलब है. अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं और सीमित सुविधाओं के हिसाब से जीवन-निर्वाह करना. भौतिक जरूरतों के बढ़ते ही आध्यात्मिक व सामाजिक जीवन स्तर में अनेक जटिलतायें उत्पन्न हो जाती हैं इसलिए सीमित आवश्यकताओं में जिन्दगी बिताने की भरपूर कोशिश करनी चाहिए. योग व्यक्ति को उसकी व्यक्तिगत चेतना का विकास करने में सहयोग देकर परोक्ष रूप से सामाजिक ढाँचे को प्रभावित व प्रेरित करता है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

यह 'योग' शब्द संतुलन, एकता और समन्वय का सूचक है। शरीर, मन और आत्मा में सम्यक् संतुलन होना चाहिए। इस संतुल्य और एकता की भावना की अभिव्यक्ति पहले स्वयं अपने जीवन में होना चाहिए तब अपने साथ में अन्य लोगों के लिए उसे व्यवहार में लायें। योगमय जीवन जीने का मतलब है— अपने व्यक्तिगत जीवन के विभिन्न पहलुओं को संगठित करना, सुव्यवस्थित करना तत्पश्चात् घर-परिवार, समाज, देश और सम्पूर्ण विश्व को एक नयी योग-संस्कृति से संस्कारित करना।

मानव शरीर परमात्मा की एक सर्वश्रेष्ठ कृति है जिसे स्वस्थ व निरोग रखना प्रत्येक मनुष्य का प्रथम कर्त्तव्य है। स्वामी विवेकानन्द जी स्वास्थ्य के विषय में सारभूत सत्य को प्रगट करते हुए कहते हैं कि स्वस्थ शरीर में "स्वस्थ मन का विकास होता है।" शरीर एवं मन एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस सत्य को आयुर्वेदाचार्यों ने बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है— "शरीर में व्याधि उत्पन्न होती है तब मन में भी व्याधि होगी इसमें संशय नहीं है।" अतः यदि हम मन को स्वस्थ बनाना चाहते हैं तो शरीर को भी स्वस्थ बनाना आवश्यक है।

‘शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्’

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि के लिए सर्वतोभावेन शरीर का स्वस्थ तथा निरोग होना नितान्त आवश्यक है। रोगों से आक्रान्त शरीर के द्वारा कोई भी पुरुषार्थ सिद्ध नहीं किया जा सकता यह निश्चित है। अभिप्राय यह है कि स्वस्थ शरीर के द्वारा ही धर्म का आचरण करते हुए योगादि-आध्यात्मिक मोक्ष साधनाओं के द्वारा कैवल्य मोक्ष प्राप्त किया जाता है जिसे अंतिम पुरुषार्थ कहा गया है।

शास्त्रकारों ने मानव शरीर को व्याधियों का एक बड़ा भंडारगृह भी कहा है—

“शरीरं व्याधि मंदिरम्”

हमारा शरीर पंचतत्वों व माता-पिता के रजवीर्य से उत्पन्न हुआ है इसलिए इन सब तत्वों के गुण धर्म आदि का शरीर में होना स्वाभाविक है कार्यों में व्यतिक्रम हो जाने पर शरीर में रोग उत्पन्न हो जाना भी स्वाभाविक ही है केवल मनुष्य शरीर ही रोगी होता है, ऐसा नहीं है, पशुपक्षी भी बीमार होते हैं पर वे खाना छोड़ देते हैं, पूर्णतया उपवास करने और धूप में पड़े रहकर अज्ञात रूप से प्राकृतिक चिकित्सा करते हुए वे शीघ्र स्वस्थ हो जाते हैं।

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

आदि काल में मानव की यह मान्यता थी कि रोग दैव-प्रकोप, भूत-प्रेत और जादू आदि से होते हैं अतः वे उनकी वैसी ही चिकित्सा भी करते रहे हैं. धर्म ने पाप को रोग का मूल कारण बताया अतः व्रत, पूजा, प्रायश्चित, चिकित्सा का चलन हुआ. जंतर मंतर, ताबीज, टोना-टोटका और जादुई ईलाज भी प्रारंभ हुए. सारे विश्व में इनमें एकरूपता दिखाई देती है. यह मानव जीवन के विकास की आदिम अवस्था थी.

सभ्यताओं का विकास होने पर उपचार-पद्धतियों में भी परिवर्तन-हुए. चीन ने अपना दर्शन तैयार किया और उस आधार पर चिकित्सा पद्धति भी प्रारंभ की. उनके पास समृद्ध औषधि भंडार भी था. भारत ने वैदिक युग में ही उपचार के अनेक तरीके खोजे-जल, अग्नि, मंत्र और औषधियां. आगे सांख्य दर्शन के साथ त्रिदोष सिद्धान्त स्थापित हुआ. सप्तमूल धातु, पच्चीस तत्व, मर्म स्थान ढूंढे गये. रोग पहिचाने गये, उनके निदान में पांचों इन्द्रियों के उपयोग का उल्लेख हुआ. चरक और सुश्रुत जैसे महान चिकित्सकों ने समृद्ध चिकित्सा शास्त्र दिये. सुश्रुत तो विश्व के पहले सर्जन माने गये हैं. आयुर्वेद के पास शानदार औषधि भंडार था जिसमें वनस्पति, प्राणिज और खनिज औषधियां थी. वास्तव में आयुर्वेद एवं योग कोई चिकित्सा पद्धति नहीं हैं प्रत्युत् वे जीवन जीने के तरीके हैं.

जब भारत में महावीर और बुद्ध का आगमन हुआ, उस युग में ईसा पूर्व 460 में हिपोक्रेटिज का जन्म हुआ जिसे आधुनिक चिकित्सा का जन्मदाता कहते हैं. इसने निदान, इलाज और फलश्रुति की बात कही. रोग को सहज प्राकृतिक कारणों से होना बताया और कहा हर रोग का अपना स्थान और स्वभाव होता है. उसने प्राकृतिक चिकित्सा पर बल दिया. ठीक से रोगी का विवरण लिखने की प्रथा चलायी, उसकी लिखी शपथ आज भी चिकित्सा विज्ञान के स्नातक चिकित्सा-क्षेत्र में प्रवेश करने के पूर्व ग्रहण करते हैं.

रोग निवारण हेतु जैसा कि कहा जा चुका है, प्राचीन काल से ही भारत में विभिन्न चिकित्सा पद्धतियां प्रचलित हैं किन्तु वर्तमान समय में जीवन की जटिलतायें इतनी बढ़ती जा रही हैं कि मनुष्य विभिन्न शारीरिक व मानसिक रोगों से आक्रान्त हो रहा है. रोगों के विस्तार के कारण अनेक नई पद्धतियां भी सामने आ रही हैं. आधुनिक विज्ञान विश्लेषणात्मक है अर्थात् सूक्ष्म से सूक्ष्मता की ओर यात्रा चल रही है. यह विज्ञान का चमत्कार ही है कि आज ब्लड कम्पोनेंट युनिट के द्वारा रक्त के भाग जैसे आर बी.सी., कंसट्रेंट फ्रोजन

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्लाज्मा, प्लेनेट रिच प्लाज्मा आदि मशीन द्वारा अलग किये जा सकते हैं जिससे एक ही समय में एक बोटल रक्त चार मरीजों की जान बचा सकता है।

आधुनिक एलोपैथिक चिकित्सा विश्व व्यापी है। विश्व स्वास्थ्य संघ द्वारा मान्य भी है। विज्ञान ने आज अनेक रोगों का समूल नाश कर दिया है, लोगों को दीर्घ जीवन दिया है। किन्तु प्रत्येक चिकित्सा प्रणाली में कुछ गुण हैं तो दोष भी हैं। कुछ पद्धतियां ऐसी हैं जिनमें रोग तो शीघ्र ठीक हो जाते हैं किन्तु उनमें स्थायित्व नहीं रहता। कुछ पद्धतियां ऐसी हैं जिसके उपचार से निर्दिष्ट रोग तो ठीक हो जाता है पर दूसरा रोग पनप जाता है, कुछ चिकित्सा पद्धतियाँ ऐसी भी हैं जो रोगों के गुण दोषों को साम्यावस्था में लाकर स्थायी लाभ और आरोग्य प्रदान करती हैं। किन्तु इनमें सर्वोत्तम है योग जो बिना किसी औषधि और नुकसान के व्यक्ति के शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा, व्यक्तित्व तथा उसके एवं देश काल के व्यक्तित्व को भी प्रभावित एवं रूपान्तरित करता है। वह बिना किसी प्रतिक्रिया एवं व्यय के शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक लाभ प्रदान करता है। यह पद्धति रोगों तथा मनोविकारों के स्रोतों को नष्ट करती है, अतः वही रोग दूसरी बार शरीर तथा मन में उत्पन्न नहीं हो सकते; संकल्प-बल की वृद्धि के कारण यौगिक चिकित्सा रोग प्रतिकारक क्षमता को बढ़ाती है और मानव जीवन को--सब नीरोग हों। सब सुखी हों, सब समृद्ध हों, सबको परम शांति प्राप्त हो एवं सबके मंगल से यह वसुधा ही स्वर्ग के संसाधनों से आपूरित हो जाये, वसुधैव कुटुम्बकम् का यह दृष्टिकोण प्रदान करती है। इस दृष्टि से निश्चित ही योग नये युग की नयी संस्कृति के निर्माण का कार्य कर रहा है।

विश्व को भारत ने सबसे बड़ी चीज दी है और वह है ध्यान। ध्यान-योग 'योग' की पूर्णाहूति है, जिसका अंत 'समाधि' में होता है। यही ध्यान मनुष्य की चेतना को उत्प्रेरित करता है। ध्यान की अवस्था में जीव की चेतना बहिर्मुख जीवन से अंतर्मुख जीवन की ओर लौटती है और जब वह अंतर्मुख जीवन की ओर लौटती है तो उसको वहां जीवन की नवीन अनुभूतियां प्राप्त होती हैं। जीने की नई शक्ति प्राप्त होती है। विवेक, बुद्धि, भावना पर नियंत्रण करने की कला आती है।

ध्यान की गहरी अवस्था में मस्तिष्क अल्फा, बीटा, थीटा तरंगों का निर्माण करता है। इन तरंगों का उत्सर्जन तालबद्ध व क्रमिक रूप से होता है। ध्यान से मस्तिष्क अलग-अलग टुकड़ों में काम करना छोड़कर सुगठित और सम्मिलित रूप से कार्य करने लग जाता है। यही कारण है कि ध्यानभ्यासी

गहरी शांति और आनंद का अनुभव करता है साथ ही उसमें सजगता की भी वृद्धि होती है।

वास्तव में ध्यान का अभ्यास मस्तिष्क की गतिविधियों को निर्विघ्न बना देता है। यही बात इटजैक बेनटोव ने अपने प्रयोगों के आधार पर दर्शायी है उन्होंने ध्यान के समय मस्तिष्क से उत्सर्जित होने वाली तरंगों की जांच की। ध्यान से शरीर व मस्तिष्क के विभिन्न भागों के संबंधों में परस्पर सामंजस्य स्थापित होता है, शरीर में विभिन्न प्रणालियों, जैसे हृदय, धमनी और शिराओं से निःसृत तरंगों की तालबद्धता बढ़ती है। इन तरंगों में से कुछ विशिष्ट तरंगें खोपड़ी तक जाती हैं और खोपड़ी की आन्तरिक दीवारों से परावर्तित होकर मस्तिष्क को प्रभावित करती हैं और सम्पूर्ण मस्तिष्क की सूक्ष्म मालिश कर देती हैं। इससे सम्पूर्ण मस्तिष्क सुचारु रूप से कार्य करने लगता है।

ध्यान के द्वारा मस्तिष्क पर निम्नलिखित प्रमुख प्रभाव पड़ते हैं -

1. ध्यान शरीर के नर्वस सिस्टम को संतुलित और स्थिर करता है। ऐसा लगता है कि ध्यानाभ्यास नर्वस-सिस्टम की प्राकृतिक और स्वाभाविक प्रक्रिया को प्रेरित करता है। फलस्वरूप दिन भर के शारीरिक तत्वों व मानसिक तनावों के कारण होने वाली शक्ति-क्षय की वह पूर्ति कर देता है। ध्यान से तनावों द्वारा हुई क्षतिपूर्ति सामान्य दर की तुलना में कई गुना तीव्र होती है।
2. ध्यान द्वारा जो शिथिलीकरण होता है वह रुग्ण व कमजोर ऊतकों को शक्ति प्रदान करता है व उन्हें स्वस्थ करता है।
3. ध्यान द्वारा मोटर प्रणाली की संवेदना बढ़ती जाती है, व्यक्ति अधिक सजग हो जाता है। बाह्य क्रिया के विरोध में सामान्य अवस्था की अपेक्षा वह शीघ्र क्रियाशील हो उठता है।
4. ध्यान का अभ्यास इंद्रियों की ग्रहणशीलता व कार्यक्षमता को बढ़ा देता है।
5. ध्यान से बौद्धिक ग्रहणशीलता, समझदारी व स्मरणशक्ति भी बढ़ जाती है।
6. मानसिक शक्ति या संकल्प शक्ति बढ़ जाती है।

... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

... ..
... ..
... ..
... ..
... ..
... ..

7. ध्यान व्यक्ति को उसके कार्य के प्रति रुचि बढ़ाने में मदद करता है जिससे अपने कार्य व जीवन से वह आनंद तथा संतोष प्राप्त करता है.

जब हम कुछ समय तक ध्यान का अभ्यास करने में सफल होते हैं तो उपरोक्त प्रक्रियायें प्रारंभ हो जाती हैं. इस संदर्भ में भावनीत ध्यान के वैज्ञानिक आरेख प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किये जा चुके हैं. इस तरह ध्यान के नियमित अभ्यास से मस्तिष्क, मन, शरीर एवं सारे जीवन की क्रियाओं को नियंत्रित किया जा सकता है. योग की ये विधियां हमें उन समस्त अनुभवों और क्षमताओं को पुनः प्राप्त करा देती हैं जिन्हें हम पूरी तरह भूल चुके हैं. जब हमारे शरीर में व्याप्त सभी प्रणालियां सुचारु रूप से कार्य करने लग जायेंगी तब हमें अंतर्निहित सारी सुष्ठु शक्तियां अनायास ही प्राप्त हो जायेगी. अभी हम मस्तिष्क की पूरी क्षमता का दसवां हिस्सा ही प्रयोग में ला रहे हैं यदि पूरे मस्तिष्क को किसी तरह क्रियान्वित किया जा सके तो व्यक्ति यह जान सकेगा कि उसमें कितनी अद्भुत क्षमतायें और कितना ज्ञान विद्यमान है.

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि बालकों के व्यक्तित्व विकास के लिए योग के विभिन्न घटकों का अभ्यास अत्यंत आवश्यक है; क्योंकि शेष चिकित्सा या उपचार-पद्धति जहां मात्र रोगों तथा विकारों का उपशमन करती हैं, वहां आसन, प्राणायाम और ध्यान एक नये व्यक्तित्व, एक नये मानव और एक नयी संस्कृति के निर्माण में सक्षम हैं.

अध्याय : 5

उपसंहार.

- 5.1. वर्तमान शिक्षा-पद्धति में योग के समावेश की प्रासंगिकता.
- 5.2. प्रस्तुत शोध-कार्य का प्रदेश.
- 5.3. परिसीमाये।
- 5.4. सुझाव।

5.1 वर्तमान शिक्षा पद्धति में योग के समावेश की प्रासंगिकता

विचार, व्यवहार, कार्य, संस्कार हमारे जीवन के पत्र, फूल और फल मात्र हैं, जीवन की जड़ें कहीं और हैं और जड़ों में हमने आज तक पानी नहीं डाला है; सम्भवतः यही कारण है कि मानव, समाज, देश तथा विश्व में अशांति एवं तनाव व्याप्त है. रोगों का अंत दिखाई नहीं देता. समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं, जीवन में अराजकता फैल रही है. जीवन की इस जड़ को सुदृढ़ बनाने के लिए जिस जल का उपयोग किया जाता है उसका नाम भारत के मनीषियों ने दिया है ' योग '.

योग विज्ञानों का विज्ञान है, वह शारीरिक एवं मानसिक अनुशासन है, उसे एक सांस्कृतिक जीवन-पद्धति भी कहा जाता है. ' योग ' शब्द का अर्थ होता है ' जोड़ना '. दार्शनिक व धार्मिक प्रकृति के लोग योग को दिव्य सत्ता या ईश्वर की अनुभूति प्राप्त करने तथा व्यक्तिगत चेतना को विश्व-चेतना से जोड़ने का एक साधन मानते हैं. नारद के भक्ति सूत्रों में योग को 'परम चेतना' की अनुभूति के रूप में परिभाषित किया गया है. पतंजलि के योगसूत्रों में योग को अपने व्यक्तित्व की गहराई में और अपने भीतर प्रसुप्त शक्तियों और गुणों को जागृत करने के लिए एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया गया है.

योग की वास्तविक परिभाषा है - जीवन तथा समाज में सामंजस्य और पूर्णता लाने का उपक्रम. महर्षियों के अनुसार योग शारीरिक, मानसिक अवस्थाओं एवं शक्ति-क्षेत्रों (जिसमें हम रहते, कार्य करते, सोचते और चलते-फिरते हैं तथा जो हमारे भीतर भी प्राणशक्ति के रूप में अभिव्यक्त होते हैं) के बीच सामंजस्य स्थापित करता है या उन्हें परस्पर जोड़ता है. हमारे जीवन में दो चीजें हैं- एक है चेतना और दूसरी है शक्ति. यही दोनों मूल सृजनात्मक शक्तियाँ हैं जिनसे सृष्टि का शक्ति-रूप में विकास होता है.

महर्षि पतंजलि योगदर्शन के प्रारंभ में कहते हैं कि अनुशासन की प्रक्रिया द्वारा जिसे योग कहा जाता है, हम अपने मानसिक विकारों को नियंत्रित करने में सक्षम हो जाते हैं. दूसरे शब्दों में " चित्त वृत्ति निरोधः " अर्थात् चित्त की

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

वृत्तियों का निरोध करना ही योग है. “तदा द्रष्टुः स्वरूपे अवस्थानम्” अर्थात् जब चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है तब द्रष्टा (आत्मा) की अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है. अर्थात् वह कैवल्य अवस्था को प्राप्त हो जाता है.

जीवन को अनुशासित और मनोविकारों को दूर करने के पश्चात् हमें अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होता है, यह वास्तविक स्वरूप है ईश्वर का. ईश्वर की यह सत्ता अपरिवर्तनशील, शाश्वत और सत्य है. जब हमारी आस्था, हमारा विश्वास भौतिकता से प्रभावित होता है तब आन्तरिक द्वन्द्व होते हैं, मनोविकार उत्पन्न होते हैं अतः हमारा यह प्रयत्न होना चाहिए कि हमें निरंतर अपने लक्ष्य का ध्यान रहे और हमारा लक्ष्य है पूर्णता की प्राप्ति एवं कुशलतापूर्वक दैनिक जीवन के कार्यों का संपादन करना. दूसरे शब्दों में चेतना का विस्तार और शक्ति को विकसित करना योग का मूल प्रयोजन है. इस प्रकार योग एक सार्वभौम सत्य है. अभी तक भारत में और विदेशों में भी विभिन्न बीमारियों की रोकथाम के लिए योग के विभिन्न अभ्यासों को लेकर अनेक शोध कार्य हो चुके हैं तथा अनेक शोध कार्य जारी भी हैं. बच्चों को लेकर उनकी एकाग्रता और मनोविकारों के उपचार इत्यादि पर भी शोध हो रहे हैं किन्तु बालक के सर्वांगीण विकास पर योग का क्या प्रभाव पड़ता है ? इस विषय पर शोध कार्य सीमित हैं.

प्रस्तुत शोध प्रबंध को 5 अध्यायों में विभक्त किया गया है. प्रथम अध्याय में भारत में योग की परम्परा और उसके स्वरूप-विश्लेषण पर प्रकाश डाला गया है. योग एक विशद विषय है और उस पर अब तक उसके सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्षों पर विश्व स्तर पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है इसलिए इस विषय की अत्यधिक गहराई में न जाते हुए इस अमूल्य धरोहर का मानव समाज के लिए क्या योगदान है, प्रस्तुत अध्याय में इसी पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है.

योग की उत्पत्ति परम चेतना के प्रतीक शिव के द्वारा मानी जाती है. अपनी प्रथम शिष्या पार्वती को शिवजी ने 84,00,000 आसन सिखाये थे जो उतनी ही योनियों का प्रतिनिधित्व करते हैं. अब इनमें से 84 आसन ही मुख्य रूप से प्रचलन में रह गए हैं.

दार्शनिकों में योग के आदि उपदेष्टा को लेकर अनेक मतभेद हैं किन्तु महर्षि पतंजलि की साधना-प्रणाली का सभी आचार्यों ने अनुमोदन किया है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

योग के स्वरूप-विश्लेषण के अन्तर्गत चित्त वृत्ति क्या है, वृत्तियाँ कितने प्रकार की हैं, अष्टांग योग क्या है, पंचकोष, योग के भेद इत्यादि का भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत प्रबंध के द्वितीय अध्याय में “ योग का बाल विकास से संबंध ” विषय पर प्रकाश डाला गया है। किसी भी राष्ट्र का आधार है - समर्थ एवं सशक्त भावी पीढ़ी का निर्माण जो संस्कारवान हो। मनुष्य के जीवन में प्रकृति एवं संस्कारों का महत्वपूर्ण स्थान है। बालक में बचपन से ही घरेलू वातावरण के आधार पर संस्कारों का बीजारोपण प्रारंभ हो जाता है। तत्पश्चात् जब वह बड़ा होकर विद्याध्ययन करने जाता है और सामाजिक गतिविधियों एवं अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है, तब उनके संस्कारों का भी उसकी मनोदशा पर प्रभाव पड़ता है।

किसी भी भवन की संरचना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण उसकी आधारशिला होती है, मानव-जीवन की आधार-शिला है- बाल्यावस्था और किशोरावस्था, इसलिए कहा जाता है कि बच्चे एक पिघलने वाली धातु की तरह होते हैं, हम उन्हें जैसा चाहे वैसा ढाल सकते हैं।

बच्चे बहुत ही अनुकरणशील होते हैं, वे बड़े ही जिज्ञासु, बहादुर एवं निर्भय होते हैं। वे अपनी आलोचना से भी नहीं डरते। हम बच्चों के समक्ष अच्छा जीवन, अच्छा मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य तथा उच्च आदर्श प्रस्तुत कर उन्हें उत्तम और आदर्श नागरिक बना सकते हैं।

बालक का विकास गर्भकाल से लेकर मृत्यु पर्यन्त चलने वाली एक निरन्तर प्रक्रिया है। बाल्यावस्था में विकास की प्रक्रिया तीव्रतर होती है। बालक का यह विकास क्रमशः वंशानुक्रम और वातावरण इन दो तथ्यों से प्रभावित होता है।

बीज रूप में बालक माता-पिता के जिन गुणों, विशेषताओं तथा संस्कारों को प्राप्त करता है वही वंशानुक्रम है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि बालक जन्म से ही अपने पूर्वजों की छाप लेकर पैदा होता है। यह समानता केवल शारीरिक रचना तक ही सीमित नहीं होती अपितु अन्य मानसिक उपलब्धियों जैसे बुद्धि, रुचि इत्यादि के रूप में भी पायी जाती है।

वैज्ञानिकों का कथन है कि आनुवंशिकता से दो प्रकार के गुण प्राप्त होते हैं। इनमें से कुछ गुण अव्यक्त होते हैं और कुछ व्यक्त। ये दोनों प्रकार के गुण पिता से पुत्र के क्रमानुसार आने वाली संतान में अवतरित होते रहते हैं। परिस्थितियों के प्रभाव से कभी व्यक्त गुण प्रसुप्त और कभी प्रसुप्त गुण व्यक्त हो जाते हैं। इसलिए देखा जाता है कि अनेक बार कई पीढ़ियों के बाद भी पूर्वजों के गुण-दोष संतान में दिखाई देने लगते हैं। इस प्रकार बालकों की बुद्धि, चरित्र तथा विकास पर वंश-परम्परा का प्रभाव पड़ता है।

बालक के विकास को प्रभावित करने वाला दूसरा तत्व है वातावरण। वातावरण उन समस्त आन्तरिक तथा बाह्य शक्तियों, प्रभावों और परिस्थितियों का सामूहिक रूप से वर्णन करता है जो जीवधारी के जीवन, स्वभाव, व्यवहार, अभिवृद्धि, विकास तथा प्रौढ़ता पर प्रभाव डालते हैं। मानव मन स्वच्छ श्यामपट के समान है। हमारे निर्मल मन पर वातावरण संबंधी अनुभवों के कारण अनेक प्रकार के संस्कार पड़ जाते हैं। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि बालक की आनुवंशिकता तथा उसके बचपन का वातावरण इस बात का निर्धारण करते हैं कि वे आगे जीवन में क्या बनेंगे।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बालक का विकास न तो पूर्ण रूप से वातावरण पर निर्भर करता है और न केवल वंश-परम्परा पर। वंशानुक्रम जहां व्यक्ति को जन्मजात शक्तियां प्रदान करता है, वहीं वातावरण उसे इन शक्तियों की सिद्धि के लिए सुविधायें और अवसर प्रदान करता है।

बालक के सर्वांगीण विकास का अर्थ है उसके शारीरिक, क्रियात्मक, संवेगात्मक, सामाजिक, भाषिक, मानसिक, चारित्रिक, बौद्धिक, सृजनात्मकता इत्यादि का संतुलित रूप से विकसित होना।

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में मन की ही अभिव्यक्ति होती है। मन विचार करने का साधन है किन्तु योग में मन का अत्यधिक महत्व है। योग में मन को सिर्फ सोचने का ही एक साधन नहीं माना जाता, बल्कि वह सतत एवं समरूप चेतना है। मन जब एकाग्र हो जाता है तो वह बहुत शक्तिशाली हो जाता है। जिस प्रकार पदार्थ को लेकर उसे विखंडित करते हैं तो अंततोगत्वा उससे अणुशक्ति पैदा हो जाती है, उसी प्रकार प्राणायाम, ध्यान आदि के द्वारा मन जब शुद्ध हो जाता है और केवल मन रह जाता है, उसमें संसारी इच्छायें और

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

आसक्तियां नहीं रह जाती, तब वह मूल शक्ति या ऊर्जा के रूप में प्रकट होता है। यही वह विधि है जिससे मन क्रियाशील और निर्माणकर्त्ता बन जाता है।

जिस प्रकार स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है उसी प्रकार स्वस्थ मन ही व्यक्ति को स्वस्थ रख सकता है। योग का एक मात्र प्रयोजन है मन पर नियंत्रण। योग का एक मात्र लक्ष्य है- मनोजय। योग के इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए आज की समस्याग्रस्त युवा पीढ़ी को कैसे इस दलदल से निकालकर आनन्ददायक एवं स्वस्थ जीवन जीने की ओर प्रेरित किया जा सकता है यही हमारे शोध का मुख्य प्रयोजन है क्योंकि यौगिक तकनीकें बालक को अपनी भावनाओं और इच्छाओं का शिकार होने की अपेक्षा अपने मन का स्वामी बनने की सामर्थ्य देती हैं।

योग विशेषज्ञ कहते हैं कि बच्चों की वास्तविक योग-शिक्षा छह-सात वर्ष की उम्र में ही शुरू हो जानी चाहिए, जब पीयूष ग्रंथि अपने स्रोत को बंद करने के करीब हो तब मुख्य रूप से सूर्य नमस्कार, नाड़ी शोधन प्राणायाम व गायत्रीमंत्र के जप का अभ्यास बच्चे की अन्तर्ग्रहण क्षमता को बढ़ाने में विशेष सहायक होता है। इन तीनों अभ्यासों का वैज्ञानिक आधार भी है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास मेरुदंड के लिए आवश्यक है। मेरुदंड से सभी नाड़ियों का संबंध रहता है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से मेरुदंड की सभी नाड़ियों में ऊर्जा का प्रवाह होता है, जिसका असर मस्तिष्क पर पड़ता है। मस्तिष्क के जो सुषुप्त केन्द्र हैं वे नाड़ी स्पन्दन से जागृत होते हैं जिसके कारण बुद्धि तीक्ष्ण होती है और स्मरण-शक्ति, एकाग्रता आदि अवस्थाओं में वृद्धि होती है।

दूसरा अभ्यास है नाड़ी-शोधन-प्राणायाम। हमारे मस्तिष्क के दो भाग हैं जिसको दाया गोलाध्व और बाया गोलाध्व कहते हैं। एक भाग से तार्किक, रैखिक, क्रमिक और गणनात्मक क्रियायें होती हैं और दूसरे भाग की जागृति से कलात्मक अन्तर्ज्ञानात्मक क्रियायें होती हैं। जब बच्चा नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास करता है तब उसके मस्तिष्क के दोनों भागों में संतुलन आता है जिससे ग्राह्य शक्ति में तीव्रता आती है। इस कारण बालक किसी भी प्रकार की शिक्षा को बहुत ही सहज रूप में ग्रहण कर लेते हैं।

तीसरा साधन है गायत्री मंत्र। गायत्री मंत्र से जो ध्वनि या स्पन्दन उत्पन्न होते हैं वे शरीर में स्थित तत्वों को जाग्रत करने में सहायक होते हैं 7-8 वर्ष के बच्चों का शारीरिक विकास एक सीमा तक पहुंच चुका होता है। तब बौद्धिक, भावात्मक

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

और मानसिक विकास के लिए इन तीन अभ्यासों को नियमित रूप से करने से उनमें व्यक्तित्व का निर्माण सही ढंग से होता है.

इस प्रकार यदि योग को शिक्षा में अन्य विषयों की तरह ही स्थान दिया जाता है तो बालक की अन्तर्निहित प्रतिभा के विकास में निश्चित रूप से सफलता मिलेगी क्योंकि योग स्वयं में एक परिपूर्ण शिक्षा है.

5.2 प्रस्तुत शोध-कार्य का प्रदेय

प्रस्तुत प्रबंध के तीसरे अध्याय में नियमित योग शिक्षा एवं योग शिक्षा से वंचित बालकों के विकास से संबंधित सांख्यिकीय विवरण प्रस्तुत किया गया है. इस अध्याय में प्रतिदर्शों के चयन संबंधी जानकारी भी दी गई है. 6 से 10 वर्ष तथा 11 से 16 वर्ष के प्रतिदर्शों को प्रस्तुत शोध-कार्य के लिए चयन किया गया है.

इस अध्याय में प्रश्नावली का प्रारूपण किस प्रकार किया गया है, यह भी दर्शाया गया है, साथ ही सांख्यिकीय विवरण का विश्लेषण भी किया गया है प्रश्नावली में दिनचर्या संबंधी, खानपान संबंधी, यम-नियमादि संबंधी, शारीरिक विकास संबंधी, सामाजिक विकास संबंधी, शारीरिक विकास संबंधी, संवेगात्मक विकास संबंधी तथा यौगिक क्रियाओं से संबंधित प्रश्नों को प्रस्तुत किया गया था; इसी क्रम में उपलब्ध सांख्यिकीय विवरण और उसका विश्लेषण किया गया है.

संदर्भित प्रश्नावली दो प्रकार के प्रतिदर्शियों से भराई गई थी; प्रथम वे जिन्हें नियमित रूप से योग की कुछ क्रियायें कराई जा रही हैं, और दूसरे वे बच्चे जो योग की उन क्रियाओं से पूरी तरह अनभिज्ञ हैं. इस तरह हमें दो प्रकार के डेटा प्राप्त हुए; जिनका तुलनात्मक अध्ययन और सहसंबंधन भी प्रस्तुत शोध-प्रबंध में दिया गया है. तुलनात्मक अध्ययन के अनेक आरेख और तालिकाएं भी प्रस्तुत की गई हैं.

उक्त आरेखों और तालिकाओं को एक दृष्टि से देखने पर ही पता चल जाता है कि योग करने वाले विद्यार्थियों के प्राप्तांक प्रतिशत योग न करने वाले विद्यार्थियों की तुलना में श्रेष्ठ हैं; जो इस बात की साक्षी देते हैं कि विद्यार्थियों के जीवन पर योग की विभिन्न क्रियाओं का प्रभाव निस्संदेह रूप में पड़ता है।

तुलनात्मक अध्ययन एवं सहसंबंधन से स्पष्ट है कि योग करने वाले एवं योग न करने वाले 6 से 10 वर्ष के बच्चों के शारीरिक तथा मानसिक विकास में कोई विशेष अंतर परिलक्षित नहीं होता पर उनके दैनिक कार्य-कलापों और परीक्षा के प्राप्तांकों में निश्चित रूप से यह अंतर स्पष्ट दिखाई देता है। योग करने वाले बालकों में आत्मसम्मान, साहस, दृढ़ता, जोखिम उठाने की क्षमता, चुनौतियों का सामना करने का इरादा, एकाग्रता तथा विषयों का सामान्य ज्ञान अपेक्षाकृत अधिक पाया गया; कार्य में फुर्ती और चेहरे पर चमक भी उन्हें एक अलग श्रेणी प्रदान करती है।

किशोर बालक-बालिकाओं में अर्थात् 11 वर्ष से लेकर 16 वर्ष के विद्यार्थियों में यह अंतर तो एक विभाजक रेखा के रूप में हमारे समक्ष आता है और ऐसा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि यदि योग न करने वाले विद्यार्थियों को नियमित रूप से योग की कुछ क्रियायें कराई जातीं तो उनका व्यक्तित्व-निर्माण नये ढंग से होता, उसमें एक समन्विति होती। आत्मनिष्ठा के साथ शिक्षा के अन्य गुणों का विकास सुसंगठित ढंग से होता; उनके दैनिक जीवन के कार्य-कलापों में जो थोड़ी बहुत अस्त-व्यस्तता दिखाई देती है, वह या तो कम होती या पूरी तरह समाप्त हो जाती; व्यक्तित्व का परिमाण केवल परीक्षा में प्राप्तांकों से नहीं देखा जाना चाहिए; व्यक्तित्व, उठने-बैठने, बोलने, चलने, कार्य करने, खेलने-कूदने, विभिन्न पाठ्यतर गतिविधियों में भाग लेने, रचनात्मक कार्यों आदि के द्वारा भी व्यक्त होता है; योग की क्रिया करने वाले विद्यार्थियों में ये सभी कार्य संयत हैं और जीवन की आंतरिक ऊर्जा को प्रगट करते हैं, पर योग की क्रियाओं की जानकारी से रहित विद्यार्थियों में ये सारे कार्य विश्रृंखलित होते हैं, विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों में ऐसा कुछ नहीं होता जिसके माध्यम से विद्यार्थियों की इस प्रकार की गतिविधियों पर नियंत्रण किया जा सके या उन्हें एक समुचित दिशा-निर्देश दिया जा सके अतः बालकों के पाठ्यक्रम में योग-शिक्षा का समावेश आवश्यक है।

तुलनात्मक अध्ययन और सांख्यिकीय सह-संबंधन का यही परिणाम है कि बालकों एवं किशोरों के जीवन-चक्र को संयमित ढंग से विकासशील करने के मूल में योग की निस्संदेह महत्वपूर्ण भूमिका है। योग को विज्ञानों का विज्ञान

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

कहा जाता है, उसे कौशलपूर्वक कार्य करने की विद्या और सम्यक् जीवन जीने की शैली भी कहा गया है जो उसकी सही व्याख्यायें हैं. योग का महत्व इसी तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि आज विश्व के सभी उन्नत देशों की शिक्षा-व्यवस्था में योग को समुचित महत्व दिया जा रहा है.

प्रस्तुत प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में बाल विकास पर योग का क्या प्रभाव पड़ता है, इस विषय पर प्रकाश डाला गया है. यह सर्वविदित तथ्य है कि निश्चित रूप से बालकों के विकास पर योग का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है. यही कारण है कि आज विश्व स्तर पर सर्वत्र, सभी विकासशील और पिछड़े देशों में भी योग को शिक्षण-पद्धति का आवश्यक अंग बनाने की मांग की जा रही है क्योंकि अब मनुष्य ने यह जान लिया है कि भौतिकता की इस अंधी दौड़ में जीने के लिए, स्वयं को तनाव मुक्त रखकर स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए एक संजीवनी की आवश्यकता है और वह संजीवनी है योग.

इस अध्याय में बालकों की कुछ प्रमुख समस्याओं पर भी प्रकाश डाला गया है. समस्याओं के मूल में जाकर उनका समाधान करने से अपेक्षाकृत अधिक लाभ होते हैं. सामान्यतः सात से बारह वर्ष की आयु के बीच सभी बालकों में एक प्रकार का असंतुलन पाया जाता है. उनका शारीरिक और मानसिक विकास एक साथ परिपक्व नहीं हो पाता. कभी शारीरिक विकास की गति तेज होती है तो कभी मानसिक विकास की. इन्हीं दोनों विकासों के बीच तालमेल का अभाव ही विभिन्न समस्याओं का मूल कारण है और इनके मध्य योग की विभिन्न क्रियायें संतुलन एवं सामंजस्य स्थापित करती हैं.

भारत में योग-चिकित्सा अनादिकाल से प्रचलन में है; योगाचार्यों और चिकित्सकों का मत है कि 80 प्रतिशत से अधिक शारीरिक और मानसिक रोगों का मुख्य कारण व्यक्ति का उसका अपना मन है. शरीर के रोग मन को प्रभावित करते हैं और मन के रोग शरीर को और इन दोनों से मुक्ति का सीधा सरल उपाय है— यौगिक विधियों का अभ्यास. इसीलिए महर्षि पतंजलि ने योग को चित्त-वृत्तियों का निरोध और आत्म-अनुशासन की संज्ञा दी; गीता में श्रीकृष्ण ने उसे कुशलतापूर्वक निष्काम कर्म और समत्व भावना के रूप में परिभाषित किया. उन्होंने योग का अंतिम लक्ष्य मोक्ष या निर्वाण निरूपित किया पर अर्जुन को जीवन के महाभारत में परम योगी बनने का भी परामर्श दिया क्योंकि एक सच्चा योगी ही जीवन के समस्त रोगों और शोकों पर विजय प्राप्त कर सकता है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

समाधि की परम अवस्था अथवा चेतना के शीर्ष बिन्दु तक पहुँचने के लिए साधक को यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आदि के मार्गों से आगे बढ़ना होगा किन्तु आधुनिक युग में परम योगाचार्य महर्षि महेश योगी ने भावातीत ध्यान की पद्धति के माध्यम से जीवन के संघर्षों पर विजय प्राप्त करने का एक सुगम मार्ग अन्वेषित किया है। महर्षि पतंजलि जहाँ योग के द्वारा चित्त-वृत्तियों के निरोध की बात करते हैं। वहाँ महेश योगी जी भावों से ऊपर उठ जाने का मार्ग प्रशस्त करते हैं; आधुनिक-शिक्षा-व्यवस्था को सकारात्मक बनाने और विद्यार्थियों की बहुमुखी समस्याओं के निराकरण में आज विश्व स्तर पर इस पद्धति का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा रहा है।

विश्व के हजारों वैज्ञानिकों ने भावतीत ध्यान पर शोध-कार्य भी किए हैं; उनमें से कुछ के आरेख प्रस्तुत शोध प्रबंध में भी दिए गये हैं। मुख्यतः इस विधि के द्वारा मानसिक तनावों से व्यक्ति को त्वरित लाभ होता है। नियमित अभ्यास से साधक का मन तो निर्मल हो ही जाता है, उसका आत्मनियंत्रण इतना अधिक विकसित हो जाता है कि वह अपने शरीर के भार को भी सूक्ष्म बना सकता है और उस हल्केपन के कारण ध्यान की स्थिति में पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से भी ईशत् मुक्ति प्राप्त कर लेता है। इस साधना में व्यक्ति की श्वास, नाड़ी और मन तथा विचारों की गति भी एकदम कम हो जाती है और साधक या छात्र पूर्णतः विश्राम एवं परम शांति की मुद्रा में पहुँच जाता है। फलतः उसका शरीर, मन, बुद्धि और अहं भी सारे अभावों, रोगों और कमियों अर्थात् उत्तेजना, आक्रामकता, विरोध, अवसाद, जड़ता, आलस्य, क्रानिक रोगों आदि से मुक्त होकर सक्रिय तथा सकारात्मक स्थिति की ओर उन्मुख हो जाता है; निरोग होने के लिए व्यक्ति को केवल एकाध घंटे नियमित अभ्यास की आवश्यकता होती है; दवाइयों के प्रयोग की नहीं।

आधुनिक युग के ही एक दूसरे परमयोगी तथा पंचवर्षीय पंचाग्नि जैसी गहन साधना से तपः पूतः महान अवधूत, परमहंस सत्यानंद जी सरस्वती ने मानव जीवन के तमाम रोगों एवं तनावों से मुक्ति के लिए योग-निद्रा, अंतर्मौन, चिदाकाश-धारणा, पवन मुक्तासन आदि यौगिक तथा तांत्रिक पद्धतियों का विकास किया है और उनके संप्रभावों को वैज्ञानिक प्रयोगों की कसौटी पर कसकर उन्हें विश्व के समक्ष एक नयी संस्कृति के रूप में रखा है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में प्रमुख आसनों, प्राणायामों आदि के साथ उपर्युक्त उपचारात्मक विधियों की प्रमुख विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है एवं यह प्रतिपादित किया गया है कि आज के युग में शिक्षा को जीवन का

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

अंग बनाने के लिए और भौतिक युग के अभिशापों से बालकों तथा किशोरों को बचाने के लिए उन्हें इन सबका ज्ञान देना एवं नियमित अभ्यास कराया जाना अपरिहार्य है क्योंकि विभिन्न विषयों के अध्यापन-कार्य में ऐसा कुछ नहीं है जो बौद्धिक विकास को छोड़कर सन्तुलित व्यक्तित्व-निर्माण के कार्य में सहयोगी बन सके।

मानव जीवन पर योग के प्रमुख संप्रभाव -

समग्रतः मानव जीवन पर योग के संप्रभावों को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :-

1. आसनों के अभ्यास से आन्तरिक अंगों की मालिश होती है और उनका विकास होता है.
2. आसनों द्वारा रक्त-संचार में सुधार होता है.
3. आसनों द्वारा स्नायु संस्थानों को शक्ति प्राप्त होती है.
4. प्राणायाम के अभ्यास से श्वसन प्रणाली में सुधार होता है और शारीरिक संस्थानों में नवीन प्राण-शक्ति का संचार होता है.
5. योग के विभिन्न अभ्यासों जैसे- आसन, प्राणायाम, षट्कर्म-जलनेति, शंख प्रक्षालन, कुंजल क्रिया इत्यादि से शारीरिक विकारों का निष्कासन होता है.
6. योग में शिथिलीकरण की वैज्ञानिक विधियों जैसे - शवासन, योगनिद्रा भावातीत ध्यान आदि द्वारा मन एवं शरीर को शांति और विश्राम मिलता है.
7. अंतर्मन के अभ्यास योग से मन के विकार जैसे चिंता, तनाव, भय, विक्षिप्तता तथा अन्य प्रकार के निराशाजनक तत्व समाप्त हो जाते हैं अतः उनके निष्कासन से जीवन में असीम सुख और शांति का अनुभव होता है.
8. यौगिक क्रियाओं का प्रभाव एक साथ शरीर और मन दोनों पर पड़ता है. इसलिए योग क्रियायें व्यापक रूप से योगोपचार करने हेतु प्रभावकारी हैं. यौगिक क्रियाओं द्वारा शरीर को सुन्दर, सुगठित और स्वस्थ स्थिति में रखने हेतु मदद मिलती है. दूसरे शब्दों में अधि-व्याधि की रोकथाम करने में योग एक बहुमूल्य औषधि का भी कार्य करता है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

9. आठ वर्ष की उम्र नियमित रूप से आसन, प्राणायाम आदि प्रारंभ कराने के लिए एक आदर्श अवस्था होती है। इससे बालकों का हृदय व श्वसन संस्थान भलीभांति प्रशिक्षित होता है। उनकी कार्यक्षमता, दक्षता और आयु में वृद्धि होती है। जीवन की भिन्न अवस्थाओं में हृदय और श्वसन तंत्र की प्रतिरोधक शक्ति और सहनशीलता का स्तर ऊंचा बना रहता है। इसी अवस्था में हृदय व फेफड़ों के मूल में लिपटे लिफाएड नामक तंतु कड़े होने लगते हैं। आगामी जीवन के लिए व्यक्ति की प्रेरणाओं और प्रतिक्रियाओं, उसकी संवेदनशीलता आदि का निर्धारण भी इसी अवस्था में होता है।
10. सूर्यनमस्कार, नाडीशोधन प्राणायाम तथा भ्रामरी प्राणायाम के नियमित अभ्यास द्वारा बालकों की प्रतिरोधक शक्ति जीवन भर स्वस्थ बनी रहती है। ऐसा बालक जीवन की हर परिस्थिति में उपयुक्त प्रतिक्रिया द्वारा परिस्थितियों से अनुकूलन स्थापित करता है। उसकी स्मरण-शक्ति भी फोटोग्राफिक रूप में विकसित होती है तथा वे आगत घटनाओं एवं परिस्थितियों का भी सही-सही अनुमान लगाने में सक्षम हो जाते हैं।
11. अपने जीवन की परिस्थितियों से तालमेल न बन पाने के कारण, प्रतिरोधकता में न्यूनता आ जाने के कारण आधुनिक समाज में अनेक बीमारियों की भरमार देखने में आती है, जिनका एकमात्र सीधा सरल उपचार है, प्रतिदिन अधिकतम आधे घंटे का समय यौगिक अभ्यास के लिए निकालना।
12. जो बच्चे आठ वर्ष की आयु से योगाभ्यास प्रारंभ करते हैं उन बच्चों में यौन परिपक्वता व अन्य परिपक्वताएँ कुछ ठहरकर आती हैं, बड़े होने पर वे जिज्ञासु, कुशाग्र बुद्धि और संवेदनशील वयस्क बनते हैं।

विश्व के वैज्ञानिकों ने भी अब स्वीकार किया है कि भावात्मक संतुलन, मानसिक शांति तथा स्वस्थ शरीर के लिए योग ही सर्वोत्तम प्रणाली है। यह प्रणाली प्राकृतिक शक्तियों के साथ मन व शरीर को सुचारु रूप से कार्य करने को प्रोत्साहित करती है। योग शरीर की प्रकृति के साथ कार्य करता है, उसके विरोध में नहीं, किन्तु योग का प्रयोजन केवल रोग-चिकित्सा नहीं है— योगाभ्यास द्वारा हम अपने शारीरिक अंगों व मानसिक रचना को संतुलित करते हैं और इस तरह अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण कर कर्म-कौशल के द्वारा जीवन की हर स्थिति में सफलता की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। योग के नियमित अभ्यास का अर्थ जीवन से पलायन नहीं प्रत्युत् जीवन के महाभारत में विजय प्राप्त करने के लिए तैयार होना है।

5.3 परिसीमायें

प्रस्तुत शोध प्रबंध के पांचवे अध्याय में शोध कार्य के निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है। निष्कर्ष निश्चित रूप से सकारात्मक हैं तथा 400 विद्यार्थियों से एकत्र डेटा को वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषित करने के बाद उन्हें प्राप्त किया गया है, अतः विश्वसनीय हैं किन्तु इन निष्कर्षों का क्षेत्र सीमित है; वे केवल नगरीय क्षेत्रों के विद्यार्थी वर्ग तक सीमित हैं अतएव उनका सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता।

नगरों में रहने वाले बालकों पर वहां के प्रबुद्ध एवं परिवेशगत प्रभाव निस्संदेह सक्रिय रहते हैं, भले ही वे योग की विधियों से अपरिचित हों, यदि यही अध्ययन नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले बालकों को प्रतिदर्श बनाकर किया जाता तो बालकों के व्यक्तित्व विकास पर योग का प्रसाद और अधिक व्यापक रूप से परिलक्षित होता।

प्रादर्शों का चयन करते समय न तो बालकों के लिंग पर ध्यान दिया गया है और न उनकी जातिगत विशेषताओं पर। यदि किसी वर्ग या जाति के बालकों को केन्द्र में रखकर भी योग के प्रभावों का अध्ययन किया जाता, तब भी हम योग करने वाले एवं न करने वाले बालकों के व्यक्तित्व विकास में एक स्पष्ट विभाजक रेखा देख सकते थे।

हमारे योग की क्रियायें करने वाले प्रादर्श भी सामान्य विद्यालयों में अध्ययनरत थे, जहां उन्हें प्रतिदिन मात्र 10-15 मिनट योग की कुछ विधियों का अभ्यास कराया जाता है; कभी ओंकार का उच्चारण तो कभी शिथलीकरण, तो कभी भ्रामरी प्राणायाम तो कभी पवन मुक्तासन आदि। उन्हें नियमित रूप से योग की वैसी शिक्षा नहीं दी जाती जैसी किसी योगाश्रम में रहकर पढ़ने वाले बालकों को दी जाती है। अर्थात् जहां उनका पूरा समय योगानुशासन में व्यतीत होता है। इन सारी कमियों के रहते हुए भी हमें जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं, वे पूर्णतः संतोषजनक हैं और वे यह संकेत भी देते हैं कि शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों और स्तरों पर अभी ऐसे ही शोध कार्यों की नितांत आवश्यकता है।

5.4 सुझाव -

1. योग के संप्रभावों का अध्ययन अधिक विशद क्षेत्रों में किया जाना आवश्यक है. प्राथमिक स्तर के साथ-साथ उच्चतर माध्यमिक और उच्च शिक्षा के स्तरों तक इसे विस्तृत किया जा सकता है.
2. केवल विद्यार्थी जगत ही नहीं कृषक, मजदूर, सरकारी कर्मचारी, अधिकारी, आदि सभी के जीवन पर योग के संप्रभावों का अनुशीलन अपेक्षित है ताकि एक व्यापक परिवेश में मानव-जीवन पर योग के संप्रभावों का परिणाम रेखांकित किया जा सके.
3. विद्यार्थी समाज पर एक एक आसन, प्राणायाम, योग-निद्रा आदि के नियमित अभ्यास का क्या प्रभाव पड़ता है, इस प्रकार के शोध-कार्य भी किए जा सकते हैं.
4. छात्र-छात्राओं के मध्य तुलनात्मक अध्ययन संबंधी शोध-कार्य भी वर्तमान शिक्षा पद्धति को नया रूपाकार देने के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे.
5. नगरीय तथा ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यार्थियों के मध्य भी योग के संप्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है.

इस संसार में सबसे अधिक चंचल और शक्तिशाली मन है, वही मोक्ष और बंधनों का कारक भी है; अनादिकाल से उसे नियंत्रण में रखने वाली विधियों की शोध भी की जाती रही है, पर अभी तक यह कार्य एक सीमित क्षेत्र में ही हुआ है; वह मूलतः अध्यात्म विद्या के विकास से संबंधित रहा है; शिक्षा-व्यवस्था से उसे अब जोड़ा जा रहा है; पश्चिमी देशों में योग के विभिन्न अवयवों पर अतिशय संवेदनशील यंत्रों के माध्यम से शोध-कार्य हो रहे हैं किन्तु भारत में शैक्षिक क्षेत्र में शोध के कार्य अभी अपनी आरंभिक स्थिति में हैं अतः इस कार्य को प्राथमिकता देने की नितांत आवश्यकता है; क्योंकि योग समस्त विद्याओं का जनक है. इसे जानने के बाद फिर कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता. गीता में भी यही बात कही गई है और आधुनिक योगाचार्यों, महर्षियों तथा शिक्षा-विशेषज्ञों के जीवन-व्यापी अनुभवों का भी यही सार तत्व है.

परिशिष्ट

1. साक्षात्कार अनुसूची (6 से 10 वर्षीय बालकों के लिए)
2. साक्षात्कार अनुसूची (11 से 16 वर्षीय किशोरों के लिए)
3. संदर्भ ग्रंथों की सूची.
(अ) संस्कृत साहित्य
(आ) अंग्रेजी भाषा के ग्रंथ
(इ) हिन्दी ग्रंथों की सूची
(ई) पत्र पत्रिकायें
4. योग करने वाले तथा योग न करने वाले बालकों एवं किशोरों से प्राप्त आंकड़ों के तुलनात्मक आरेख.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

बाल विकास पर योग का प्रभाव

साक्षात्कार अनुसूची (6 से 10 वर्षीय बालकों के लिए)

विद्यार्थी का नाम : _____

कक्षा : _____

संस्था का नाम : _____

- प्र. 1) आप सुबह कितने बजे सोकर उठते हैं -
- अ) 6 बजे
 - ब) 7 बजे
 - स) 8 बजे
- प्र. 2) उठने के पश्चात् आप सर्वप्रथम क्या करते हैं -
- अ) तुरंत ब्रश करते हैं.
 - ब) दूध पीकर ब्रश करते हैं.
 - स) बार-बार कहने पर ब्रश करते हैं.
- प्र. 3) आप टायलेट के लिए जाते हैं -
- अ) रोज सुबह अपने आप जाते हैं.
 - ब) मम्मी के कहने पर जाते हैं.
 - स) जब टॉयलेट आता है, तभी जाते हैं.
- प्र. 4) आप कब नहाते हैं-
- अ) स्कूल जाने से पहले
 - ब) जब इच्छा होती है तब नहा लेते हैं
 - स) स्कूल से आने के बाद
- प्र. 5) स्कूल से आने के बाद आप क्या करते हैं
- अ) क्या आप सोते हैं
 - ब) टी.व्ही. देखना पसंद करते हैं
 - स) कहानी की पुस्तक पढ़ना पसंद करते हैं
- प्र. 6) रात को आप कब सोते हैं
- अ) खाने के बाद पढ़ाई करके
 - ब) खाना खाने के तुरंत बाद
 - स) रात को टी.व्ही प्रोग्राम देखने के बाद

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

(संस्कृत भाषा में वाक्य रचना के विभिन्न प्रकार)

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

— १. संस्कृत भाषा में वाक्य रचना के विभिन्न प्रकार

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

— २. संस्कृत भाषा में वाक्य रचना के विभिन्न प्रकार

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

— ३. संस्कृत भाषा में वाक्य रचना के विभिन्न प्रकार

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

— ४. संस्कृत भाषा में वाक्य रचना के विभिन्न प्रकार

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

संस्कृत भाषा में वाक्य रचना

प्र. 7) आप नाश्ते में क्या पसंद करते हैं-

- अ) पराठा या रोटी-सब्जी
- ब) ब्रेड, बटर, आमलेट
- स) हल्का नाश्ता जैसे बिरिकुट, चिप्स

प्र. 8) आप कैसा भोजन करते हैं-

- अ) शुद्ध शाकाहारी
- ब) मांसाहारी
- स) शाकाहार और अंडे से बने पदार्थ पसंद करते हैं.

प्र. 9) आप को किसी ने मारा तो आप क्या करते हैं.

- अ) बड़ों से उसकी शिकायत करते हैं
- ब) आप भी उसे मानते हैं
- स) रोने लगते हैं

प्र. 10) किसी भी जानवर को दूसरों द्वारा मारने या छेड़ने पर आप क्या करते हैं -

- अ) आप उसे ऐसा करने से मना करते हैं.
- ब) आप भी उनके साथ जानवरों को मारते या छोड़ते हैं.
- स) आप दुखी हो जाते हैं.

प्र. 11) कभी शाला में शिक्षक द्वारा पीटने पर क्या करते हैं -

- अ) आपको बुरा लगता है
- ब) घर में शिक्षक की शिकायत करते हैं.
- स) घर में किसी को नहीं बताते हैं.

प्र. 12) अपने मित्र को किसी वस्तु चुराता देखकर आप क्या करते हैं

- अ) आप उसे ऐसा करने से मना करते हैं
- ब) आप देखकर भी अनदेखा कर देते हैं
- स) आप उसकी शिकायत शिक्षक से करते हैं.

प्र. 13) कक्षा में अपने साथियों की अच्छी डिजाइन की पेंसिल, रबर, टिफिन बाक्स कम्पास देखकर कैसा लगता है.

- अ) घर आकर आपने माता-पिता से वैसी ही वस्तु लेने की जिद करते हैं.
- ब) आप उन वस्तुओं को चुपचाप उठाकर घर ले जाते हैं.
- स) अपने पास वैसी चीजें नहीं है यह सोचकर दुखी हो जाते हैं.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 14) परीक्षा देने जाने से पहले -

- अ) अपनी तैयारी से आप संतुष्ट रहते हैं.
- ब) पूरी तैयारी होने पर भी आपको घबराहट होती है.
- स) परीक्षा की तैयारी ना होने पर भी कोई चिंता नहीं करते.

प्र. 15) रास्ते में किसी का पर्स मिलने पर -

- अ) सही पते पर पहुंचाने का प्रयत्न करेंगे
- ब) आप उन पैसों को खर्च कर देंगे
- स) घर में बतायेंगे.

प्र. 16) आपका स्वास्थ्य कैसा रहता है-

- अ) प्रायः तबियत ठीक रहती है.
- ब) अक्सर तबियत खराब रहती है.
- स) कभी बीमार हुए भी तो जल्दी ठीक हो जाते हैं.

प्र. 17) आपकी ऊंचाई कैसी हैं-

- अ) आपकी ऊंचाई अधिक होने के कारण पीछे बैठना पड़ता है.
- ब) आपकी ऊंचाई कम होने के कारण सामने बैठने मिलता है.
- स) लगभग अपनी कक्षा के बालकों के समान.

प्र. 18) आपके दांत कैसे हैं-

- अ) एक समान मोतियां जैसे हैं.
- ब) दांतों में छेद है व काले निशान पड़ गये हैं.
- स) टेढ़े मेढ़े हैं.

प्र. 19) आपको भूख कैसे लगती है-

- अ) आपको हर समय कुछ ना कुछ खाते रहने का मन करता है.
- ब) आपको अपने आप कुछ भी खाने का मन नहीं होता.
- स) खाने की चीजें देखकर आपकी भूख बढ़ जाती है.

प्र. 20) जब आप अपने साथियों के साथ खेलते हैं.

- अ) आप अंत तक खेलते हैं.
- ब) आप जल्दी थक जाते हैं
- स) खाने की चीजें देखकर आपकी भूख बढ़ जाती है.

प्र. 21) जब आप घर में रहते हैं

- अ) घर के आसपास के मित्रों के साथ खेलते हैं
- ब) अपने घर में अकेले ही खेलते हैं.
- स) घर में बैठकर टी.व्ही देखना पसंद करते हैं.

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

- प्र. 22) अपने मित्रों के साथ खेलते समय लड़ाई होने पर -
- अ) आप लड़ाई को खत्म करने का प्रयास करते हैं
 - ब) आप मित्रों के साथ मारपीट करते हैं.
 - स) आप उन मित्रों के साथ खेलना ही छोड़ देते हैं.
- प्र. 23) खेल के मैदान में खेलते समय-
- अ) खेल नियमानुसार खेलते हैं-
 - ब) अपने आपको हारता देखकर नहीं खेलने की बात करते हैं.
 - स) आप अपनी ही बात मनवाने पर तुले रहते हैं.
- प्र. 24) खेलते समय आपके मित्र को चोट लगने पर -
- अ) आप खुद भी उसकी सहायता करते हैं
 - ब) आप उसे वैसा ही छोड़कर भाग जाते हैं.
 - स) दूसरों को आप सहायता के लिए पुकारते हैं.
- प्र. 25) किसी प्रतियोगिता में भाग लेकर उसमें पुरस्कार नहीं मिलने पर -
- अ) अगली बार और अच्छी तैयारी से जाने की सोचते हैं
 - ब) आगे ऐसी किसी भी प्रतियोगिता में भाग नहीं लेंगे.
ऐसा सोचते हैं.
 - स) आप उदास हो जाते हैं.
- प्र. 26) पढ़ाई करते समय-
- अ) आपको अपना पाठ जल्दी याद हो जाता है
 - ब) याद करने में कठिनाई होती है
 - स) आपको अपना पाठ याद करने में बहुत देर लगती है
- प्र. 27) कक्षा में शिक्षिका द्वारा समझाये जाने पर-
- अ) आप एक बार में ही समझ जाते हैं
 - ब) दो, तीन बार में समझाने पर समझ जाते हैं.
 - स) बार-बार समझाये जाने पर भी समझ ही नहीं पाते.
- प्र. 28) घर में पढ़ते समय-
- अ) पढ़ाई करते समय टी.व्ही. या टेप चालू करने पर भी आपको कोई फर्क नहीं पड़ता.
 - ब) आप शांत कमरे में पढ़ते हैं
 - स) जहां परिवार के अन्य सदस्य बैठे हो वहां पढ़ते हैं.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 29) कक्षा में कोई कहानी सुनाये जाने पर -

- अ) आप उसे तुरंत दुहरा सकते हैं.
- ब) आप कहानी दुहरा ही नहीं सकते हैं
- स) दो, तीन बार सुनने के बाद ही दुहरा सकते हैं.

प्र. 30) गणित में पहाड़े (टेबल्स) याद करने पर -

- अ) आप बीच में कुछ पूछने पर तुरंत बता सकते हैं
- ब) आप याद ही नहीं कर पाते हैं, सिर्फ गुणा (मल्टीप्लाय) करके ही बता पाते हैं
- स) कुछ पूछने पर मन में शुरु से पहाड़ा बोलते हैं तभी बता पाते हैं.

प्र. 31) ड्राइंग बनाना आपको कैसा लगता है-

- अ) आप अपने आप सोचकर चित्र बनाते हैं.
- ब) आपसे अच्छी ड्राइंग नहीं बनती, इसलिये ड्राइंग करना अच्छा नहीं लगता.
- स) कोई मित्र को देखकर उसकी नकल करके बनाते हैं.

प्र. 32) आप अपना होमवर्क कैसे करते हैं-

- अ) आपने आप करते हैं.
- ब) ट्यूशन में पूरा करते हैं.
- स) अपने माता या पिता की सहायता से करते हैं

प्र. 33) घर में आपके द्वारा कांच का सामान टूट जाने पर -

- अ) आगे से ध्यान से काम करने के लिए समझाया जाता है
- ब) मार पड़ती है.
- स) डांट पड़ती है.

प्र. 34) थोड़ी देर के लिए आप घर पर अकेले हों तो-

- अ) आपको डर लगता है
- ब) आप निश्चित होकर टी.व्ही. देखते हैं.
- स) डर दूर करने के लिए कहानी की पुस्तक पढ़ते हैं.

प्र. 35) आपके घर मेहमान आने पर -

- अ) आप हाथ जोड़कर नमस्ते करते हैं.
- ब) आप उस कमरे में जाते ही नहीं हैं.
- स) आप उन्हें देखते ही अंदर भाग जाते हैं

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 36) आपके बीमार पड़ने पर आपकी देखभाल सबसे ज्यादा कौन करता है.

- अ) आपके माता-पिता
- ब) आपकी आया
- स) आपकी दादी या नानी या चाची

प्र. 37) कक्षा में अच्छे नम्बर लाने पर -

- अ) और अच्छे नम्बर लाने के लिए उत्साहित करते हैं.
- ब) विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है.
- स) आपको चाकलेट या मिठाई लाकर देते हैं

प्र. 38) आप अपनी किसी समस्या को बताते हैं-

- अ) माता-पिता या परिवार के किसी खास सदस्या को.
- ब) अपने किसी खास दोस्त को.
- स) अपने शिक्षक को.

प्र. 39) आप सबसे अधिक विश्वास करते हैं-

- अ) अपने माता-पिता पर
- ब) अपने मित्र पर
- स) अपने शिक्षक पर

प्र. 40) आपके द्वारा शाला में कोई वस्तु गुमने पर-

- अ) अपनी चीजें सम्हालकर रखने को कहकर खोई वस्तु खरीद देते हैं.
- ब) आपको घर में डांट पड़ती है.
- स) आप घर में डरते हुए जाते हैं कि मार ना पड़ जाय.

प्र. 41) शाला में आने के बाद ध्यान करते हैं तो-

- अ) ध्यान करने के लिए उत्सुक रहते हैं.
- ब) करना पड़ता है इसलिए करते हैं
- स) ध्यान का समय कब खत्म होगा राह देखते हैं

प्र. 42) ध्यान के दौरान कैसा लगता है-

- अ) मन शांत लगता है.
- ब) अनेक विचार मन में आते हैं
- स) नींद आती है.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 43) ध्यान करने के बाद कैसा लगता है.

- अ) शरीर में हल्कापन लगता है
- ब) चिड़चिड़ाहट होती है.
- स) सिर दुखता है.

प्र. 44) आप प्राणायाम करने पर कैसा लगता है-

- अ) रोज करते हैं
- ब) नहीं करते हैं
- स) कभी-कभी करते हैं

प्र. 45) प्राणायाम करने पर कैसा लगता है-

- अ) प्रसन्नता व ताजगी लगती है.
- ब) थकान लगती है
- स) कोई अन्तर अनुभव नहीं होता.

३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (३५)	(३५)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (३६)	(३६)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (३७)	(३७)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (३८)	(३८)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (३९)	(३९)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४०)	(४०)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४१)	(४१)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४२)	(४२)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४३)	(४३)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४४)	(४४)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४५)	(४५)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४६)	(४६)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४७)	(४७)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४८)	(४८)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (४९)	(४९)
३. ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक ताम्रक (५०)	(५०)

बाल विकास पर योग का प्रभाव

साक्षात्कार अनुसूची (11 से 16 वर्षीय किशोरों के लिए)

विद्यार्थी का नाम : _____

कक्षा : _____

संस्था का नाम : _____

प्र. 1) आप सुबह कितने बजे उठते हैं

- अ) सूर्योदय के पहले
- ब) सूर्योदय के बाद
- स) जब नींद खुल जाय.

प्र. 2) उठने के पश्चात आप सर्वप्रथम क्या करते हैं-

- अ) शारीरिक नित्य कर्म पर ध्यान देते हैं
- ब) शारीरिक नित्य कर्म पर विशेष ध्यान नहीं देते हैं
- स) जो कार्य करने का मन होता है वही करते हैं

प्र. 3) आप सुबह कब नहाते हैं.

- अ) नित्य कर्म से निवृत्त (निपटकर) होकर
- ब) दिन भर में कभी भी
- स) स्कूल जाने से पहले.

प्र. 4) स्नान के बाद क्या करते हैं-

- अ) पूजा करते हैं.
- ब) खेलते हैं
- स) पढ़ते हैं.

प्र. 5) स्कूल से आने के बाद आप क्या करते हैं.

- अ) फ्रेश होकर आप खेलने चले जाते हैं.
- ब) थकान लगने के कारण बिना वजह चिड़चिड़ाते हैं
- स) टी.व्ही. देखना पसंद करते हैं

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 6) रात को आप कब सोते हैं

- अ) आप अपना होमवर्क और पढ़ाई पूरी होने पर ही सोते हैं
- ब) देर तक टी.व्ही. प्रोग्राम देखने के बाद
- स) आपके माता-पिता जब सोने जाते हैं तभी सोते हैं.

प्र. 7) आप किस तरह का भोजन पसंद करते हैं

- अ) सात्विक, शाकाहारी, जिसमें जीवन सत्व ज्यादा हो
- ब) मांसाहारी और अंडे से बने पदार्थ.
- स) चटपटा, मिर्च मसालेवाला तला भुजां.

प्र. 8) आप टिफिन में क्या ले जाना पसंद करते हैं-

- अ) रोटी सब्जी
- ब) रोज अलग अलग चीजें पसंद की
- स) सूखा नाश्ता जैसे बिस्किट, चिप्स, मिक्चर.

प्र. 9) आपको भूख लगने पर-

- अ) जो मिल जाता है वहीं खा लेते हैं.
- ब) भूख लगने पर भी पसंद का ना मिलने के कारण नहीं खाते हैं
- स) पढ़ाई के कारण खाने की ओर विशेष ध्यान नहीं देते हैं.

प्र. 10) जब आप स्कूल में रहते हैं.

- अ) सारा ध्यान पढ़ाई पर लगाते हैं.
- ब) छुट्टी का समय होने की प्रतीक्षा करते हैं.
- स) दूसरे बच्चों को छेड़ने की नई-नई तरकीब सोचते हैं.

प्र. 11) कक्षा में अध्यापन के समय

- अ) आप विषय वस्तु जल्दी ही समझ जाते हैं.
- ब) बार-बार समझाये जाने पर ही समझते हैं.
- स) आप अपने कापी-पुस्तकों पर चित्रकारी करते रहते हैं.

प्र. 12) घर पर आप कैसे पढ़ाई करते हैं.

- अ) शोर या टी.व्ही., रेडियो की आवाज से भी आप डिस्टर्ब नहीं होते हैं
- ब) एकान्त व शांत वातावरण में
- स) सबके साथ बैठकर पढ़ते हैं.

प्र. 13) परीक्षा देते समय-

- अ) आप पूरी तैयारी से जाते हैं और ईमानदारी से लिखते हैं.
- ब) आप नकल करने को बुरा नहीं मानते हैं.
- स) आप बेफिक्र होकर यह सोचते हैं कि जो आयेगा देखेंगे.

प्र. 14) परीक्षा परिणाम देखकर आपकी क्या प्रतिक्रिया होती है-

- अ) आप संतुष्ट होते हैं.
- ब) आपको कोई फर्क नहीं पड़ता है.
- स) अधिक मेहनत कर के और अच्छा करने की सोचते हैं.

प्र. 15) स्कूल की सांस्कृतिक गतिविधियों में -

- अ) आप बड़बड़ कर हिस्सा लेते हैं.
- ब) औपचारिकता या दंड के भय से भाग लेते हैं.
- स) गतिविधियों में हिस्सा ना लेकर दर्शक बने रहते हैं.

प्र. 16) आप किसी से दोस्ती करते हैं तो-

- अ) आप उसकी हर बात मानते हैं.
- ब) आप उसे आपकी बात मानने के लिए बाध्य करते हैं.
- स) आप समय-समय पर दोस्ती पर खरा उतरता है कि नहीं परखते हैं.

प्र. 17) खेल के मैदान में खेलते समय-

- अ) पूरी लगन और ईमानदारी से खेलना पसंद करते हैं.
- ब) अपनी जीत के लिए धोखा धड़ी भी करते हैं.
- स) खेलने का समय केवल मनोरंजन की दृष्टि से व्यतीत करते हैं.

प्र. 18) आप अपने अवकाश के समय में क्या करना पसंद करते हैं.

- अ) समाज सेवा का कार्य करते हैं.
- ब) सिनेमा, सर्कस या अन्य मनोरंजन में अपना समय व्यतीत करते हैं.
- स) अपने बगीचे में काम करना पसंद करते हैं.

प्र. 19) आपका कोई मित्र बड़ों से अभद्र व्यवहार करता है तो -

- अ) आप उसे समझाते हैं कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए.
- ब) आप भी उसके व्यवहार से सहमत होते हैं.
- स) मित्र के व्यवहार पर आप उदासीन होते हैं.

... ५५ ...
... ५६ ...
... ५७ ...
... ५८ ...
... ५९ ...
... ६० ...
... ६१ ...
... ६२ ...
... ६३ ...
... ६४ ...
... ६५ ...
... ६६ ...
... ६७ ...
... ६८ ...
... ६९ ...
... ७० ...
... ७१ ...
... ७२ ...
... ७३ ...
... ७४ ...
... ७५ ...
... ७६ ...
... ७७ ...
... ७८ ...
... ७९ ...
... ८० ...
... ८१ ...
... ८२ ...
... ८३ ...
... ८४ ...
... ८५ ...
... ८६ ...
... ८७ ...
... ८८ ...
... ८९ ...
... ९० ...
... ९१ ...
... ९२ ...
... ९३ ...
... ९४ ...
... ९५ ...
... ९६ ...
... ९७ ...
... ९८ ...
... ९९ ...
... १०० ...

- प्र. 20) किसी प्रतियोगिता के पुरस्कार आपकी जगह आपके मित्र को प्राप्त होने पर -
- अ) आपको हार्दिक खुशी होगी.
 - ब) मित्र से ईर्ष्या होगी.
 - स) मित्र की योग्यता पर चिढ़कर पक्षपात होने की आशंका व्यक्त करेंगे.
- प्र. 21) यदि आपकी कोई मित्र संकट में फंस जाय -
- अ) आप पूरे अपनेपन से उसकी सहायता करेंगे.
 - ब) मित्र का सिरदर्द है, वहीं जाने, सोचकर बच निकलेंगे.
 - स) मित्र का मजाक उड़ायेंगे, उसे नीचा दिखाने में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे.
- प्र. 22) यदि अचानक आपको किसी समस्या का सामना करना पड़े तो -
- अ) आप उस समस्या का हल ढूँढ़ने के लिए उस पर शांति से मनन करते हैं.
 - ब) आप घबराकर रोने लगते हैं.
 - स) किसी अन्य से उस विषय पर चर्चा करके सहायता लेते हैं.
- प्र. 23) कोई अनुचित कार्य करने के प्रति आपकी क्या सोच है-
- अ) आपका मन इस बात के लिए आपका साथ नहीं देता.
 - ब) माता पिता द्वारा दंडित किये जाने का डर लगता है.
 - स) कोई विशेष डर नहीं लगता.
- प्र. 24) आप सबसे अधिक किस पर विश्वास करते हैं.
- अ) अपने आप पर
 - ब) अपने मित्र पर
 - स) अपने माता-पिता पर
- प्र. 25) अध्ययन करते समय आप अपनी पुस्तकें -
- अ) मित्रों को देना पसंद करेंगे.
 - ब) ईर्ष्याविश उन्हें दिखायेंगे ही नहीं.
 - स) दिखायेंगे तो जरूर पर पढ़ने नहीं देंगे.
- प्र. 26) यदि आप किसी पर अन्याय होता देखते हैं तो -
- अ) उस पर हुए अन्याय के खिलाफ आवाज उठाते हैं, या लड़ते हैं.
 - ब) क्यों बेकार में परेशान हो यह सोचकर उदासीन रहते हैं.
 - स) लचर कानून व्यवस्था के कारण उसकी सहायता कर पाने से दुखी हो जाते हैं.

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

प्र. 27) अपने मित्र को किसी की वस्तु चुराता देखकर आप क्या करते हैं-

- अ) आप उसे ऐसा करने से मना करते हैं.
- ब) आप भी उसका साथ देते हैं.
- स) आप उसे देखकर भी अनदेखा कर देते हैं.

प्र. 28) रास्ते में किसी का पर्स मिलने पर -

- अ) सही व्यक्ति (जिसकी पर्स है) तक पहुंचायेगे
- ब) आप उन पैसों को खर्च कर देंगे.
- स) पुलिस स्टेशन में उसकी रिपोर्ट लिखवायेगे.

प्र. 29) स्कूल में आप शिक्षक द्वारा दंडित किये जाने पर -

- अ) अपने आपको अपमानित अनुभव करते हैं.
- ब) शिक्षक से बदला लेने की या उन्हें परेशान करने की सोचते हैं.
- स) दंडित होते रहने के कारण आपको कोई फर्क नहीं पड़ता.

प्र. 30) सुबह घर के वयस्क सदस्यों को प्रणाम करने के प्रति आप क्या सोचते हैं -

- अ) ऐसा करने से मानसिक शांति मिलती है.
- ब) यह एक दकियानूसी पुरानी परम्परा है.
- स) मात्र त्यौहारों पर ही करना चाहिए.

प्र. 31) यूनिफार्म के प्रति आप क्या सोचते हैं.

- अ) यह मानसिक एकता के लिए जरूरी है.
- ब) यह केवल स्कूल मात्र की पहचान है.
- स) यह एक अनावश्यक औपचारिकता है.

प्र. 32) स्कूल जाते समय तैयार होने के लिए -

- अ) अपना सभी सामान खुद निकाल तैयार हो जाते हैं.
- ब) अपना सामान जगह पर न रखने के कारण आप चिल्ला कर पूछते-हैं मेरा जूता कहां है ? मोजे कहां हैं ?
- स) आप अपने सभी सामान के लिए मम्मी पर निर्भर रहते हैं.

प्र. 33) लाइब्रेरी की पुस्तकें उपयोग में लाते समय -

- अ) आप उस जानकारी को लिख देते हैं.
- ब) लिखने से बचने के लिए आप उस पुस्तक का पन्ना ही फाड़ लेते हैं.
- स) उपयोगी जानकारी को पढ़ लेते हैं.

प्र. 34) आपके विचार से खूब मेहनत करके पढ़ना कब सफल होता है...

- अ) जब नये तथ्यों की खोज करने की क्षमता बढ़ती है.
- ब) जब अधिक धन कमाने की योग्यता बढ़ती है.
- स) उच्च अधिकारी बनने पर.

प्र. 35) सुखी जीवन के लिए आप किस बात को महत्व देते हैं-

- अ) मन की शांति
- ब) धन
- स) शारीरिक स्वास्थ्य

प्र. 36) आप किस श्रेणी के व्यक्तियों को पसंद करते हैं.

- अ) विद्वान जो नवीन खोजों से ज्ञान बढ़ाते हैं
- ब) डॉक्टर, वैद्य जो हमारे स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं.
- स) उद्योगपति जो देश की आर्थिक उन्नति करते हैं.

प्र. 37) अपने मित्र के जन्म दिन के अवसर पर क्या उपहार देना पसंद करते हैं-

- अ) ज्ञानवर्धक पुस्तकें देना.
- ब) कोई खेल सामग्री देना.
- स) विद्यालय से संबंधित वस्तुएं देना.

प्र. 38) स्कूल में अध्ययन या योग की शिक्षा के बारे में क्या सोचते हैं-

- अ) इससे दिन भर मस्तिष्क तरोताजा, स्वास्थ्य रहता है. चुस्ती भी बनी रहती है.
- ब) यह एक गैर जरूरी कार्य है.
- स) उतनी देर पढ़ाई से मुक्ति मिलती है.

प्र. 39) आप स्कूल में ध्यान करने के लिए -

- अ) ध्यान करने के लिए उत्सुक होते हैं.
- ब) ध्यान का समय कब खत्म होगा राह देखते हैं.
- स) ध्यान करने के लिए बाध्य हैं.

प्र. 40) ध्यान के दौरान कैसा लगता है-

- अ) मन में अत्यधिक शांती का अनुभव होता है.
- ब) मन में अनेक विचार आते हैं.
- स) नींद आती है.

१. ... (10)

२. ... (11)

३. ... (12)

४. ... (13)

५. ... (14)

६. ... (15)

७. ... (16)

८. ... (17)

९. ... (18)

१०. ... (19)

११. ... (20)

१२. ... (21)

१३. ... (22)

१४. ... (23)

१५. ... (24)

१६. ... (25)

१७. ... (26)

१८. ... (27)

१९. ... (28)

२०. ... (29)

२१. ... (30)

२२. ... (31)

२३. ... (32)

२४. ... (33)

२५. ... (34)

२६. ... (35)

२७. ... (36)

२८. ... (37)

२९. ... (38)

३०. ... (39)

३१. ... (40)

३२. ... (41)

३३. ... (42)

३४. ... (43)

३५. ... (44)

३६. ... (45)

३७. ... (46)

३८. ... (47)

३९. ... (48)

४०. ... (49)

४१. ... (50)

४२. ... (51)

४३. ... (52)

४४. ... (53)

४५. ... (54)

४६. ... (55)

४७. ... (56)

४८. ... (57)

४९. ... (58)

५०. ... (59)

५१. ... (60)

५२. ... (61)

५३. ... (62)

५४. ... (63)

५५. ... (64)

५६. ... (65)

५७. ... (66)

५८. ... (67)

५९. ... (68)

६०. ... (69)

६१. ... (70)

६२. ... (71)

६३. ... (72)

६४. ... (73)

६५. ... (74)

६६. ... (75)

६७. ... (76)

६८. ... (77)

६९. ... (78)

७०. ... (79)

७१. ... (80)

७२. ... (81)

७३. ... (82)

७४. ... (83)

७५. ... (84)

७६. ... (85)

७७. ... (86)

७८. ... (87)

७९. ... (88)

८०. ... (89)

८१. ... (90)

८२. ... (91)

८३. ... (92)

८४. ... (93)

८५. ... (94)

८६. ... (95)

८७. ... (96)

८८. ... (97)

८९. ... (98)

९०. ... (99)

९१. ... (100)

प्र. 41) ध्यान करने के बाद कैसा लगता है ?

अ) दिनभर आपको अत्यधिक तरोताजा लगता है.

ब) ध्यान में मन एकाग्र ना होने के कारण चिड़चिड़ाहट होती है.

प्र. 42) छुट्टी के दिन या स्कूल ना जाने पर -

अ) घर में ध्यान करते हैं.

ब) ध्यान करने में छुट्टी मिलती ऐसा

स) ध्यान न करने के कारण आलस, बेचैनी, अस्वस्थ अनुभव करते हैं.

प्र. 43) क्या आप प्राणायाम करते हैं ?

अ) रोज करते हैं

ब) नहीं करते हैं

स) कभी-कभी करते हैं.

प्र. 44) प्राणायाम करने पर कैसा अनुभव होता है ?

अ) प्रसन्नता व शरीर में हल्कापन लगता है.

ब) कोई अन्तर अनुभव नहीं होता है.

स) थकान लगती है.

प्र. 45) लगातार प्राणायाम के उपयोग से आपके शिक्षण पर क्या असर पड़ता है ?

अ) इससे आपके शिक्षण पर सकारात्मक परिणाम मिल रहे हैं.

ब) कोई विशेष अन्तर पता नहीं चल रहा है.

स) थोड़ा सा अन्तर पड़ रहा है.

CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.

संदर्भ ग्रंथों की सूची

(अ) संस्कृत साहित्य

अथर्ववेद
 ऋग्वेद संहिता
 कठोपनिषद
 कैवल्योपनिषद
 गर्भोपनिषद
 श्रीमद्भागवतगीता
 चाणक्य सूत्र
 छान्दोग्योपनिषद
 देवीभागवत
 मनुस्मृति
 महाभारत
 मुण्डकोपनिषद
 यजुर्वेद
 वृहदारण्यकोपनिषद
 शतपथ ब्राह्मण

(आ) अंग्रेजी भाषा के ग्रंथ

Carrel, A,	: Man, The unknowen
Crow & Crow	: Educational Psychology
Dumville	: Fundamentals of psychology
Eysenek, H.J.	: Encyclopedia of psychology
Gesell	: Developmental Paediatrics
Hurlock. L.B.	: Child Development
Jersild, A.T.	: Child psychology
Peterson, H.A.	: Educational Psychology

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

(सिद्धि किं किं प्रोक्तं)

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

सिद्धि किं किं प्रोक्तं

Woodworth & Marquis :	Psychology
Maharshi Mahesh Yogi :	Science of Being and Art of Living
Maharshi Mahesh Yogi :	Transcendental Meditation
Maharshi Mahesh Yogi :	Maharishi's Message

(इ) हिन्दी ग्रंथों की सूची

- | | |
|---|---|
| 1. पातञ्जल दर्शन | - महर्षि पतंजलि |
| 2. पातञ्जल योग प्रदीप | - श्री ओमानंद तीर्थ |
| 3. पातञ्जल योग दर्शनम् | - डॉ. सुरेश चंद्र श्रीवास्तव |
| 4. योग दर्शन | - हरिकृष्णदास गोयन्दका |
| 5. योग वशिष्ठ महारामायण | - आदि कवि वाल्मीकि प्रणीतम् |
| 6. हठयोग प्रदीपिका | - खेमराज-श्रीकृष्णदास, बम्बई |
| 7. घेरण्ड संहिता | - खेमराज-श्रीकृष्णदास बम्बई |
| 8. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह | - रामलाल श्रीवास्तव सम्पादक |
| 9. शिव स्वरोदय | - डॉ. चमनलाल गुप्ता |
| 10. सौन्दर्य लहरी | - डॉ. चमनलाल गुप्ता |
| 11. बृहद् शिव स्वरोदय | - डॉ. चमनलाल गुप्ता |
| 12. वैदिक सम्पदा | - पं. वीरसेन वेदश्रमी |
| 13. ध्यान और आध्यात्मिक जीवन | - स्वामी यतीश्वरानंद |
| 14. योग दर्शन | - परमहंस निरंजनानंद सरस्वती |
| 15. हमारी भावी पीढ़ी और
उसका नवनिर्माण | - पं. श्रीराम शर्मा आचार्य |
| 16. राजयोग | - स्वामी विवेकानंद |
| 17. योग क्या है | - अभिलास दास |
| 18. बाल मनोविज्ञान | - भाई योगेन्द्र जीत |
| 19. बाल मनोविज्ञान | - डॉ. प्रीती वर्मा, और
- डॉ. डी.एम. श्रीवास्तव |

- 20.. भारतीय मनोविज्ञान
(सांख्य एवं योग की पृष्ठभूमि में) - डॉ. लक्ष्मी शुक्ला
21. मातृकला एवं शिशु कल्याण - जी.पी. शैरी
22. क्रियात्मक योग - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
23. मुक्ति के चार सोपान - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
24. बच्चों के लिए योग शिक्षा - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
25. सत्संग (भाग-1 से 6 तक) - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
26. आसन, प्राणायाम, मुद्राबंध - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
27. समस्या पेट की समाधान योग का - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
28. तंत्र क्रिया और योग विद्या - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
29. ईश्वर-दर्शन - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
30. दमा और मधुमेह में योग का
अभ्यास - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
31. उच्च रक्तचाप - स्वामी सत्यानंद सरस्वती
32. सरल योग चिकित्सा - आचार्य भगवान देव
33. योग और यौगिक चिकित्सा - प्रो. राम हर्ष सिंह
34. उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान - डॉ. अरुण कुमार सिंह
35. समाज मनोविज्ञान - बी.एम. पहाड़ियां
36. आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान - डॉ. प्रीति वर्मा
37. विकास मनोविज्ञान - एलिजाबेथ बी. हर्लोक
38. समाज मनोविज्ञान - डॉ. एस.एस. माथुर
39. सामाजिक मनोविज्ञान - डॉ. डी.एन.श्रीवास्तव
40. समाज मनोविज्ञान के मूल आधार - गिरीश्वर मिश्र
41. पर्सनाल्टी प्रोसेसेस - विलियम रेवेले
42. आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान - डॉ. अरुण कुमार सिंह
43. योग साधना - आचार्य श्री राम शर्मा
44. यम नियम - आचार्य श्री राम शर्मा

महाभारत -	०१
महाभारत - (१) विष्णु -	०२
महाभारत -	०३
महाभारत -	०४
महाभारत -	०५
महाभारत -	०६
महाभारत -	०७
महाभारत -	०८
महाभारत -	०९
महाभारत -	१०
महाभारत -	११
महाभारत -	१२
महाभारत -	१३
महाभारत -	१४
महाभारत -	१५
महाभारत -	१६
महाभारत -	१७
महाभारत -	१८
महाभारत -	१९
महाभारत -	२०
महाभारत -	२१
महाभारत -	२२
महाभारत -	२३
महाभारत -	२४
महाभारत -	२५
महाभारत -	२६
महाभारत -	२७
महाभारत -	२८
महाभारत -	२९
महाभारत -	३०
महाभारत -	३१
महाभारत -	३२
महाभारत -	३३
महाभारत -	३४
महाभारत -	३५
महाभारत -	३६
महाभारत -	३७
महाभारत -	३८
महाभारत -	३९
महाभारत -	४०
महाभारत -	४१
महाभारत -	४२
महाभारत -	४३
महाभारत -	४४
महाभारत -	४५
महाभारत -	४६
महाभारत -	४७
महाभारत -	४८
महाभारत -	४९
महाभारत -	५०
महाभारत -	५१
महाभारत -	५२
महाभारत -	५३
महाभारत -	५४
महाभारत -	५५
महाभारत -	५६
महाभारत -	५७
महाभारत -	५८
महाभारत -	५९
महाभारत -	६०
महाभारत -	६१
महाभारत -	६२
महाभारत -	६३
महाभारत -	६४
महाभारत -	६५
महाभारत -	६६
महाभारत -	६७
महाभारत -	६८
महाभारत -	६९
महाभारत -	७०
महाभारत -	७१
महाभारत -	७२
महाभारत -	७३
महाभारत -	७४
महाभारत -	७५
महाभारत -	७६
महाभारत -	७७
महाभारत -	७८
महाभारत -	७९
महाभारत -	८०
महाभारत -	८१
महाभारत -	८२
महाभारत -	८३
महाभारत -	८४
महाभारत -	८५
महाभारत -	८६
महाभारत -	८७
महाभारत -	८८
महाभारत -	८९
महाभारत -	९०
महाभारत -	९१
महाभारत -	९२
महाभारत -	९३
महाभारत -	९४
महाभारत -	९५
महाभारत -	९६
महाभारत -	९७
महाभारत -	९८
महाभारत -	९९
महाभारत -	१००

बाल-विकास पर योग का प्रभाव : एक अनुशीलन

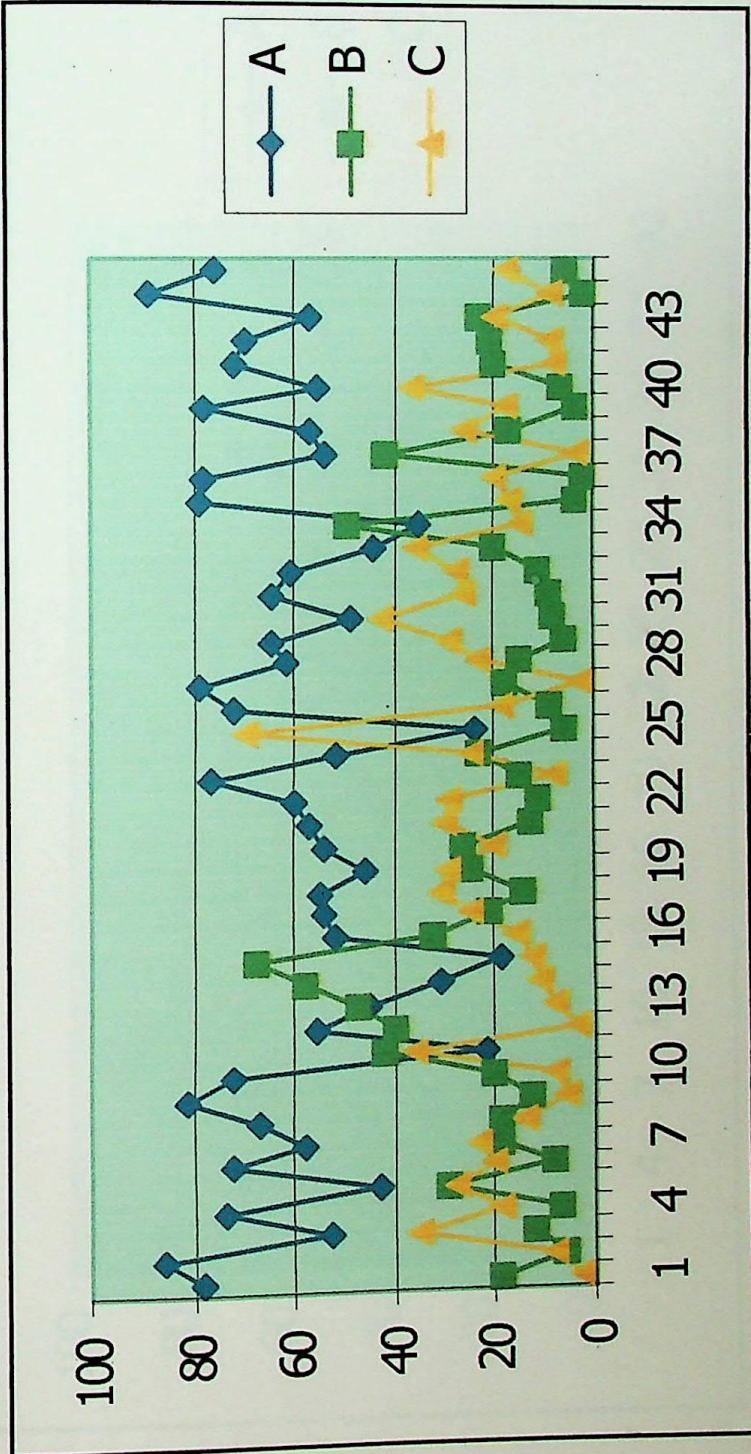
- | | | |
|-----|--------------------------------|-------------------------|
| 45. | प्राणायाम | - आचार्य श्री राम शर्मा |
| 46. | भावातीत ध्यान शैली | - महर्षि महेश योगी |
| 47. | चेतना | - महर्षि महेश योगी |
| 48. | बैंक और बाजार | - महर्षि महेश योगी |
| 49 | श्रीमद् भगवद् गीता | - महर्षि महेश योगी |
| 50 | महर्षि संदेश भाग - 1 | - महर्षि महेश योगी |
| 51. | महर्षि संदेश भाग - 2 | - महर्षि महेश योगी |
| 52. | सूक्ष्म विज्ञान का स्रोत - वेद | - महर्षि महेश योगी |
| 53. | विदेशों में भावातीत ध्यान | - महर्षि महेश योगी |

(ई) पत्र पत्रिकायें - कल्याण के अंक

- | | | |
|----|---------------------------|---|
| 1. | वेद कथांक | |
| 2. | उपनिषद अंक | |
| 3. | योङ्गाक | |
| 4. | बालक अंक | |
| 5. | आरोग्य अंक | |
| 6. | योग विद्या के विभिन्न अंक | - बिहार योग विद्यालय मुंगेर से प्रकाशित |

बच्चे जो योग करते हैं

6-10 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



A - सकारात्मक उत्तर (+ve)

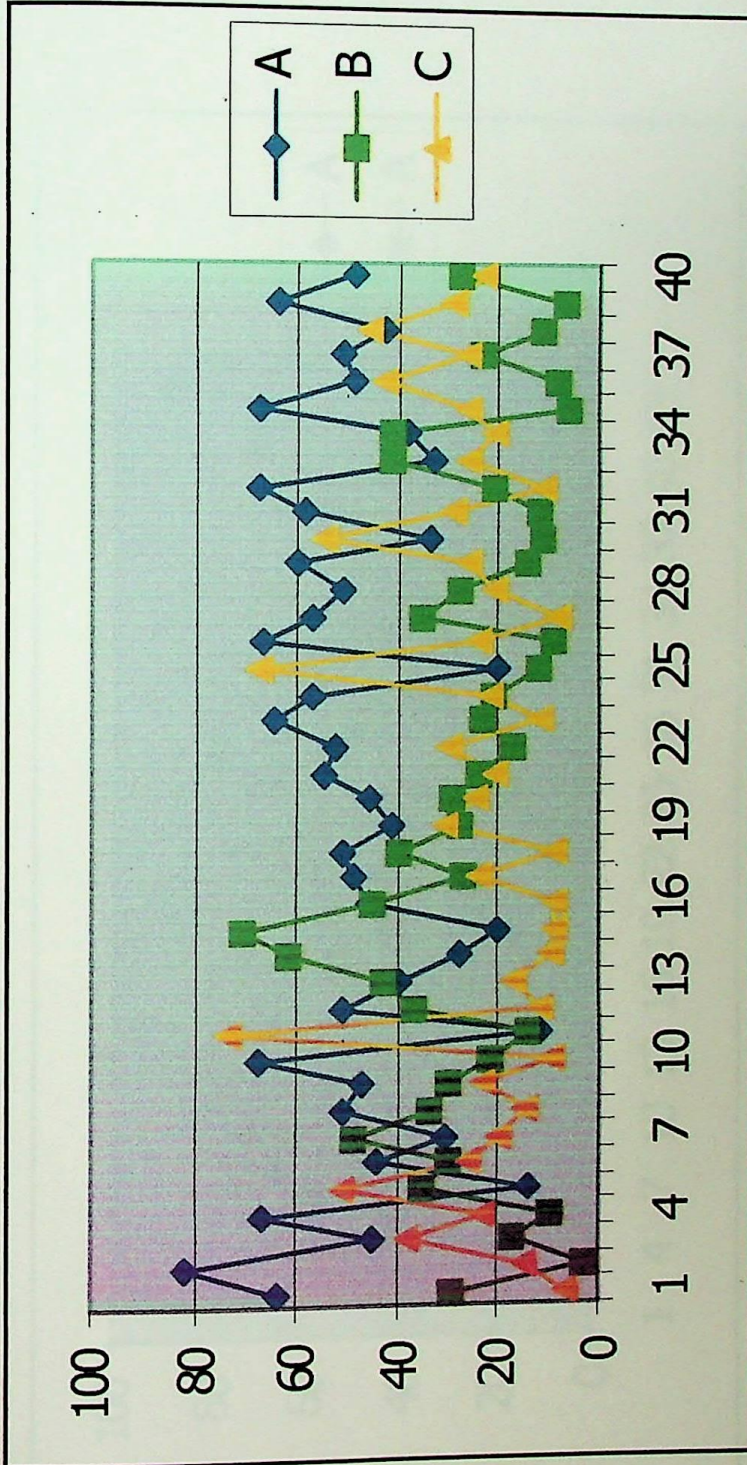
B - नकारात्मक उत्तर (-ve)

C - उदासीन उत्तर (न्युट्रल)

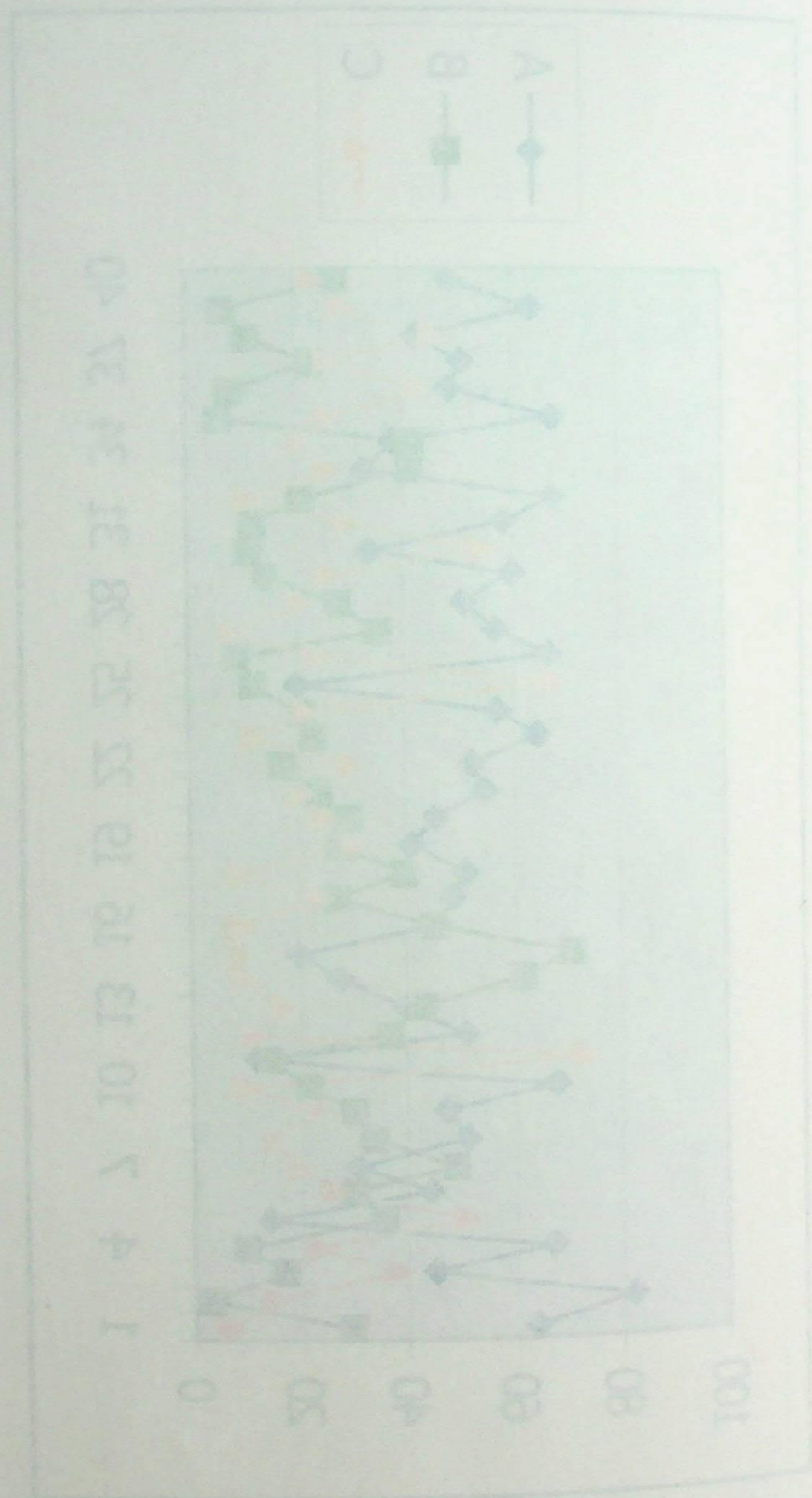


बच्चे जो योग नहीं करते हैं

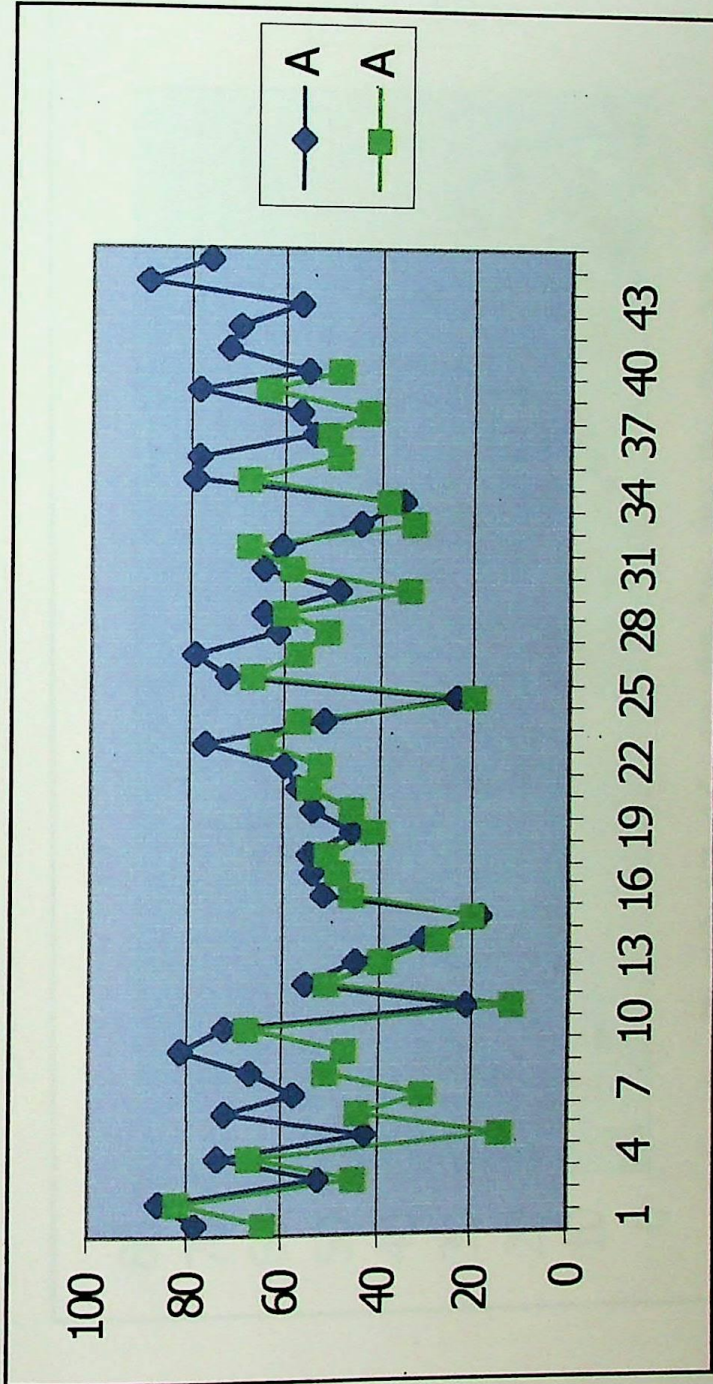
6-10 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



A - सकारात्मक उत्तर (+ve)
 B - नकारात्मक उत्तर (-ve)
 C - उदासीन उत्तर (न्यूट्रल)

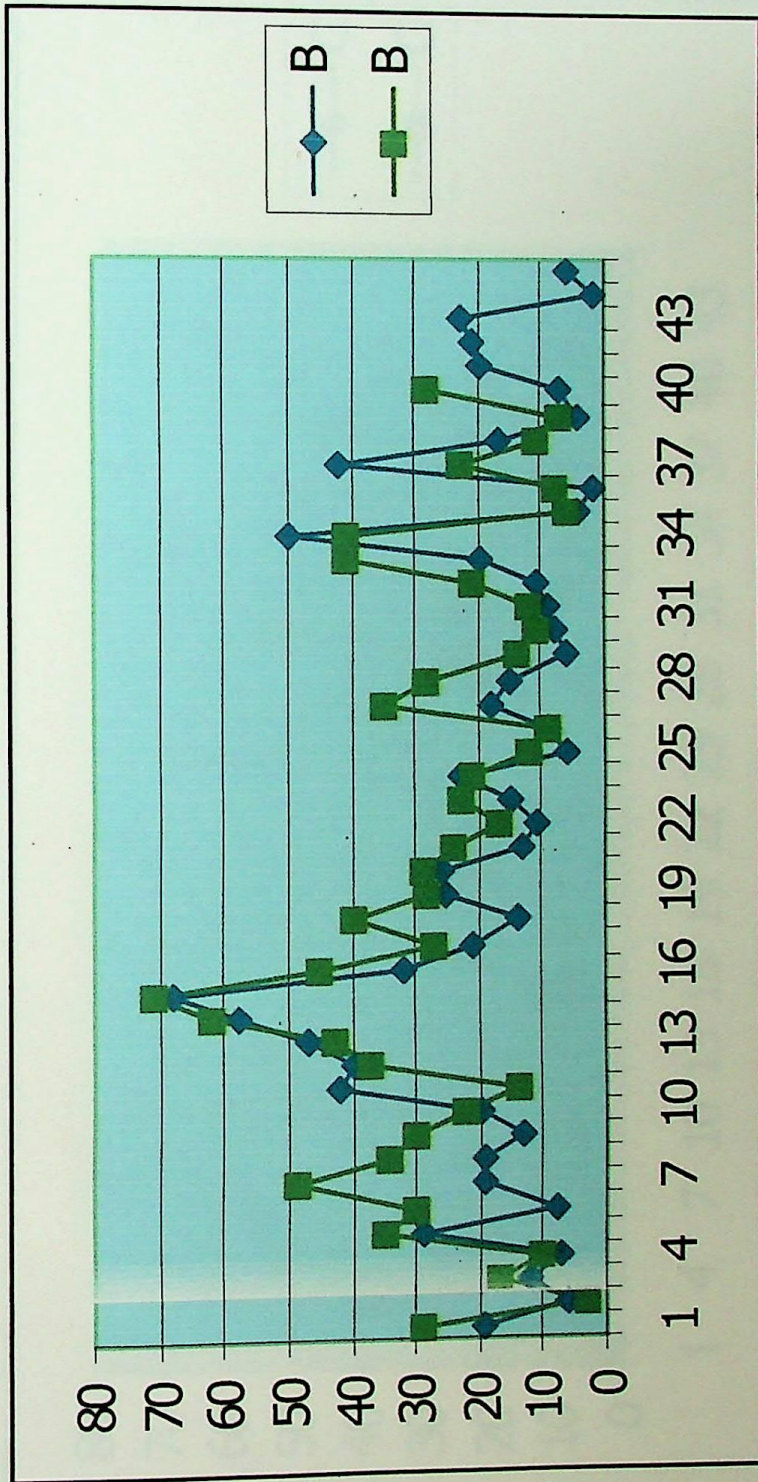


6-10 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



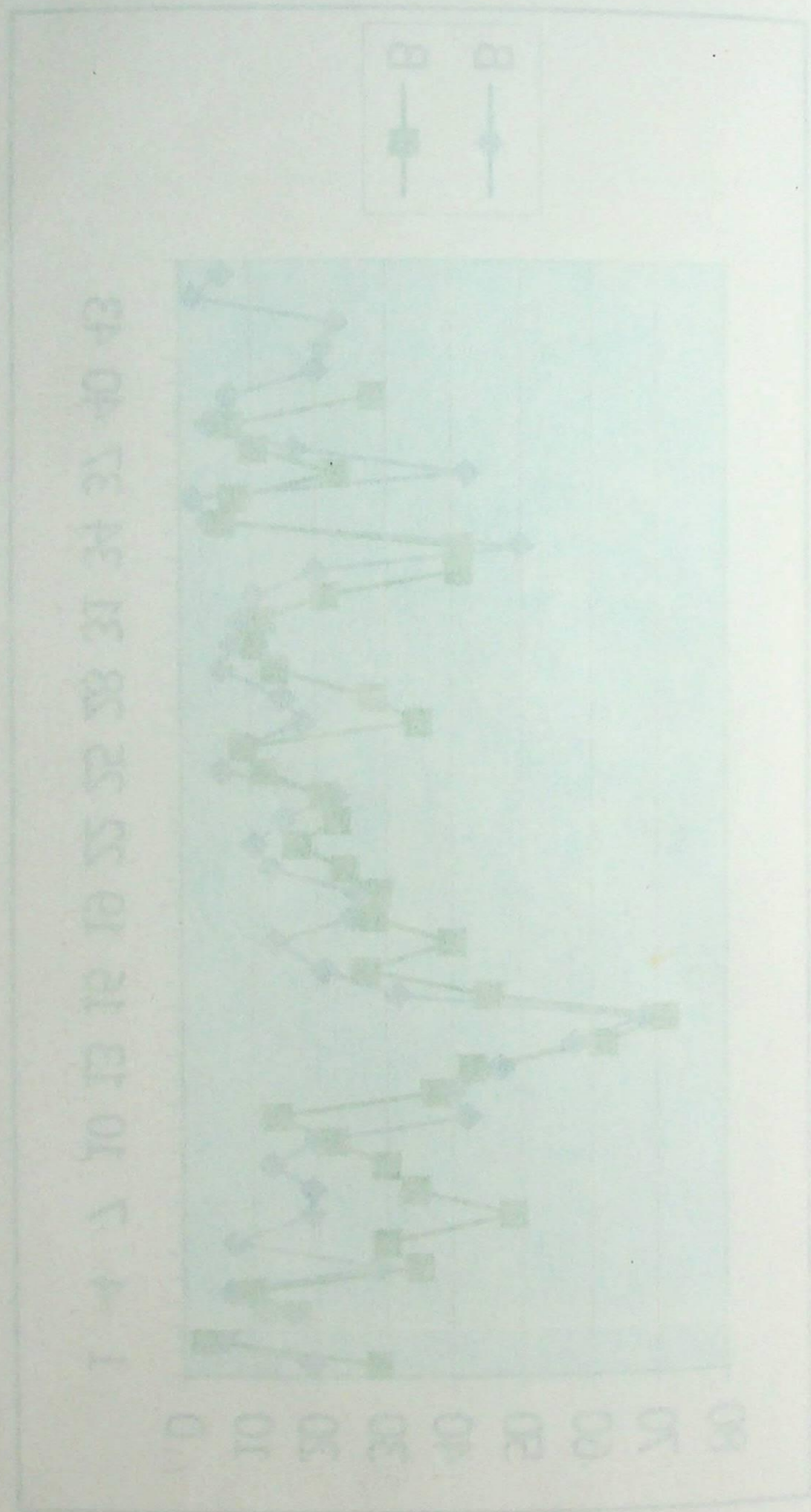
योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के सकारात्मक
उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

6-10 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ

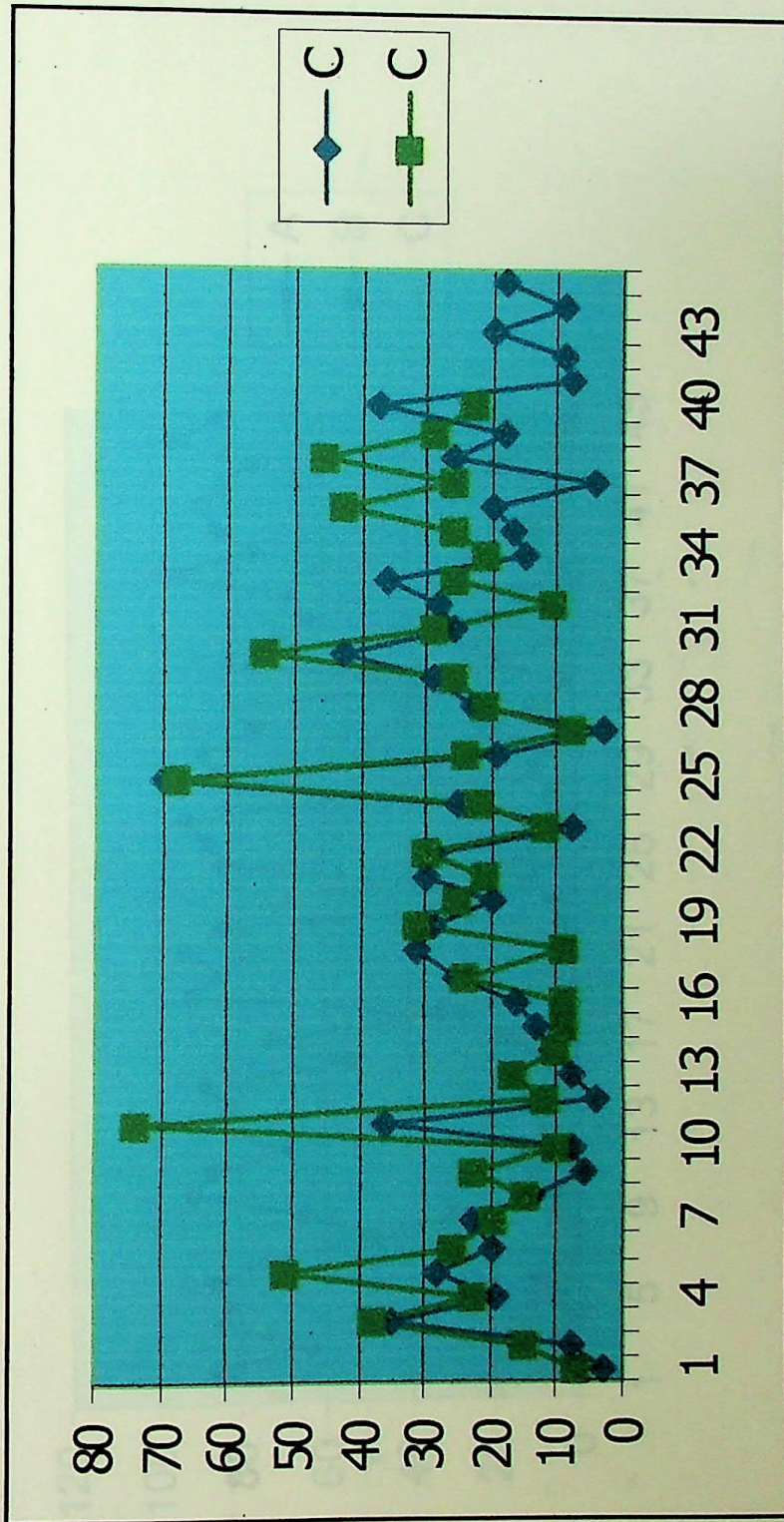


योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के
नकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

कृष्ण विष्णु ब्रह्मा न पृथिग् यन्ते विष्णु ब्रह्मा न पृथि
पृथिव्यं कर्माणि तन्मिदं विष्णु ब्रह्मा न पृथि

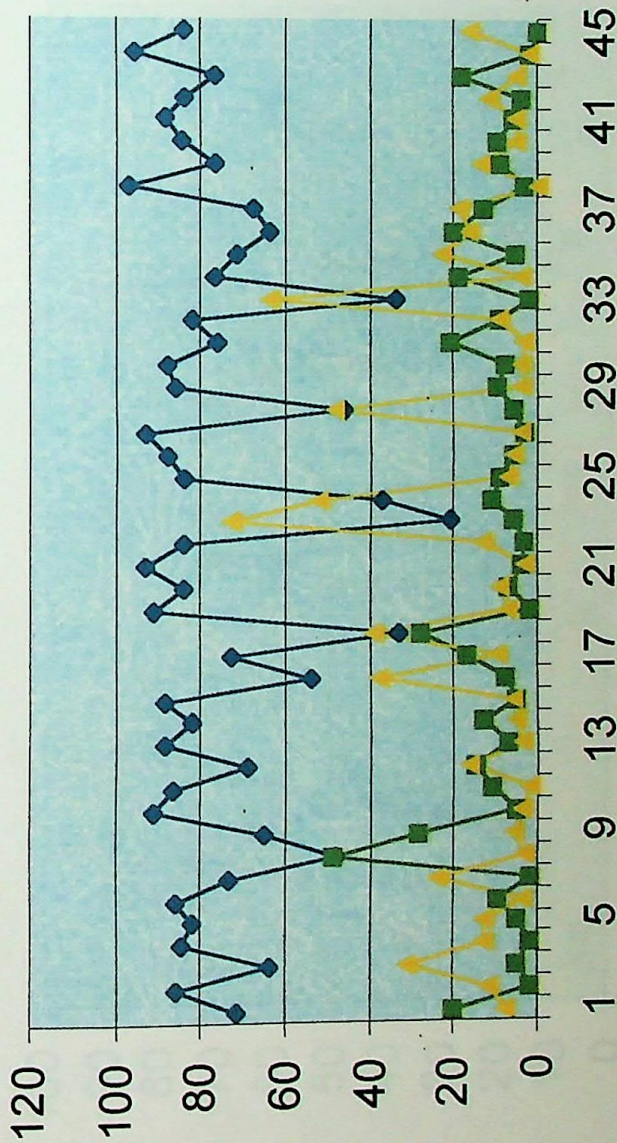


6-10 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



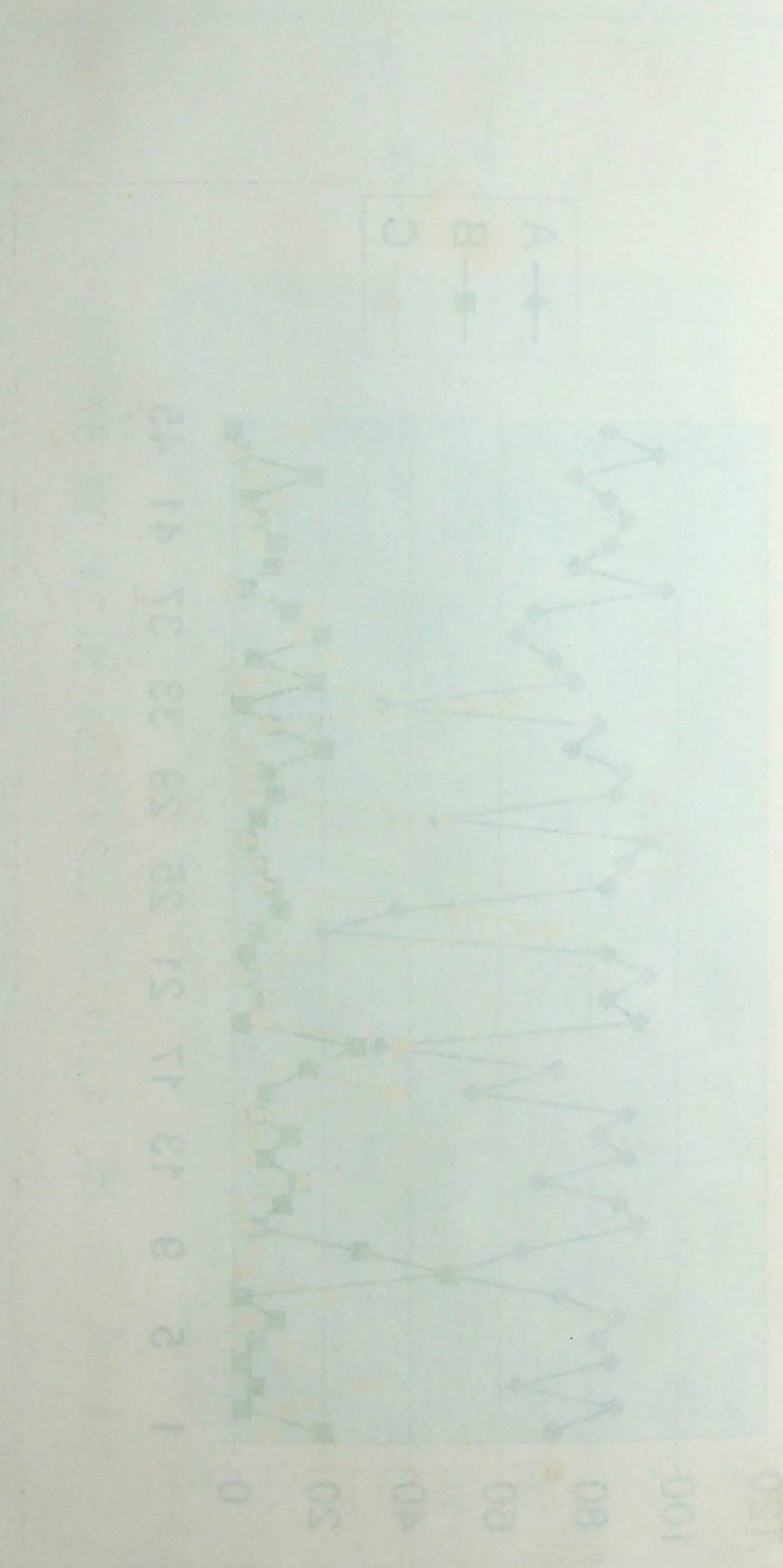
योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के
उदासीन उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

बच्चे जो योग करते हैं
11-16 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



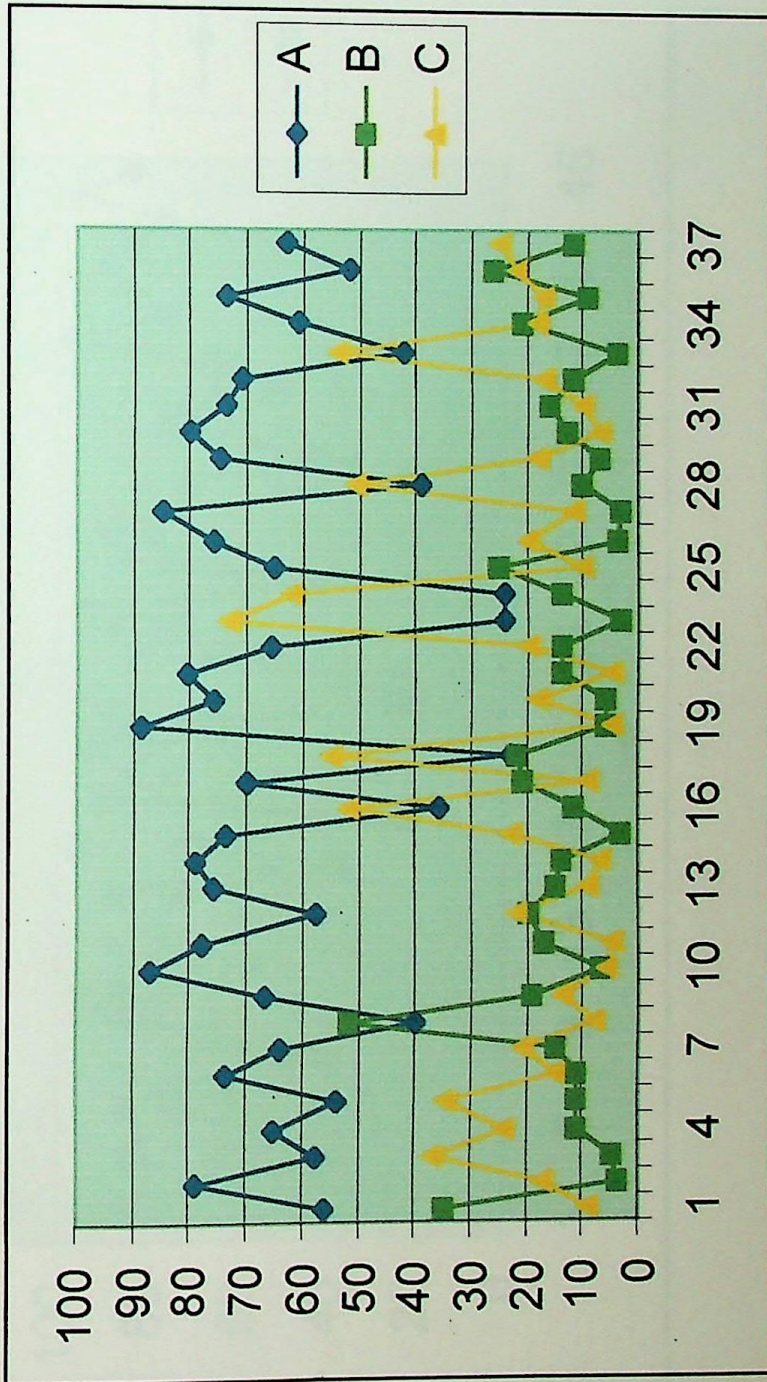
A - सकारात्मक उत्तर (+ve)
B - नकारात्मक उत्तर (-ve)
C - उदासीन उत्तर (न्यूट्रल)

B - 400/1000 (10)
V - 400/1000 (10)



बाच्ये जो योग नहीं करते हैं

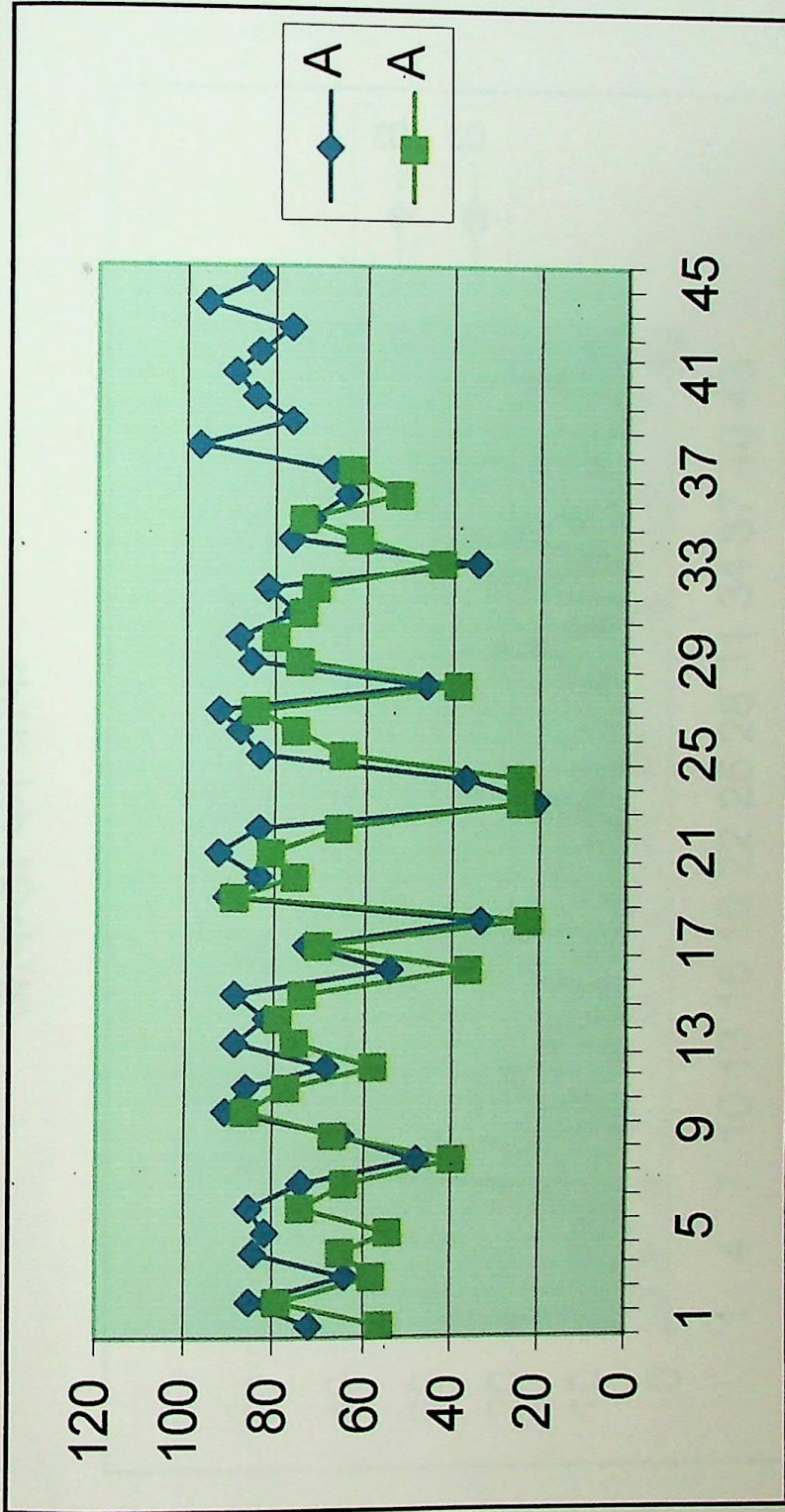
11-16 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



A - सकारात्मक उत्तर (+ve)
 B - नकारात्मक उत्तर (-ve)
 C - उवासीय उत्तर (ब्यूडल)

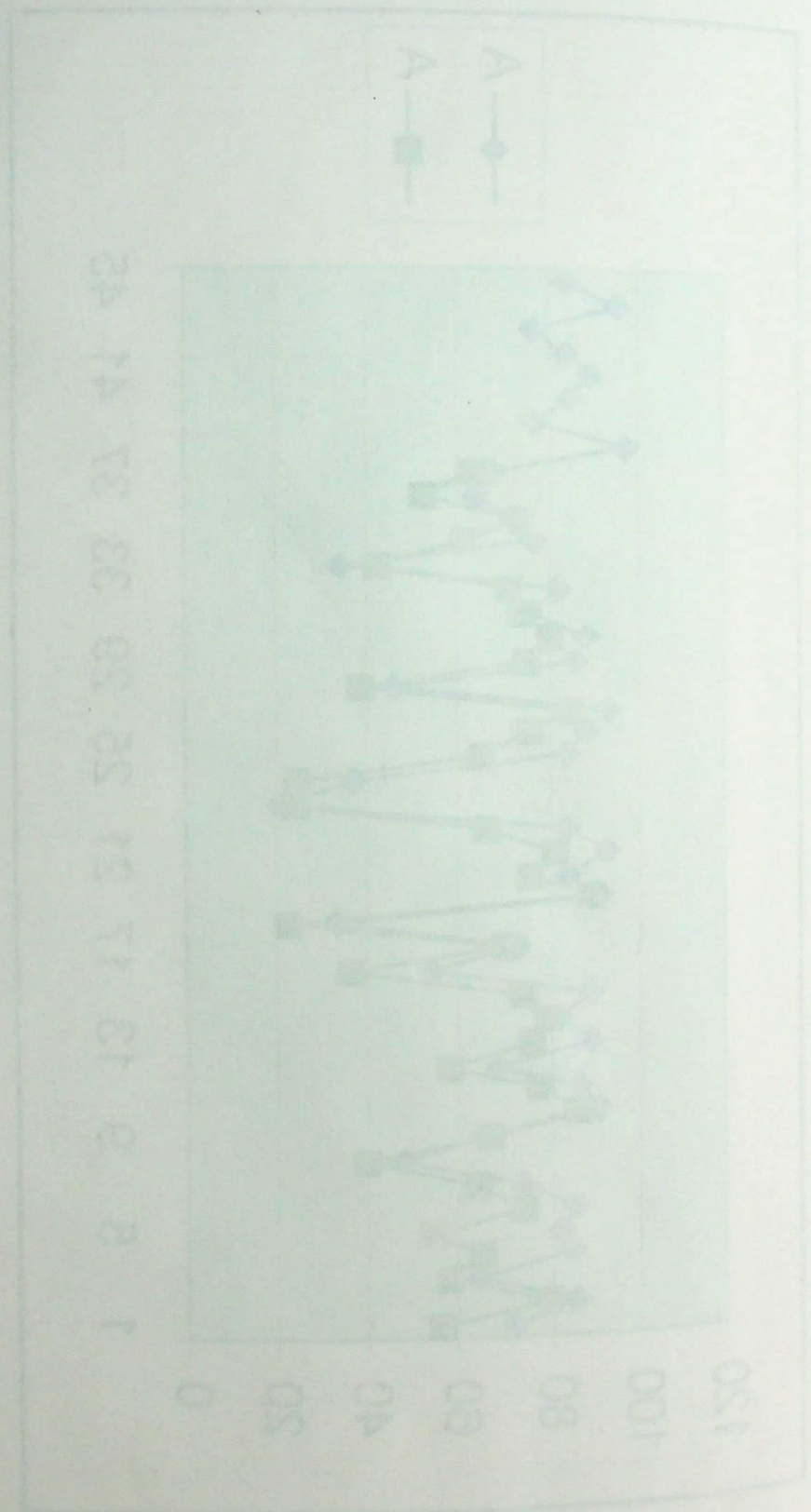


11-16 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ

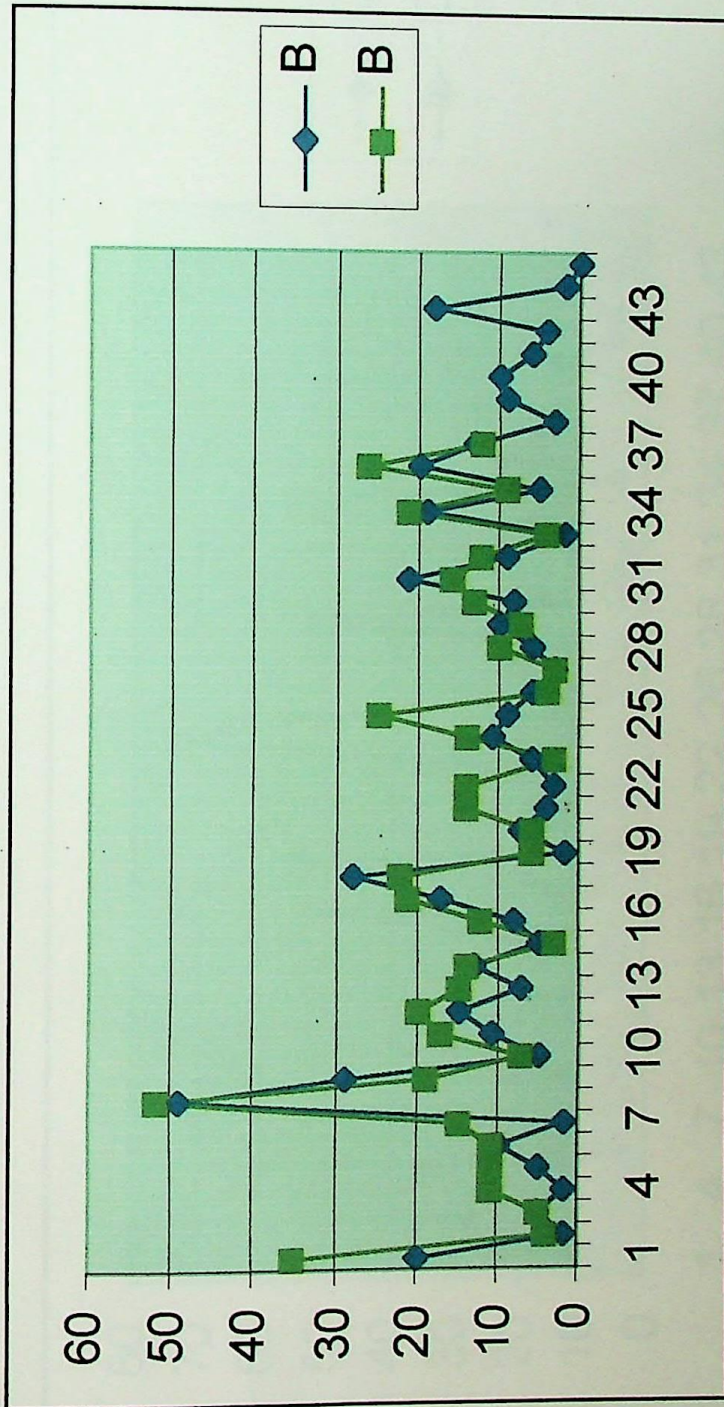


योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के सकारात्मक
उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

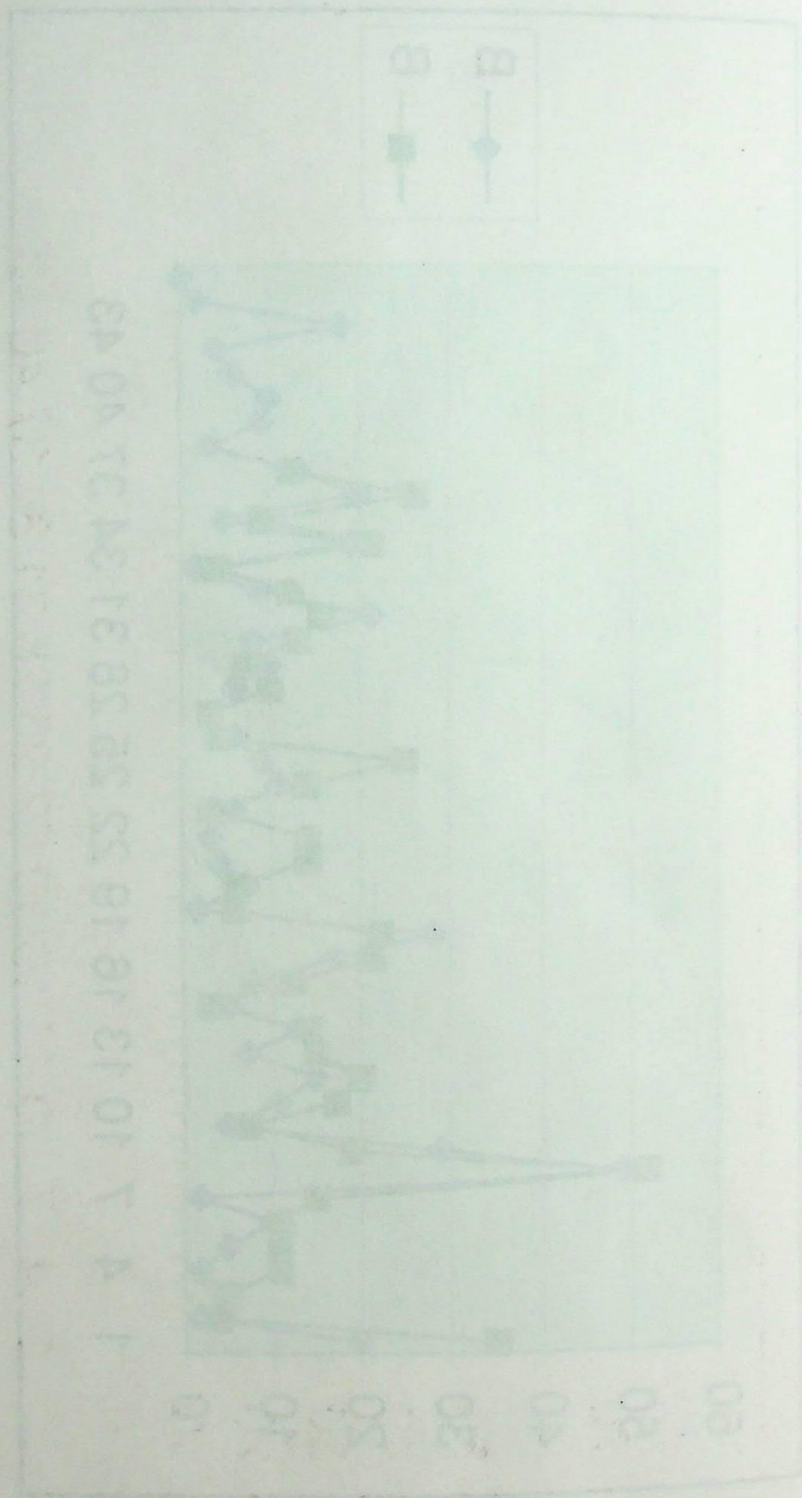
प्राचीन काल में भारत में विज्ञान का विकास



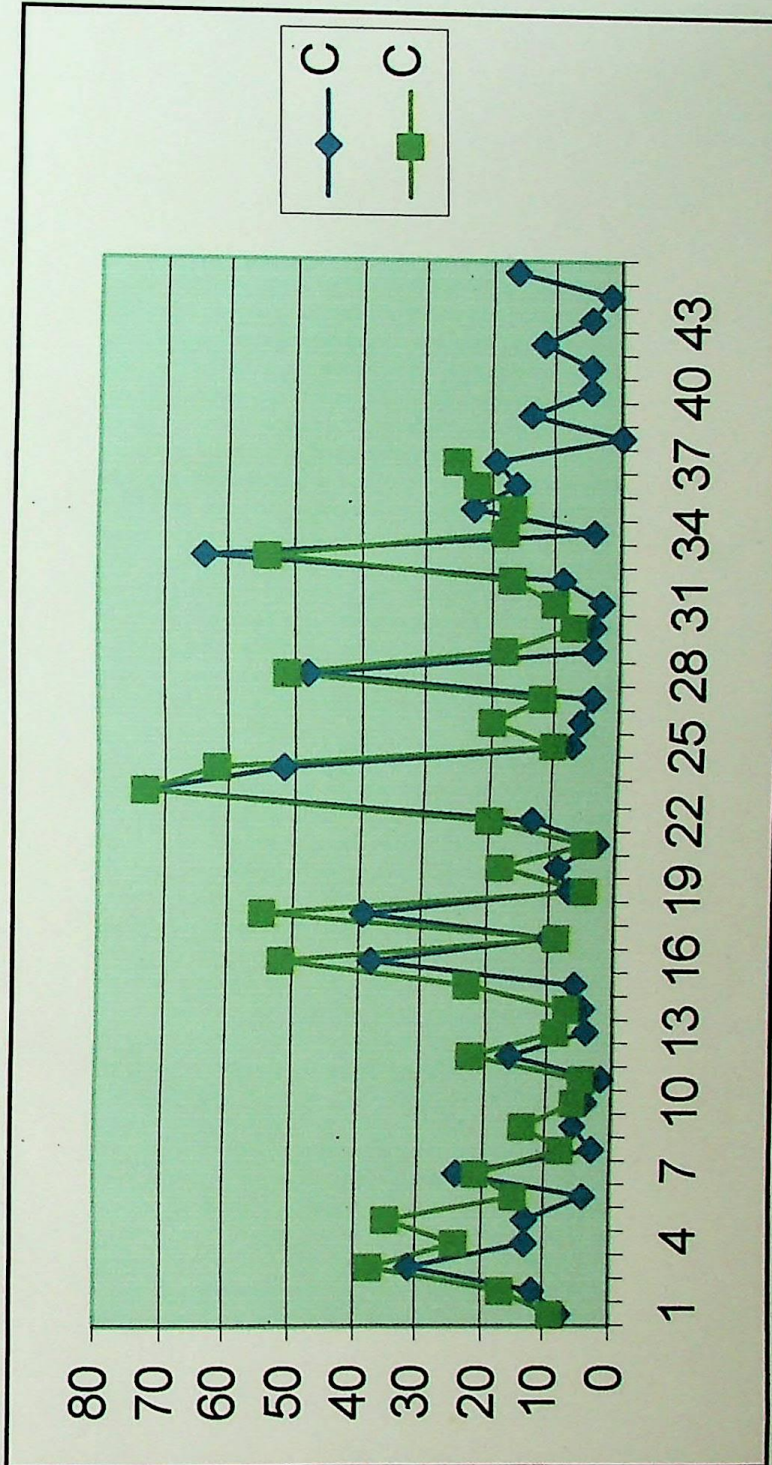
11-16 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के
नकारात्मक उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन



11-16 आयु वर्ग के बच्चों के आंकड़ों का ग्राफ



योग करने वाले और योग न करने वाले बच्चों के
उदासीन उत्तरों का तुलनात्मक अध्ययन

